उत्तराखण्ड में
खानपान की संस्कृति

लेखक
विजय जड़धारी

प्रकाशक
बीज बचाओ आंदोलन
नागणी, टिहरी, गढ़वाल
उत्तराखण्ड

उत्तराखण्ड में खानपान की संस्कृति

© विजय जड़धारी

प्रथम संस्करण सन् 2014
तदनुसार वसंत पंचमी विक्रमी संवत् 2070-2071
द्वितीय संस्करण हरेला पर्व 2015

लेखक
विजय जड़धारी
द्वारा-**बीज बचाओ आंदोलन**
डाकखाना-नागणी, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड-249 175
vijayjardhari@gmail.com
संपर्क - 9411777758

फोटो सहयोगः विपिन जड़धारी

मूल्य- ₹ 130

नोटः पुस्तक में प्रकाशित सामग्री का उपयोग पारंपरिक खानपान एवं पारंपरिक खेती के ज्ञान को आगे बढ़ाने के लिए कर सकते हैं, स्रोत का उल्लेख जरूरी है।

मुद्रकः सिस्टम्स विज़न, नई दिल्ली • systemsvision@gmail.com

लेखक की अन्य प्रकाशित पुस्तकें

- पहाड़ी खेती किसानों का पारंपरिक विज्ञान
- खेतीः अनमोल धरोहर
- बारहनाजा (समृद्धशाली पारंपरिक कृषि विज्ञान) 2007 में गांधी शांति प्रतिष्ठान द्वारा सम्मानित
- बीज एवं लोक ज्ञान (सहयोगी लेखकों के साथ)
- पारंपरिक बीज संरक्षण एवं जैविक पद्धतियां (सहभागी लेखकों के साथ)

विषय वस्तु

अपनी बात vii

समर्पण xiii

कुपोषण राष्ट्रीय शर्म 1
जहर और कुपोषण का कारोबार

सामूहिक एकता का भोज दाल-भात 7
झाल्या भात

कोदा/मंडुआ 11
मंडुआ की रोटी, मंडुआ व गेहूं की मिश्रित रोटी, ठग रोटी, मंडुआ व गेहूं की बेल्डी रोटी (भरवां रोटी), कोदा का बाड़ी, कोदा का हलवा, कोदा का पळयो, कोदा का लेटा, लड्डू, बोर्नवीटा–हार्लिक्स नहीं मंडुआ माल्ट, पौष्टिक पेय

झंगोरा 17
झंगोरा एवं उसकी खीर, छंचेरा/छछिंडा, चावल का छछिंडा, भुड़का/फ्राय झंगोरा, कौणी.....21, मंडुआ–झंगोरा के आधुनिक व्यंजन.....21, मंडुआ–झंगोरा के बिस्कुट और स्नैक्स, मंडुआ के बिस्कुट, झंगोरा के बिस्कुट बनाने की विधि, मल्टी ग्रेन बिस्कुट, झंगोरा के स्नैक्स, झंगोरा के पापड़, पापड़े, शादी और बारिश

मारसा/रामदाना 26
रामदाना की रोटी, कैसे भूनें रामदाना, मारसा/रामदाना के लड्डू, साबुत रामदाने का हलवा, भुने रामदाने का हलवा, आधुनिक खानपान में रामदाना, रामदाना की म्यूजली खायें– कैंसर दूर भगायें, इस तरह बनायें रामदाना की म्यूजली

चीणा (चीना) 31
मुंगरी (मक्की) और काखड़ी

पौष्टिक अनाज एवं गेहूं-चावल के पोषणमान की सारणी 33

चावल के पकवान 34
बकड़ा भात (सादे चावल), मीठा भात, पुलाव–खिचड़ी,
चावल की खीर, नमकीन खीर, चावल का तिलोठा, घैंड,
गिंजड़ी, चावल/भट्ट की गिंजड़ी, झंगोरा/भट्ट की गिंजड़ी,
गहथ (कुलथ) की गिंजड़ी, मुसैलु, चौल्वाणी
(चावल का साग), मांड का मजा, मांड औषधि भी है,
जच्चा बच्चा के लिए अमृत समान है मांड,
और चावल दवा भी है, मांड का साग मंडवाणी, एक्वांण्या

नमक की विविधता 46
मोरा नमक, हरा नमक...
छौंक-तड़का की महक 47
पहाड़ी मसाले 49
आलण 50

दालों की विविधता व उनके विविध व्यंजन 51
राजमा की दाल, तोर की दाल, उड़द दाल, 9 रंगी दाल, तुरसै
गहथ (कुलथ) 55
गथ्वाणी, गहथ का फाँणू, कच्चे गहथ की भरी रोटी/
भरे परांठे, पटुंगी स्वाद में मजेदार दवा में दमदार,
गहथ की पकोड़ी, कभी पथरी का रोग नहीं होगा,
पथरी ही नहीं, पत्थर भी तोड़ देता है गहथ
भट्ट 59
भट्ट का चुड़कानी, भट्वाणी, डुबका, भटुला,
दालों की पौष्टिकता की सारणी.....62, अंकुरित भट्ट का
सेहतमंद नाश्ता, भट्ट का जौला, चैसू/चैस्वाणी
परांठे और बेल्डी रोटी, नौरंगी के भरे परांठे 64
अन्य दालों के परांठे, बेल्डी रोटी (भरी रोटी), लगड़ी–मीठी.....66,
लगड़ी–नमकीन, साकिना का भरा परांठा.....66

साग-सब्जियां 68
हरा साग, कंडाली की कापिली, बुढ़णी की कापिली
और ढिणसा.....72, कद्दू की बेल (लुंगलों की कापिली),
मरसा (रामदाना) एवं ओगल का हरा साग,
लेंगड़ा की हरी सब्जी, बथुआ खाद्य एवं हरा साग,
मीठा करेला... डायबिटीज़ का दुश्मन,
प्याज टमाटर जरूरी नहीं!, सौत वरदान!

बिना खेती के फल, फूल एवं सब्जियां 78
जंगली सब्जियां, तिमला की सब्जी, बेडू की सब्जी.....87,
च्यौ/मशरूम.....87
देखने में छोटी स्वाद में बड़ी 88
नाल बड़ी, ककड़ी की बड़ी, भुजेला की बड़ी, दाल की बड़ी,
आलू की बड़ी, पिंडालू की बड़ी, कैसे बनाएं बड़ी की सब्जी,
पिंडालू के पापड़ की सब्जी और दवा भी.....91
बड़िल 91
आलू का थेच्वांणी, मूली का थेच्वांणी.....93, झोळी, मणझोळी

पत्यूड़ 95
पिंडालू के पत्यूड़, राई के पत्यूड़, गट्टे,
तल कर बनायें पत्यूड़, खुल्या के पकोड़े.....98,
कद्दू के फूलों के पकोड़े, गंडेरी का साग.....98
**भुड़के तोमड़ी आलू/आलू गुटका, पिंडालू/पिंडालू गुटका,
तल्ड गुटका** 100

चटणी 101
हरी पत्तियों की चटणी, भड़पकी चटणी, फलों की चटणी,
दलहन–तिलहन की चटणी, हरी चटणी,
भट्ट की चटणी/घुरयुंट, तिल की चटणी,
भंगजीर की खास चटणी, भांग की चटणी,
चुलू की चटणी, भड़पक्की चटणी, सुंट्या,
खटाई/चूक (गलगल) रळाना, काली खटाई,
रायता/रैलु 105

कुमाऊंनी रायता, गढ़वाल का रैठू, साकिना की कथेली,
कचनार/गुरियाल की कलियों का रायता,
मारसा (रामदाना) के हरे साग का रायता, बथुआ का रायता,
आलू का रायता, सूप और पेय.....108, गहथ का सूप,
अन्य दालों के सूप, पल्लर–दूनघाटी की पेय संस्कृति.....108,
पल्लर के फायदे, छांछ के टुकड़े... गट्यांक छा,
कफल्वाणी एक अद्भुत पेय, न सब्जी न दाल सिर्फ
कफल्वाणी, काफल दवा भी, **चाय नहीं... हर्बल चाय,**
घर की कॉफी/गेहूं की कॉफी 113
रैमोड़ी दुनिया का अद्भुत सलाद 114

कलेऊ, पैणा और उत्सव के व्यंजन 116
पकोड़ाः– एक सर्वश्रेष्ठ व्यंजन, स्वांला, मीठा स्वांला,
मरस्वांला, बेल्डा स्वांला/भरे स्वांले,
अरसा 119
आइए जानें, कैसे बनता है अरसा, गुलगुले, रोटाना,
असक्याः– जौनपुर का पकवान, बाबर भी खाइए,
कुमांऊनी लाडू, घेंजा, मीठा घेंजा, नमकीन घेंजा,
भरी दाल का घेंजा, पापड़ी, इन्ड्रा, घ्वेल्डा/हिरन का
पकवान, आटे का परसाद/गुड़झोळी, गेंवातू, जवातू,
घोल्या, ग्वेरच्छ्या, घुघत/घुघति का पकवान, गुड़लम्मा,
ल्हांगडु, ढुंगला, प्राकृतिक दूध का स्वाद.....131,
प्राकृतिक शहद.....132

पाथेय... 133
बुखणा/खाजा, चावल के बुखणा, चावल के मीठे बुखणा,
च्यूड़ा, चीणा के बुखणे/चिन्याल, भूंजे भट्ट का खाजा,
भूंजे गेहूं, सत्तू झट–पट खाना, सात खाद्यान्न एवं दलहनों
का सत है सत्तू, गेहूं की उम्मी, चने का होला,
पहाड़ी फल .....141, बाल मिठाई और सिंगोड़ी,

बीज बचाओ आंदोलन 142

अपनी बात

उत्तराखण्ड में स्वादिष्ट व विविधता युक्त खानपान की समृद्ध संस्कृति रही है। यहां के खेतों, साग–सग्वाड़ों, कृषि वानिकी एवं जंगलों से उत्पन्न खाद्यान्न, फल, फूल दलहन एवं साग–भाजी से जोरदार स्वाद एवं पौष्टिकता की रसधारा बहती है। यह खाद्यान्न हमें खाने की तृप्ति के साथ–साथ सुख शान्ति और आरोग्य भी प्रदान करता है। खाने का स्वाद चटपटे मिर्च मसालों एवं ज्यादा तेल घी में नहीं है। बनावटी स्वाद तो सेहत के लिए नुकसानदेह भी होता है किंतु यहां स्वाद की जड़ें प्राकृतिक बीज, मिट्टी, पानी, हवा एवं विविधता से जुड़ी हैं। यह स्वाद पौष्टिकता से भरपूर है। बीज प्राकृतिक है, मिट्टी में रासायनिक खाद का जहर अभी थोड़ा–थोड़ा घाटियों की सिंचित खेती तक सीमित है। असिंचित व पारंपरिक खेती शत–प्रतिशत जैविक है और पानी को आप सिर्फ पानी के रंग में न देखें। यहां के बांज–बुरांस के जंगलों से सेल्वाणी, नौले व धारों के जल का स्वाद भी जोरदार होता है। पहाड़ के अनुभवी व्यक्ति अपने जल स्रोत के पानी का स्वाद पहचान सकते हैं। निस्संदेह यहां का पानी प्राकृतिक व वास्तविक 'मिनरल वाटर' है। इस पानी से जो खाना पकेगा उसका भी अपना जायका है और हां, लकड़ी का ईंधन या चूल्हा भी स्वाद से जुड़ा है। यहां के बांज–बुरांस के जंगलों से बहने वाली शुद्ध हवा में कुदरती फास्फोमिन भी मुफ्त में मिलता है।

पहाड़ की महिलायें पाकशास्त्र में भले ही फूड टैक्नोलॉजी की डिग्रीधारी विशेषज्ञ न हों, किंतु पकाने की विविधता युक्त कलाओं में उनका कोई सानी नहीं है। एक ही खाद्यान्न के दर्जनों व्यंजन कैसे बनते हैं, इस कला और विज्ञान का उन्हें अनोखा ज्ञान है। एक ही चावल का भात और साग दोनों बनाती हैं तो दर्जनों अन्य व्यंजन भी। गहथ के ही कितने व्यंजन बना लेती हैं। मैंने पहाड़ के खानपान का चितंन किया तो हतप्रभ रह गया और जब भारत के अन्य राज्यों एवं दुनिया के कुछ अन्य व्यंजनों को भी देखा तो इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि उत्तराखण्ड की खानपान की विविधता बहुत बड़ी धरोहर है, इसे लिखा जाना चाहिए। इससे पूर्व सुप्रसिद्ध लोकगायक नरेंन्द्रसिंह नेगी की धर्म पत्नी श्रीमती ऊषा नेगी ने भी पहाड़ के व्यंजनों पर पुस्तिका लिखी थी। मैं खानपान के व्यंजनों को रैसिपी माप–तोल जैसा प्रस्तुत नहीं कर पा

रहा हूं, किंतु मैंने भरपूर कोशिश की है कि खानपान की पारंपरिक संस्कृति का छोटा सा हिस्सा उजागर कर लोगों की खानपान की जीवन शैली प्रस्तुत कर सकूं। शेष काम हम सबको पूरा करना है।

सुप्रसिद्ध लोकगायक व संस्कृति के संरक्षक नरेन्द्रसिंह नेगी ने गढ़वाल को वीर भड़ों का गढ़देश कहते हुए जोरदार गीत गाया है। भड़ शब्द कहीं हिन्दी के शब्दकोष में नहीं मिलेगा। गढ़वाल के लोग भड़ों को अपना पुरखा (पूर्वज) मानते हैं। भड़ अत्यंत बलशाली होते थे। भड़ों की बलशाली ताकत के प्रमाण आज भी 52 गढ़ों के भग्नावशेषों में बड़े–बड़े पत्थरों की चिनाई से बने चौतरों व गढ़ों में देखे जा सकते हैं। इतने बड़े पत्थरों को आज क्रेन उठाती है लेकिन तब यह कार्य बलशाली भड़ों व सामान्य लोगों ने किया। यहां के खानपान की विविधता ने ही लोगों को यह शक्ति दी थी।

'चिपको आंदोलन' के सुप्रसिद्ध लोक कवि घनश्याम शैलानी ने बीज बचाओ आंदोलन को भी दिशा देते हुए **गढ़वाल का गौरव** शीर्षक से एक कविता लिखी थी–

हरचि कख गढ़वाल कु कोदु कंड़ाली,
गोल गफ्फा बण्या रंदा थां जैन गढ़वाली।
मोल थां बमोर पक्यां, डाला झकझोर झुक्यां,
कना दिन थां तबारि, कुछ भी निथै दुख बीमारी।
काफल किनगोड़ खायी, लोंण रालि-रालि, ...
कोदा का परताप यख, भड़ रै गढ़वाली।

अर्थात पहाड़ का कोदा (मडुंआ), झंगोरा (सांवा) व कंडाली का साग और जंगल की विविधता कहां लुप्त हो गयी है, जिसे खा कर पहाड़ के लोग स्वस्थ रहते थे। तब बीमारियां कुछ नहीं थीं। **निस्संदेह लोग संतुलित आहार शब्द भले ही नहीं जानते थे, किंतु भोजन का संतुलन उनके खानपान में पर्याप्त मात्रा में होता था। सीज़न के अनुसार यदि उनके खानपान की सूची बनायें तो सैकड़ों तरह की चीजें वे खाते थे। आज भी कहीं-कहीं खाई जाती हैं। गढ़वाल के मशहूर लोक गायक प्रीतम भरत्वाण ने मायके की खुद में लिखा है *'घुट-घुट बाडुली लगि छ मैं मैत की खुद लगीं छ, कोदा, झंगोरा की सारि काखड़ी मुंगरी कब औलू कब खौलु'*** (मायके आने और नई–नई चीजें खाने के लिए बेटियां लालायित रहती हैं) हमारे खानपान में मंडुआ–झंगोरा खूब था किंतु हम बाहरी दुनिया से इसे छिपा कर रखते थे। हम इन अनाजों को प्रतिष्ठा नहीं देते थे। ढाई दशक पूर्व जब हमने

'बीज बचाओ आंदोलन' के सभा– सम्मेलनों में सार्वजनिक तौर पर यह भोजन परोसा तो हमारी खूब आलोचना हुई। वैज्ञानिकों एवं राजनीतिज्ञों ने कहा कि हम लोगों को 18वीं सदी की तरफ ले जाना चाहते हैं। किंतु हमें प्रसनता है कि उत्तराखण्ड के लोग अब मंडुआ–झंगोरा की पौष्टिकता पर गर्व करने लगे हैं। लोगों को खींच लायेगा– हेंवलवाणी और बीज बचाओ आंदोलन से जुड़े युवा रचनाकार **रवि गुसांई ने ठीक ही लिखा है *"कनु भलु लगदु भाईयों बारहनाजा कु स्वाद"*** (बारहनाजा का स्वाद कितना अच्छा लगता है।)

हमारे समाज एवं नीति–निर्धारकों का ध्यान इस ओर इतना नहीं है जितना होना चाहिए। दक्षिण भारत का इडली, दोसा व सांभर और बड़ा सिर्फ दक्षिण में नहीं अपितु सब जगह बड़े शौक से खाया जाता है। यहां देवभूमि हिमालय में तीर्थ यात्रियों एवं पर्यटकों की इतनी भरमार है, फिर भी होटलों व ढ़ाबों में मैगी, चाउमिन, पिज्जा, बर्गर व पास्ता की किल्डाणं का स्वाद लेने के लिए लोग छिंकते–छिंकते भी अपना स्वास्थ्य खराब करने में पीछे नहीं हैं। जब कि **यदि पर्यटन विभाग व अन्य होटल व्यवसायी यहां के खानपान की रैसिपी तैयार करें तो यहां के विविधता युक्त दर्जनों व्यंजनों का डंका पूरी दुनिया में बजने लगेगा, यहां के व्यंजनों का स्वाद व पोषण बरबस लोगों को खींच लायेगा।** उत्तराखण्ड में सुप्रसिद्ध चारधाम बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री व यमनोत्री व अन्य मन्दिरों में बाहरी परसाद चढ़ाने के बजाय स्थानीय अनाज रामदान, ओगल (कूट्टु), लाल चावल व अन्य अनाजों व अखरोट, सेब व चूल्हनू से बने परसाद को मान्यता दी जानी चाहिए। इससे स्थानीय खानपान को तो प्रतिष्ठा मिलेगी ही साथ ही किसानों और व्यवसायियों की अतिरिक्त आय भी होगी, वे पारंपरिक विविधता युक्त खेती की तरफ वापिस लौटेंगे। युवाओं और बेरोजगारों के लिए निस्संदेह इससे रोजगार के दरवाजे खुलेंगे और तीर्थाटन एवं ईको टूरिज्म को सही दिशा मिलेगी। उत्तराखण्ड के खानपान की नई पहचान बनेगी।

पुस्तक के प्रथम प्रकाशन के लिए मैं राजीव खेडकर, सोबती-सुधागड़ जिला-रायगढ़, महाराष्ट्र का अभारी हूं। पुस्तक के दूसरे संस्करण के वक्त मैं माननीय मुख्यमंत्री श्री हरीश रावत जी का हृदय से आभारी हूं कि उन्होंने पहाड़ी खेती की पोषणकारी फसलें मंडुआ, झंगोरा, गहथ व भट्ट आदि को विशेष महत्व देते हुए उनसे बनने वाले खानपान/व्यंजनों को राष्ट्रीय कार्यक्रमों में होटलों एवं रेस्तरां में शामिलकर विशेष समारोह आयोजित कर ऐतिहासिक कार्य किया है। पर्यटन, संस्कृति, धार्मिक मेले एवं युवा कल्याण मंत्री माननीय श्री दिनेश धनै जी का विशेष आभार जिन्होंने मारसा (चौलाई), ओगल (कुट्टु)

आदि स्थानीय फसलों के परसाद को चारधामों व अन्य मन्दिरों के लिए मान्यता दी है, और पहाड़ की जैविक खेती और खानपान के पारंपरिक व्यंजनों के संरक्षण व संवर्धन हेतु 'उत्तराखण्ड में खानपान की संस्कृति' व 'बारहनाजा' पुस्तक के प्रचार–प्रसार की सार्थक पहल शुरू की है। स्व. साथी कुंवर प्रसून व घनश्याम शैलानी जी का विनम्र श्रद्धाजलि। चिपको आंदोलन के नेता सुंदर लाल बहुगुणा जी की प्रेरणा भी मुझे बरबस मिलती है। मेरे प्रेरणा स्रोत धूमसिंह नेगी जी जो हमारे गुरु व आधार स्तम्भ हैं, का भी इसमें भरपूर सहयोग है। साथी बिजू नेगी के पहाड़ी खानपान के शौक से भी हमने बहुत कुछ सीखा है। रघुभाई जड़धारी, साहब सिंह सजवाण, श्रीमती बीना सजवाण, कुंवार सिंह सजवाण का भी आभारी हूं। राजेन्द्र नेगी एवं सामुदायिक रेडियो हेंवलवाणी जो लोगों की वाणी है, उनसे अपेक्षा/आशा है, इस ज्ञान पर चर्चा चलाते रहेंगे। डॉ. संजीव नेगी व डॉ. मणिकांत शाह का भी आभार। मेरी सह–धर्मिणी कमला का इसमें बहुत बड़ा योगदान है, श्रीमती सुदेशा बहिन भी हमारी आदर्श हैं। उत्तराखण्ड जैविक उत्पाद परिषद के संस्थापक डा. आर. एस. टोलिया एवं उसकी प्रमुख कार्यकारी अधिकारी श्रीमती विनीता शाह का भी मैं बहुत आभारी हूं, वे जैविक खेती एवं जैविक खानपान को आगे बढ़ाने का महत्वपूर्ण कार्य सरकारी स्तर पर कर रहे हैं। परिषद जैविक खेती के साथ–साथ जैविक खानपान को आगे बढ़ाने का महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है। माउंट वैली डेवलपमेंट एसोसियेशन दोणी (टिहरी गढ़वाल) सामुदायिक चेतना केंद्र भीड़ापानी (नैनीताल) एवं अर्पण, अस्कोट का भी आभार। मैं नाहींकला के अपने मित्र भूपाल सिंह, दिल्ली से अजय महाजन व जया अय्यर का भी आभारी हूं जो पहाड़ के खानपान की विविधता को दिल्ली में विभिन्न मेलों में प्रतिष्ठित कराने में लगे हैं। फोटोग्राफी में मेरे पुत्र विपिन एवं इस कार्य को आगे बढाने में मेरी बेटियों एवं बहू का भी पूरा सहयोग मिला। महिला मंगल दल जड़धार गांव की पूर्व अध्यक्ष श्रीमती बचनी देवी एवं पूर्व प्रधान विन्दु देवी का भी आभारी हूं।

इस पुस्तक में मैंने मांसाहार को स्थान नहीं दिया है जबकि पहाड़ के अधिकांश लोग मांसाहारी हैं। किंतु मांसाहार से हिंसा तो होती ही है, साथ ही मांसाहारी दुनिया में भुखमरी भी बढ़ा रहे हैं। अमेरिका का एक मांसाहारी 15 लोगों के बदले का खाना खा जाता है। **पहले सूअर और गाय आदि को अनाज खिलाकर पालते हैं फिर उसे खा जाते हैं। मांसाहार और शराब देव भूमि पर कलंक हैं**। मांसाहार के साथ शराब जुड़ी है, और शराब पहाड़ी समाज को तबाह कर रही है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने प्राकृतिक अहिंसक

खेती व खानपान की तरफ उस जमाने में भी राष्ट्र का ध्यान दिलाया था। कहा जाता है **'जैसा खाओगे अन्न, वैसा होगा मन'**। उत्तराखण्ड के सात्विक खानपान की विविधता के सैकड़ों व्यंजन आज भी प्रचलन में हैं जिन्हें खाकर लोग सिर्फ भूख ही नहीं मिटाते हैं, अपितु, बीमारियां भी दूर भगाते हैं। कुछ खानपान लुप्त होने के कगार पर हैं जिन्हें बचाने की नितांत जरूरत है। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि उत्तराखण्ड में खानपान की संस्कृति पढ़ कर आप अपने बहुमूल्य सुझावों से मुझे अवश्य अवगत करायेंगे। मैं भोटिया, पंजाबी, मुस्लिम, थारु, जौनसारी व बुक्सा आदि समुदायों के खानपान को शामिल नहीं कर पाया, जिसका मुझे खेद है।

— ***विजय जड़धारी***

नवांण– सेहत का टीका

नया अन्न, फल एवं साग सब्जी आदि खाने या चखने को 'नवांण' कहा जाता है। पूरा खाना न मिले, लेकिन फसल में खानपान चखने को जरूर मिलना चाहिए। सबसे पहले नवांण का परसाद धरती मां व अन्य देवताओं को चढ़ाया जाता है। उसके बाद नया अन्न मिल बैठकर खाते हैं। पड़ोसी को भी नवांण का 'पैणा' बांटा जाता है। नवांण का मतलब है हरेक सीजन के खानपान से रिचार्ज या सीजन का टीकाकरण, यह नवांण हमें कई बीमारियों एवं कुपोषण से बचाता है।

काफल पाको... मैं नि चाखो...

नवांण खानपान की पौराणिक संस्कृति की याद दिलाता है। गढ़वाल की एक मशहूर लोक कथा है– एक मां ने जंगल से काफल लाकर टोकरी में भरे और दोपहर को खेत में काम पर निकल गयी। घर में छोटी बेटी को बता कर गई कि काफल को मत छेड़ना। लड़की की टक काफल पर लगी रही पर मां के डर से वह एक दाना काफल भी नहीं चख पाई। दोपहर बाद जब मां घर लौटी तो उसे शक हुआ काफल कम है। उसने सोचा लड़की ने काफल खाये हैं, क्रोध में उसने लड़की की पिटाई कर दी। नाजुक अंग में चोट लगने के कारण लड़की की अकाल मौत हो गयी, पूरे परिवार में मातम छा गया। शाम होते–होते सबने देखा कि रस भरे काफलों से टोकरी पहले की तरह लबालब भरी है। मां को अब और पछतावा हुआ, वह सदमे में चिल्लाने लगी पुर–पुतई पुरै–पुरै अर्थात मेरी बेटी काफल तो पूरे के पूरे है लेकिन तू चली गई। और मां की भी सदमे में मौत हो गयी। दरअसल तेज गर्मी से दिन को काफल सिकुड़ कर कम दिखायी दिये, और शाम को पूरे। बेटी ने तो डर के मारे नवांण भी नहीं किया था।

कुछ दिनों बाद उस गांव और काफल के जंगल में एक पक्षी की करुणा भरी आवाज गूंजने लगी, **काफल पाको, मैं नि चाखो** (काफल पके मैंने नहीं चखे)। कहते हैं यह करुणा भरी आवाज उस मृत लड़की की थी। उसकी मृतआत्मा पक्षी में आ गई, लेकिन पीछे से मृत मां की आत्मा भी दूसरे पक्षी में आ गई दूसरा पक्षी बोलने लगा पुर–पुतई पुरै–पुरै... आज भी बंसत के कुछ दिनों बाद पक्षी की यह आवाज सुनाई देती है– काफल पाको... मैं नि चाखो... काफल..., और पीछे से– पुर–पुतई पुरै–पुरै...।

समर्पण

धरती मां, जिसने संपूर्ण जीवधारियों के लिए जन्म से पहले ही, अपने आंचल में हजारों तरह के जैव विविधता से भरपूर कंदमूल, फल, फूल एवं फसलें लहलहा कर सबके पेट की भूख शांत करने का अद्‌भुत प्रबंध किया है, उस धरती मां एवं जीवित मिट्टी को शत–शत नमन। गौमाता व बैल जो हमारे जीवन के सच्चे आधार हैं, को भी सादर नमन। मौसम पर बारिश देने व विनाश रोकने वाले इष्ट देवताओं के पायलागू।

जैव विविधता से लहलहाती पहाड़ की पारंपरिक खेती, पशुपालन एवं जंगल संरक्षण को पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ाने वाले किसानों, पशुपालकों लोहे, तांबे व पीतल के बर्तन बनाने वाले लुहारों, टम्टों, मिट्टी के बर्तन बनाने वाले कुम्हारों, लकड़ी के बर्तन बनाने वाले चुनारों, पत्थरों को तराश कर सिल–बट्टा, जांदरा व घराट बनाने वाले कारीगरों, जिनकी बदौलत लोगों की भोजन की थाली में जैविक, पौष्टिक, स्वादिष्ट व औषधियुक्त खाना आता रहा है, जिससे हमारे शरीर ही नहीं अपितु मन और आत्मा की भी तृप्ति होती है, उनकी सादर वन्दना।

पुड़ी और रोट

अपनी कुलदेवी मां श्री सुरकंडा देवी को नई फसल के बासमती चावल के ज्यूंदाल, बुखणे व सभी देवताओं को रोट/कोदा का रोट व नैवेद्य समर्पित। खाने से पहले सभी तरह के खाने का एक सूक्ष्म हिस्सा चूल्हे के खांदे के ऊपर या थाली से अलग रखने की परंपरा को पुड़ी कहते हैं। पुड़ी देवताओं, पितरों एवं मृतात्माओं को समर्पित की जाती है। माना जाता है कि अदृश्य शक्तियां भी खाने की लालसा रखती हैं। ये अदृश्य शक्तियां हमारी आस्था की प्रतीक हैं। किंतु हमारे पर्यावरण में हमारे साझीदार चींटी सरीखे छोटे–छोटे जीव–जन्तु व कई पशु–पक्षियों को इससे सीधे खाना मिलता है। नई फसल बुआई, रोपाई एवं कटाई के वक्त तो अदृश्य शक्तियों के नाम पर अलग से रोट काट कर इधर–उधर चढ़ा कर फिर सबको परसाद बांटा जाता है। पुड़ी और रोट के साथ खानपान की संस्कृति सबको समर्पित है।

दिनेश धनै
मंत्री
पर्यटन, संस्कृति, तीर्थाटन प्रबन्धन,
धार्मिक मेले एवं युवा कल्याण विभाग

उत्तराखण्ड सरकार

कक्ष संख्या : 115/116
विधान सभा भवन
देहरादून-248001
फोन : 0135-2666410
फैक्स : 0135-2666411
पत्रांक : 2167
दिनांक : 10.08.2015

संदेश

अपार हर्ष का विषय है कि पर्यावरणविद् श्री विजय जड़धारी जी द्वारा **"उत्तराखण्ड में खान–पान की संस्कृति"** पुस्तिका का प्रकाशन किया जा रहा है। श्री जड़धारी जी लम्बे समय से पहाड़ की खेती–बाड़ी, खान–पान व संस्कृति के संरक्षण को लेकर हमेशा से चिन्तित रहे हैं। वे लोगों को पहाड़ की संस्कृति के प्रति जागरूक करने के लिए सतत् प्रयन्तशील रहे हैं। हाल ही में उनके द्वारा लिखित उत्तराखण्ड में खान–पान की संस्कृति पुस्तिका कई मायनों में अत्यंत महत्वपूर्ण है। हमारे राज्य का पारम्पारिक खान–पान एवं पकवान केवल उदरपूर्ति ही नहीं करते हैं, बल्कि हमारी औषधीय जरूरतों को भी पूरा करते हैं। चाहे झंगोरे की खीर हो, कण्डाली की काफली, मारछा के लडडू हों या अरसा रोटाना या फाणा, हर पकवान का अपना विशेष महत्व है। स्वाद व पोषण दोनों ही दृष्टि से यहॉ के अनाज व पकवान उपयोगी हैं। नई पीढी इन सब को भूलती जा रही है, किन्तु श्री विजय जड़धारी जी की पुस्तक उत्तराखण्डी पकवानों की जानकारी कराने में उपयोगी सिद्ध होगी। नई पीढ़ी के लोगों को उनकी यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए, जो कि पूर्णरूप से प्रयोगों व अनुभवों पर आधारित है। निःसंदेह श्री जड़धारी जी का यह प्रयास बेहद प्रेरणादायक सिद्ध होगा।

मैं श्री विजय जड़धारी जी को पुस्तिका के सफल प्रकाशन हेतु अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ ज्ञापित करता हूँ।

(दिनेश धनै)

सुस्वागतम्-सुपोषणम्

बिना बोये उगने वाली साग-सब्जियां आ... हा अन्य खानपान के साथ

पानी को फिल्टर करती तांबे की गगरी

कण्डाली

लेंगड़ा

बुढ़णी

गुरियाल की कली

पिलखा की कली

तिमला–सब्जी

कद्दू की बेल (लुंगला)

सेमल के फूल की कली

पानी के ऊपर तैरती सब्जी खोल्या

बड्याऽलु

तल्ड़

लेदड़िया

च्यौ/मशरूम

साकिना

उत्तर पूर्व से आया पेड़ वाला टमाटर

बनफ्शा/हर्बल पेय

नाल बड़ी, शाकाहारी मांस

काखड़ी (पहाड़ी खीरा) मोरा नमक के साथ

मुंगरी (मक्की)

बमोरा

रैमोड़ी–विविधता का खजाना

काफल पाको...

हिंसर

तिमला (जंगली अंजीर)

बेडू पाको...

किनगोड़

चुलू/खुमानी

गहथ का फांणू

झंगोरा–फांणू के साथ

मीठा भात

कोदा की रोटी मक्खन के साथ

पिंडालू पत्युड़ की तैयारी

पिंडालू के पत्युड़

लेंगड़ा की सब्जी

झंगोरा–कण्डाली की काफली के साथ

कफ्ळाणी भात के साथ

कद्दू का रैठू

पकोड़ा मांगल पर्व का प्रतीक

अरसा– खास व्यंजन–खास कलेवा

रोटाना

खुल्या के पकोड़े

तल्ड का गुटका और तल्ड

मरसा (रामदान) के लड्डू

अल्मोड़ा की बाल मिठाई एवं टिहरी की सिंगोड़ी

सिल–बट्टा से फांणा की तैयारी

उखल्यारी (औखली) पौष्टिकता का खजाना

जांदरा (हाथ चक्की)

कुपोषण राष्ट्रीय शर्म

पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने 10 जनवरी 2012 को यह सच्ची बात कही थी कि "कुपोषण राष्ट्रीय शर्म है"। लेकिन शर्म के काम क्यों...? हमारे सकल घरेलू उत्पाद में प्रभावशाली वृद्धि के बावजूद देश में कुपोषण का स्तर आखिर अधिक क्यों है? प्रधानमंत्री की चिंता स्वाभाविक थी। सिटीजन अलायंस अगेंस्ट मालन्यूट्रिशन द्वारा कराये गये 'हंगमा' की रिपोर्ट के अनुसार देश के 42 प्रतिशत नौनिहाल कुपोषण के शिकार हैं। 55 हजार माँएं प्रतिवर्ष प्रसव के दौरान मर जाती हैं। यूनिसेफ की रिपोर्ट के अनुसार दुनिया में कुपोषित प्रत्येक 3 बच्चों में 1 भारतीय है। अंतर्राष्ट्रीय भुखमरी की तालिका में भारत 23.7, चीन 5.5, पाकिस्तान 20.7, बंगलादेश 24.5, नेपाल 19.9 एवं श्रीलंका 14 प्रतिशत के ग्राफ पर है। जिस चीन की जनसंख्या हमसे अधिक है उसकी हालत भी हमसे बेहतर है।

पहाड़ में एक कहावत है "शर्मदार शर्मक डरो, बेशर्म बोल्दो मैं देखी डरा", अर्थात इज्जतदार शर्म से डरता है, किंतु बेशर्म तो उल्टा डराता है। उन बेशर्म बहुराष्ट्रीय कंपनियों, योजनाकारों व बहुराष्ट्रीय कंपनियों के इशारे पर चलने वाले कृषि वैज्ञानिकों और उनकी रहनुमा सरकारों का क्या होगा जो भूख और पोषण के नाम पर अप्रत्यक्ष रूप से भुखमरी और कुपोषण फैलाने का बेशर्म कारोबार कर अथाह दौलत कमा रहे हैं। इतनी खराब हालत तो तब भी नहीं थी जब हमारे देश में मेडिकल कालेज, अस्पताल व डॉक्टर नहीं थे। लेकिन तब लोगों के पास अपनी स्वावलम्बी खेती, अपने जंगल, पारंपरिक ज्ञान, अपना प्राकृतिक विविधता युक्त खानपान, शुद्ध दूध, शुद्ध हवा–पानी और बेहतर पर्यावरण था जो उन्हें कुपोषण से बचाता था।

आज आंगनवाड़ियां चल रही हैं, गर्भवती महिलाओं को आयरन व कैल्शियम की गोलियां देने एवं टीके लगाने के लिए बहुत बड़ा महकमा काम कर रहा है। मध्याह्न भोजन स्कूलों में चल रहा है, सरकारी सस्ता

राशन गरीबों को मिलने लगा है। अब खाद्य सुरक्षा कानून से और अधिक सुविधा मिलने लगी है, फिर भी कुपोषण, भुखमरी और खतरनाक बीमारियां क्यों फैल रही हैं? दरअसल हमारी आदत सच्चाई की तरफ से बिल्ली की तरह आंखें मूंदने की है। **आज हमारे भोजन की थाली में भूख मिटाने के लिए जो चंद चीजें मिल भी रही हैं, उसमें मिट्टी से ही खतरनाक रसायन और जहर आ रहे हैं। गैर-अनाजी खाने में बच्चों को दूध के वेश में सफेद जहर दिया जा रहा है। नकली दूध में यूरिया, डीडीटी और न जाने कितने खतरनाक रसायन मिलाये जा रहे हैं। नकली पनीर चीज़ और खोया से तैयार जहरीली मिठाईयां बनाई जा रही हैं।** दीपावली के मौके पर छापे मारकर इन्हें पकड़ा जाता है फिर वर्ष भर कोई नहीं पूछता फलों में भी पोषण नहीं जहर है। जलवायु परिवर्तन का रोना रोते हैं, किंतु पूरी कृषि एवं खाद्य व्यवस्था प्रदूषणकारी है। **खेती की उपजाऊ जमीन पर कारों अन्य वाहनों की फसल, कंकरीट के जंगल, खनन व छह-आठ लेन वाली कोलतार की सड़कें विकास की प्रतीक मानी जा रही हैं।**

सरकार दूसरी हरित क्रांति का गुणगान करने को तैयार है। **पहली हरितक्रांति के दुष्प्रभावों से अब तक तीन लाख से अधिक किसान आत्महत्या कर चुके हैं, इस पर हमारी सरकार और संसद को शर्म नहीं आती। किसानों की आत्महत्याएं लगातार जारी हैं... कौन सुनेगा गरीब किसानों की करुण आवाज...? सभी दल कुर्सी और माया की फसल उगाने में लगे हैं। अब प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी किस तरह भूख व कुपोषण की राष्ट्रीय शर्म दूर करते हैं, सबकी निगाहें उस पर लगी हैं। स्वच्छ भारत मिशन जोर-शोर से चलाना अच्छी पहल है।**

जहर और कुपोषण का कारोबार

द्वितीय विश्व युद्ध सन् 1942 तक जो व्यापारिक कंपनियां जिन खतरनाक रसायानों से मारक हथियार गोला–बारूद आदि बनाती थीं, युद्ध खत्म होने के बाद जब उनका कारोबार चौपट होने लगा तो उन्होंने नई तकनीक विकसित कर **खतरनाक रसायनों से डीएपी, एनपीके व यूरिया जैसी रासायनिक खादें व खतरनाक कीटनाशक और खरपतवार नाशक बनाने शुरु किए।** 1970 के दशक से हरित क्रांति के वेश में ये रसायन खेती में विकास के औजार के रूप में हमारे देश में भी पहुंचे। हरितक्रांति ने

उपज तो बढ़ायी किंतु विविधतायुक्त बीज, विविधितायुक्त शुद्ध व स्वस्थ भोजन, किसान का स्वावलम्बन व पारंपरिक ज्ञान छीन लिया। बिना लागत की खेती को लागत में बदल दिया। बरानी (असिंचित) खेती को सिंचित खेती में बदलने का गोरख धंधा, बड़े बांध व सिंचाई नहरों का बड़ा करोबार भी चल पड़ा। अब देखिये **किसान कंगाल होते जा रहे हैं और बीज, रासायनिक खाद, कीटनाशक खरपतवारनाशी एवं खेती के उपकरणों में लगी कंपनियों का मुनाफा दिन दूना रात चौगुना बढ़ता जा रहा है। इनके षडयंत्र से कर्जदार किसान आत्महत्या को मजबूर हैं, या खेती छोड़ रहे हैं।** किसान तो मर रहे हैं, किंतु उपभोक्तओं की हालत भी तो देखिये– नई–नई खतरनाक बीमारियां आ रही हैं। **अस्पतालों और डाक्टरों की सेवा कारोबार व उद्योग में बदल गयी है,** पर उन कंपनियों को देखिए... पहले जहर से बीमारियां फैलाती हैं फिर जीवन रक्षक दवाइयां बेचने का कारोबार करती हैं। लेकिन ये दवाइयां भी बड़ी मात्रा में नकली हैं। वे विदेशी कंपनियां पहले हथियारों से मारती थीं, आज विकास के नाम पर रासायनिक खादों व जहरीले कीटनाशकों के धीमे जहर से मार रही हैं। **भोपाल गैस कांड के घाव तीन दशक बाद भी नहीं भर पाये हैं। इस फैक्ट्री में भी तो कीटनाशक बनता था। इस फैक्ट्री को चलाने वाला एंडरसन हाल ही में अमेरिका में अपनी मौत मर गया किंतु 4 हजार से अधिक लोग उसकी लापरवाही से मरे, हजारों लोग लूले लंगड़े व दिमाग से कमजोर हैं, पर देश उसे सजा नहीं दिला पाया।** दरअसल यह गैस कांड नहीं अपतु, कीटनाशक कांड था; कीटनाशक से मारने वाली यूनियन कार्बाइड के उत्पादों का बहिष्कार भी देश ने नहीं किया।

अब दूसरी हरित क्रांति की बात हो रही है, लेकिन दूसरी हरित क्रांति के मार्फत आपके भोजन की थाली में पहले से जहर तो तैयार है साथ ही जैव प्रौद्योगिकी के मार्फत जीएम फसलें व खतरनाक जीएम खाना लाने की तैयारी भी है। बीटी बैंगन को जनदबाव ने ठंडे बस्ते में डाल दिया। किंतु, अब संसद में बायोडायवरसिटी रेगूलेटिंग (ब्राई) जैवविविधता प्राधिकरण बिल पास कराने की तैयारी है। विपक्ष में रहने वाले अब सरकार में है तब उन्होंने इसका विरोध किया था किन्तु बहुराष्ट्रीय कंपनियों का दबाव इतना है कि अब विकास के नाम पर जीएम प्रोद्योगिकी की तरफ उनका झुकाव दिखायी देने लगा है। यदि ऐसा हुआ तो जीएम फसलों/खाद्यों के कारोबार में लगी बहुराष्ट्रीय कंपनियों का कारोबार और अधिक बढ़ेगा

और देश की जनता के स्वास्थ्य पर नया संकट आयेगा। जैव विविधता और पर्यावरण की संदूषण/प्रदूषण से बड़ी क्षति होगी। निस्संदेह अगली संतान के डीएनए में भारी कमजोरी आयेगी। राष्ट्रहित में जीएम फसलों को रोका जाना चाहिए।

नये प्रधानमंत्री यदि सचमुच राष्ट्रीय शर्म दूर करना चाहते हैं, तो वे शर्म पैदा करने वाले कार्यक्रम रोकें। वे और उनके स्वदेशी कार्यक्रमों की अब परीक्षा की घड़ी है, वे सतत टिकाऊ व पोषण की खेती चुनते हैं या जहर के कारोबार को चुनकर ज्यादा शर्म पैदा करते हैं। कुपोषण की राष्ट्रीय शर्म को वे किस तरह दूर करते हैं यह देखना अभी बाकी है। किसानों की जीवन पद्धति, संस्कृति एवं कम लागत की खेती जब लौटेगी तो किसान विविधता युक्त मिश्रित खेती कर, खुद भी बचेंगे और देश की जनता की थाली में पौष्टिक खाद्यान्न, दलहन, तिलहन, फल–फूल व साग–भाजी परोसेंगे। जिन्हें वैज्ञानिक मोटे अनाज कहते हैं वे सबसे बारीक होते हैं किंतु गेहूं चावल से ज्यादा पौष्टिक हैं। इसलिए हम उन्हें पौष्टिक अनाज कहते हैं। इन पौष्टिक अनाजों के सरंक्षण के लिए राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के अंतर्गत "पोषण सुरक्षा हेतु कदन्न मोटा अनाज पहल विकास कार्यक्रम" चलाने का अच्छा निर्णय है, किंतु इन पौष्टिक अनाजों में भी जहर घोला जा रहा है। सदियों से पौष्टिक अनाजों की खेती प्राकृतिक जैविक रही है, किंतु इस योजना में मुफ्त में रासायनिक खादें एवं अन्य खतरनाक जहर बांटे जा रहे हैं। देश के 18 राज्यों में अभी यह योजना चल रही है, जिनमें एक उत्तराखण्ड भी है। इन जहरों से पर्यावरण व असिंचित मिट्टी तो तबाह होगी, साथ ही जैविक, पौष्टिक मोटे अनाजों के नाम पर लोगों की थाली में जहर पहुंचेगा। पूरे देश में मिलेट पौष्टिक अनाजों की खेती में रासायनिक उपकरणों पर प्रतिबंध लगाना चाहिए और जैविक बीज व जैविक खाद को बढ़ावा मिलना चाहिए।

बीज बचाओ आंदोलन ने कोदा (मंडुआ) व झंगोरा (सांवा) की फसल के लिए बांटी जा रही रासायनिक खादों का प्रबल विरोध किया। फलस्वरूप केंद्र सरकार व राज्य कृषि विभाग ने इस कार्यक्रम में रासायनिक खादों पर प्रतिबंध लगा दिया, अब जैविक खादों के लिए किसानों को आर्थिक मदद मिलने लगी है।

सबसे पहले किसानों की रक्षा, तब ही होगी उपभोक्ता सुरक्षा, जरूरी है पोषण एवं स्वास्थ्य रक्षा, इसके बिना अधूरी है खाद्य सुरक्षा।

बर्तन, स्वाद और पोषण

बर्तन सिर्फ बर्तन नहीं हैं
बर्तन बढ़ाते हैं स्वाद
और देते हैं पौष्टिकता
दूर भगाते हैं बीमारियां
इसलिए आपकी रसोई में आने चाहिए
पोषण देने वाली धातुओं के बर्तन
पानी भरने के लिए पीतल का बंटा
तांबे की गगरी व मिट्टी का घड़ा
खाना पकाने व खाने के लिए
अच्छे लोहे की कढ़ाही व तवा
पीतल, तांबा व तिखूट की डिगची
पतीलें व अन्य बर्तन

मट्ठा, मणझोळी व अन्य चीजों को छौंकने
परोसने के लिए लोहे की कड़छी
मिट्टी की हांडी व मिट्टी के बर्तन
धीमी आंच में दाल पकाने के लिए भड्डू
प्रेशर कुकर एवं अच्छी धातु के बर्तन
दूध गर्म करने के लिए लोहे एवं मिट्टी के बर्तन
दही छांछ के लिए मिट्टी के बर्तन, लकड़ी की ठेकियां परोठियां
पानी, सूप, चाय आदि पीने के लिए तांबे, पीतल, कांच स्टील के
गिलास, जग व लोटे, मिट्टी का कुल्हड़
खाना खाने एवं रखने के लिए
स्टील, चीनी मिट्टी, कांसा की थालियां एवं प्लेट
पत्तल, पुड़के पर खाना स्वादिष्ट व स्वच्छता का प्रतीक
सिलोटा (सिल-बट्टा) व जाँदरा भी स्वाद व पौष्टिकता का प्रतीक हैं।

बर्तन सिर्फ बर्तन नहीं...

बर्तन जिन्हें रसोई से बाहर फेंके

- **घटिया एल्यूमीनियम**
- **प्लास्टिक के पानी रखने एवं पीने के बर्तन**
- **प्लास्टिक का मेलामाइन डिस्पोज़ोबल कप/गिलास**
- **मिल का आटा और पिसे-पिसाये मसाले भूलकर भी न लायें न खायें**
- **निःसंदेह स्वस्थ होगा परिवार और पूरा देश।**

बीमारियों से बचने का सरल रास्ता

सभ्यता एवं विकास के युग में बच्चों, महिलाओं व आम लोगों में बढ़ता कुपोषण, हार्ट (दिल), शुगर/डायबिटीज, पथरी, आंख एवं हड्डियों की कमजोरी, टीबी, अस्थमा, खून की कमी, मानसिक रोग, बच्चों की बीमारियां व महिलाओं के आंतरिक रोग दिन-प्रतिदिन बढ़ते जा रहे है। इतना ही नहीं कैंसर जैसी घातक बीमारी भी आम हो रही हैं। जापानी बुखार, स्वाइन फ्लू, कभी बर्ड फ्लू जैसी बीमारियां भी आ रही हैं। बीमारियों के निदान के लिए बड़े-बड़े मेडिकल इंस्टीट्यूट व अस्पतालों और डाक्टरों की संख्या बढ़ने लगी है। लेकिन बीमारियां रुकने का नाम नहीं ले रही हैं। दवा कंपनियों का कारोबार बढ़ता जा रहा है, एलोपैथिक दवा एक तरफ तुरंत आराम देती है तो दूसरी तरफ नई बीमारी पैदा करती है।

दरअसल इन बीमारियों को बढ़ाने का काम भी साथ-साथ चल रहा है। अशुद्ध हवा-पानी, रासायानिक खादों, कीटनाशक एवं खरपतवार नाशी जहरों से उत्पादित खानपान, मैंगी जैसे जंक फूड, डिब्बाबंद खाद्य, कोकाकोला व पेप्सी जैसे शीतल पेय, तरह-तरह के तम्बाकू व शराब का बढ़ता प्रचलन, बाहर का तैयार खाना बीमारियों को दावत दे रहा है। गोदामों का सड़ा-गला खाद्यान्न भी खतरनाक है। एल्यूमीनियम व प्लास्टिक के बर्तन भी खतरनाक जहर छोड़ते हैं।

यदि स्वस्थ रहना चाहते हैं तो अपने आस-पास के प्राकृतिक, विविधता युक्त एवं जैविक खानपान का सेवन करें। रसोई में शुद्ध धातुओं के बर्तनों का इस्तेमाल करें। विविधतायुक्त खाद्यान्न, पौष्टिक अनाज (मिलेट), दलहन, तिलहन, साग-सब्जी व फल-फूल आपको बीमारियों से बचायेंगे और स्वस्थ रखेंगे। मौसमानुसार घरेलू व जंगली फल-फूल भी अच्छे स्वास्थ्य की जोरदार कुंजी हैं। शुद्ध हवा, पानी और शरीर श्रम, स्वस्थ जीवन का आधार है। पारंपरिक खानपान की पद्धतियाँ कुपोषण और बीमारियों से बचने का सबसे सस्ता, सरल व सीधा रास्ता है, उस पर चलने के हम सबको प्रयास करने चाहिएं।

सामूहिक एकता का भोज
दाल-भात

भात–दाल या दाल–भात एक दूसरे के पूरक हैं। उत्तराखण्ड में ग्रामीण खानपान की संस्कृति में इसका पहला स्थान माना जाता है। जब कभी कोई शादी, मुण्डन एवं अन्य कोई भी बड़ा सामूहिक भोज आयोजित होता है तो ग्रामीण संस्कृति के अनुसार गांव की अपनी भैयात (भाई–बंधुओं) को कार्ड या चिट्ठी देने का प्रचलन कभी नहीं रहा। पुराने समय में एक जगह से एक निर्धारित व्यक्ति ऊंची आवाज लगाता था कि फलाने दिन अमुक व्यक्ति के लड़के या लड़की की शादी है, यदि सपरिवार खाना है तो कहते थे "चूल्हा न्युतू (कुटम्बदारी)" का भात खाने आना। यदि एक व्यक्ति का है तो "मौ आदमी" (परिवार में सिर्फ एक व्यक्ति) को भात खाने का निमंत्रण देते थे। रात के खाने में तो रोटी,

सब्जी, पूरी चाहे कुछ भी बने, फिर भी बुलावा दिया जाता है भात खाने का। सामूहिक खाने में निश्चित है दाल–भात बनना ही बनना है।

दाल–भात बनाने के लिए सामग्री समारोह–आयोजक की होनी लाजमी है, किन्तु लकड़ी इकट्ठा करने, भट्टी में पकाने से लेकर भांडे–बर्तन चौका, भट्टी व पानी सब कुछ प्रबंध पूरा समाज करता है। खाना पकाने व परोसने के नियम कायदे भले ही अलिखित हैं, किन्तु इनका पालन सभी करते हैं। भात–दाल सिर्फ सरोला पंडित रसोइए ही पका सकते हैं। खाने में बकड़ा भात, मीठा भात, पलाव व एक दो किस्म की दाल होती हैं। चूल्हे या भट्टी में सरोलों के अलावा कोई प्रवेश नहीं कर सकता। उन्हें सामग्री देने वाले भी भट्टी की निर्धारित रेखा के बाहर से ही सब कुछ देते हैं। खाना खाने–खिलाने का कठोर अनुशासन है। सभी जीमने वाले जूते–चप्पल उतार कर खुली पंक्तियों में बैठते हैं। सैकड़ों लोग एक साथ जीम जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति के पास पत्तल एवं पानी के लोटे की व्यवस्था करने के बाद आम आदमी पंगत से बाहर आ जाता है। उसके बाद सरोला रसोईया भात लेकर आता है। मीठे भात से इसकी शुरूआत होती है। दो–तीन पाली में भात–दाल इच्छानुसार बांटा जाता है। जब रसोईया पंगत के बीच आ जाता है, उसके बाद कोई बाहरी व्यक्ति पंगत के बीच नहीं जा सकता है। और पंगत में बैठा व्यक्ति भी खड़ा नहीं उठ सकता। जब सब लोग खा लेते हैं, तो फिर खड़े उठने के लिए पंक्तियों के एक छोर से दूसरे छोर तक मैसेज पास होता है कि सबने खा लिया या नहीं? खाते वक्त यदि एक व्यक्ति भी बीच में अनुशासन तोड़कर खड़ा हो गया या बाहर से कोई अन्दर चला गया तो समझो गड़बड़ी पैदा हो गयी, लोग अधखाये में ही उठ खड़े होंगे। और हां, इतनी भी सावधानी बरतनी पड़ती है कि रसोईये को कोई छू न ले, साथ ही रसोइया भी किसी को छू नहीं सकता। इस तरह का अनुशासन सिक्ख समाज में भी है। वहां गुरुद्वारे में खाना परोसने वाले को छू नहीं सकते, यहां पर यह भोजन अनुशासन का सामाजिक बंधन है। दाल–भात के सामूहिक भोज में लोग बहुत शान्ति, आनन्द व आराम से भोजन का रसास्वादन करते हैं, खाने वाले उंगली चाटते रह जाते हैं। भुनी हुई मिर्च का स्वाद लेना भी कोई नहीं भूलता है। इससे खाना जल्दी हजम होता है और प्यास भी नहीं लगती। इसमें सफाई का पूरा–पूरा ध्यान होता है। एक–दूसरे की जूठन से कोसों दूर। खाना खाकर पत्तल फेंक देते हैं। पत्तल की खाद

बन जाती है। सामूहिक भोज गांव समाज का आपसी प्रेम व भाईचारा बढ़ाने का मधुर बंधन है। इसमें कमी है तो सिर्फ इतनी कि दलित सवर्णों के साथ पंगत में बैठ कर नहीं खा सकते। लेकिन सामूहिक भोज की अब यह पद्धति कमजोर होने लगी है। खड़े–खड़े खाने का शहरी घटिया बड़पन गाँवों तक पहुंचने लगा है।

भात बड़ी–बड़ी कढ़ाही चासनी या डेगों में पकाया जाता है, जिनकी क्षमता छोटी से लेकर 50 कि.ग्रा. से भी अधिक चावल एक साथ पकाने की होती है। कढ़ाही में ढक्कन अलग नहीं होता इसे पत्तलों से ढका जाता है। पत्तलों की भाप से भपाने वाले भात को दम्पक भात कहते हैं।

दाल पकाने के बर्तन भी जोरदार होते हैं। भड्डू तिखूट (तीन धातु) या पीतल की बहुत मोटी चादर से बना गोल बर्तन है, जिस पर धीमी गति से दाल पकती है। इसका आकार दो–ढाई सौ लीटर तक भी होता है। पहले घरों में भी छोटे भड्डू होते थे, लेकिन प्रेशर कुकर के आने के बाद घरों से छोटे भड्डू लुप्त हो गये हैं। भड्डू के लिए मुख्यतः साबुत राजमा, उड़द, तोर की खास दालें हैं। साबुत दालों को ही प्राथमिकता दी जाती है। भट्टी में जब मोटी लकड़ी का खुंड जलता है तो उसके तेज अंगारों से भले ही ठंडे प्रोसेस में दाल पकती है, किन्तु बहुत ज्यादा लम्बा समय भी नहीं लगता।

दाल पकाने, गलाने या जलने से बचाने के लिए उसमें पकाते समय थोड़ा, हल्दी, नमक एवं सरसों का तेल जरूर डालते हैं। उसे सोडा कहते है। लेकिन सचमुच का सोडा या अन्य स्वाद बढ़ाने वाले रसायन बिल्कुल वर्जित हैं। पहले प्याज, लहसुन

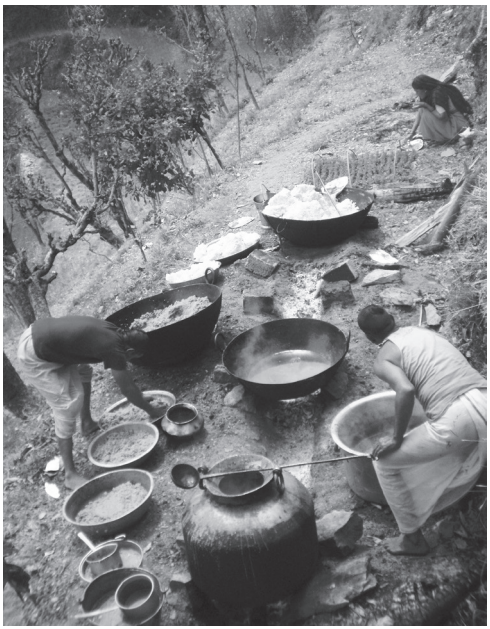

दाल–भात परोसने की व्यवस्था करते रसोइए।

एवं टमाटर की गिरीवी का इस्तेमाल भी पहले नहीं होता था, किंतु अब कुछ लोग यह करने लगे हैं। नमक, मिर्च व मसाले भी सामान्य डालते हैं। दाल पकने के बाद सरसों का तेल या घर के देसी घी को पतीले में गर्म कर उसमें पहले लाल मिर्चों को भून कर भूरा किया जाता है, जिसे भूटी मिर्च कहते है। उन्हें अलग निकालकर फिर धनिये व जीरे का छौंका लगाया जाता है। वातावरण में छौंके की खुशबू महक उठती है। ऊपर से एक–दो किलो शुद्ध घर का घी पूरे भड्डू में अलग से डालते हैं। बासमती भात और दाल की जोरदार खुशबू महकने लगती है। भोजन की इंतजारी में बैठे लोगों के मुंह में पानी आ जाता है।

निःसंदेह भड्डू की दाल और भात का मजेदार स्वाद वाह... वाह... यादगार बन जाता है। लोग तृप्ति से खाते हैं और 'रस्याण' (अच्छे स्वाद आदि) की आपस में खूब चर्चा करते हैं। उंगली चाटना और भुनी हुई मिर्च खाने का अपना मजा है। पत्तल यदि मालू के हों तो और भी आनंद, कुदरती पत्तल की जोरदार महक भी स्वाद बढ़ा देती है।

झाल्या भात

कढ़ाही में चावल पकाकर जब पकने के लिए 15–20 प्रतिशत शेष होते हैं तो उन्हें बांस–रिंगाल के झालों (टोकरों) में पलटकर पतों से ढककर भपाया जाता है। परोसते समय भात–चावल के दाने अलग–अलग दिखाई देते हैं। यह तरीका बारीक चावल हंसराज–बासमती के लिए खास होता है।

सेहत बचाने के नारे

- **रासायनिक खानपान और गंदापानी– बीमारियों की यही निशानी।**
- **जैविक खानपान, शुद्ध हवा पानी– स्वस्थ भारत की असली निशानी।**
- **पहाड़ी खानपान खाओ– कुपोषण दूर भगाओ।**
- **टूटेगा जहरों से नाता– स्वस्थ होगी भारत माता।**
- **रासायनिक खानपान छोड़ो– प्रकृति से नाता जोड़ो।**
- **अपनी मिट्टी अपनी खाद– अपने बीज अपना स्वाद।**
- **नकली बीज नशीली खाद– इनसे सेहत है बरबाद।**

कोदा/मंडुआ

मंडुआ को देशभर में अलग–अलग नामों से जाना जाता है, किन्तु ज्यादा प्रचलित कन्नड़ नाम रागी है। अंग्रेजी में इसे फिंगर मिलेट कहते हैं। गढ़वाल, कुंमाऊ में कोदा नाम ज्यादा प्रचलन में है। कोदो एक अलग मिलेट होता है, कोदा/मंडुआ एक ही है। इसे उपेक्षित मोटे अनाज की श्रेणी रखा गया है जबकि यह सबसे बारीक है और **दुनिया में जितने अनाज हैं, उनमें पौष्टिकता की दृष्टि से मंडुआ सबसे शिखर पर है। स्त्री, पुरुष, बच्चों एवं बूढ़ों सबके लिए यह बहुत उपयोगी है। बढ़ते बच्चों के लिए तो यह और भी उपयोगी है, क्योंकि इसमें सबसे ज्यादा कैल्शियम पाया जाता है।** पुराने जमाने में जब उत्तराखण्ड के निवासी मंडुआ को अपने दैनिक खानपान में जरूरी मानते थे तब उनका शरीर पूर्ण स्वस्थ और इतना बलिष्ठ होता था कि कभी दुर्घटनावश ऊंची चोटी या पेड़ से गिरने पर भी उनकी हड्डी नहीं टूटती थी। बीमारियां उनके पास नहीं फटकती थीं और कभी जंगली जानवर भालू आदि से यदि भिड़ंत हो गयी तो बिना किसी हथियार के ही अपने भुजा बल से उसे मौत के घाट उतार देते थे। इसलिए गढ़वाल को वीर भड़ों (बलवानों) की भूमि कहा जाता है। **आज भी जो लोग अपने भोजन में नित्य मंडुआ और झंगोरा के पकवानों का इस्तेमाल करते हैं उन्हें शारीरिक कमजोरी नहीं हो सकती और उन्हें कभी मधुमेह (डायबिटीज़) नहीं हो सकता। मधुमेह की यह औषधि है।** मंडुआ खाने वाले हमेशा स्वस्थ रहते हैं और कुपोषण से मुक्त हैं। पोषण में मंडुआ की बराबारी अन्य खाद्यान्न नहीं कर सकते। खनिज विटामिनों के अलावा **मंडुआ, आयरन, रेशा एवं आयोडीन का स्रोत भी है। कैलशियम के स्रोत के कारण पौड़ी जिले में मंडुआ को चून या चूना भी कहते हैं। मंडुआ की रोटी की पहचान चूने की रोटी के नाम से है।**

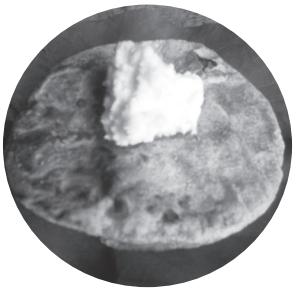

कोदा की रोटी–घर्या मक्खन के साथ

मंडुआ की रोटी

कोदा–मंडुआ की रोटी उत्तराखण्ड की खास रोटी है, लेकिन गेहूं के आटे की तरह मंडुआ के आटे की रोटी बनाना आसान नहीं, क्योंकि आटा हाथों में चिपकता है और गोली बनाते समय इस पर पलेथण (सूखा आटा) भी काम नहीं करता। इसलिए ताजा आटा गूंथते जाइए और हाथों में पानी लगाकर रोटी बनायें। चकला बेलन की जरूरत नहीं, ठीक उसी तरह जिस तरह मक्की व बाजरे की रोटी बनाते हैं। लकड़ी का चूल्हा है तो अंगारों में रोटी सेकें, रोटी जरूर फूलेगी और करारी भी होगी।

मंडुआ की रोटी गरमा–गरम खाने में ज्यादा स्वादिष्ट लगती है लेकिन कुदरती–असली स्वाद घर के ताजा मक्खन या घी के साथ आता है, रोटी की भीनी–भीनी खुशबू से मन मचल उठता है। एक और सच बात यह है कि जिन लोगों को घी आसानी से हजम नहीं होता, मंडुआ की रोटी के साथ खायेंगे तो आसानी से घी पच जायेगा।

मंडुआ की रोटी के साथ कंडाली की कापिली, राई, लाही व पालक का साग, झोळी, कढ़ी, फांणा व डुबका आदि स्वाद में चार चांद लगाता है।

मंडुआ की रोटी और गुड़, मंडुआ की रोटी और मोरा व लहसुन नमक का स्वाद भी मजेदार लगता है।

मंडुआ व गेहूं की मिश्रित रोटी

मंडुआ की अकेली रोटी बनाने में यदि दिक्कत है तो गेहूं के आटे के साथ मिश्रित कर रोटी बना सकते हैं। अनुपात आधा–आधा या इच्छानुसार रख सकते हैं, मिश्रित रोटी बनाने में चकला–बेलन का प्रयोग कर सकते हैं। मंडुआ, गेहूं जौ एवं चौलाई को मिश्रित कर मल्टीग्रेन रोटी बना कर ताकत एवं जोरदार स्वाद का आनंद ले सकते हैं।

ठग रोटी

नाम भले ही ठग रोटी है किंतु वास्तव में यह ठगती नहीं है अपितु पौष्टिकता का खजाना है। दरअसल पौड़ी जिले के कुछ हिस्सों में गेहूं की रोटी के

अन्दर मंडुआ के आटे की भरवा रोटी बनाते हैं। इसका असली नाम दाबड़ी रोटी है। बाहर से गेहूं की रोटी और अन्दर मंडुआ की गर्मा गरम रोटी घी और सब्जी के साथ खायें। इसे सचमुच की डबल रोटी कह सकते हैं।

मंडुआ व गेहूं की बेल्डी रोटी (भरवा रोटी)

नौरंगी, राजमा, रगड़वास, गहथ, तोर व लोबिया में से कोई भी दाल हो, उसे पका लें। सावधानी रखें दाल ज्यादा न गले, उबली दाल को निथार कर सिल–बट्टे में पीस कर मसीटा तैयार करें। मसीटे में नमक, मिर्च, मोरा, हरा धनिया, अदरक, लहसुन इच्छानुसार मिलाएं। अब मंडुआ–गेहूं या मिश्रित आटा अच्छी तरह गूंथें और गोलियां बनाकर उसे हल्के से पाथ कर उसके अन्दर तैयार मसीटा भरें और बेल कर गर्म तवे पर डालें, आंच कम नहीं होनी चाहिए। अकेले मंडुआ आटे की रोटी सिर्फ पानी के हाथ से बनेगी। लकड़ी का चूल्हा बेल्डी रोटी बनाने के लिए सर्वोत्तम है। रोटियां अच्छी तरह सेकें और गरमा–गरम परोसें लेकिन बेल्डी रोटी के साथ मक्खन या घी एक त्यौहार जैसा खाना है। खाने में मजा आता है और फिर ताजा दही या छांछ हो तो और भी अच्छा। गांव में आज भी जिस दिन भरवां रोटी बनाते हैं, ताजा मट्ठा बिलोते हैं। रोटी के ऊपर ताजा खुशबूदार चोपड़ (मक्खन)... वाह वाह और 'ढिडक्याली' दही हो जाये तो और कुछ नहीं चाहिए।

कोदा का बाड़ी

कोदा का बाड़ी गढ़वाल का पारंपरिक पकवान है। आप अपनी इच्छानुसार कोदा का आटा निकालें और आटे के अनुपात के अनुसार कढ़ाही में पानी उबालें, उबलते पानी में एक आध चम्मच रिफाइंड या घी डालें और उसमें थोड़ा–थोड़ा आटा डालते हुए उसे लकड़ी की करछी या कौंच से हिलाते जाए, ताकि गोलियां न बने। कुछ देर बाद में यह हलवे की तरह पककर तैयार होने लगेगा। पकने की पहचान यह है कि पानी पूरा सूख जाय, बाड़ी कढ़ाही का तल छोड़ने लगे। बाड़ी की कढ़ाही चूल्हे से उतारें और थोड़ा ठंडा होने पर छोटे–छोटे अन्दाज के गोले बनाकर सब्जी, दाल के साथ खायें हां अगर चटणी हो तो और जायका आयेगा। दक्षिण भारत में भी इस तरह के मंडुआ के गोले सीधे गटक कर खाये जाते हैं।

कोदा का हलवा

मंडुआ के आटे को अन्दाज से देसी घी के साथ कढ़ाही में हल्की आंच में भूनें। पहले से पानी गर्म कर इसमें चीनी या गुड़ मिला दें। जब आटा गुलाबी रंग का हो जाय और भुनने की अच्छी खुशबू आने लगे तो उसमें गरी, काजू, किशमिश, सौंफ आदि डाल कर थोड़ी देर चलाएं और पहले से तैयार चीनी या गुड़ वाला गर्म पानी डालें, और तेजी से कौंचा–पलटा चलाते रहें, इतनी तेजी से कि गुठली न बनें। कौंचा तब तक चलाते रहें जब तक हलवा कढ़ाही का तल न छोड़ दे। हलवा तैयार होने पर गर्म–गर्म परोसें और मजे से खायें। बहुत ही स्वादिष्ट लगता है।

कोदा का पळयो

पळयो कोदा के आटे से बनने वाला पारंपरिक स्वादिष्ट व्यंजन हैं। पळयों धीरे–धीरे लुप्त होता जा रहा है। पळयो ठीक उसी तरह बनता है जैसे कढ़ी बनायी जाती है। अंतर सिर्फ इतना है कि कढ़ी साग के रूप में इस्तेमाल होती है और पळयो पूर्ण आहार है। ताजी छांछ के साथ कोदा के आटे को अच्छी तरह घोलकर उसमें नमक, मिर्च, हल्के मसाले मिला दें। लोहे की कढ़ाही चूल्हे पर रखें। छौंक के लिए थोड़ा सा तेल/घी डालें, लहसुन, प्याज, जख्या, फरण का तड़का लगायें और कोदा व मट्ठा का घोल छौंक दें। कई स्थानों पर बिना छौंके भी सीधे पळयों पकाने एवं बाद में लहसुन वाला नमक मिलाकर खाने की परंपरा है। इसको अच्छी तरह पकायें, करछी कौंचा चलाते रहें क्योंकि इसमें बार–बार उबाल आता है, साथ ही कढ़ाही तल पर भी यह चिपकता है। पळयो खूब लसपसा होना चाहिए हलवे की तरह गाढ़ा नहीं। लसपसा पळयो फटा–फट थाली में परोसें। पळयो को हाथ से खाने में खूब स्वाद आता है, इतना स्वाद कि आप थाली और उंगली चाट कर चटकारे लेकर खायेंगे। थाली चाट–चाट कर इतनी साफ कर देंगे कि किसी को पता भी नहीं चलेगा, आपने थाली में कुछ खाया है।

कोदा का लेटा

कोदा के आटे के हलवे को कुमांऊ में कोदा का लेटा कहते हैं। इसे हलवे की तरह ही बनाया जाता है। कोदा के आटे को घी के साथ लोहे की कढ़ाही में भूरा होने तक हल्की आंच में भूनना चाहिए। गुड़ को पानी के

साथ उबाल कर पहले तैयार कर लेना चाहिए। भूरा होने पर फटा–फट इसमें गुड़ का पानी डाल दें, पानी किसी भी दशा में कम न हो। लेटा लसलसा किंतु खूब पीने लायक या चाटने लायक बन जायेगा।

कोदा का लेटा गर्भवती महिलाओं के लिए बहुत उपयोगी है। कुमाऊं में प्रसूति महिलाओं का यह पहला पौष्टिक आहार है, जो उन्हें ताकत के साथ–साथ दर्द कम करता है और जोरदार शारीरिक मानसिक खुराक भी देता है।

छोटी–बड़ी दुर्घटना या चोट लगने पर भी मरीज को कोदा का लेटा पिलाना फायदेमंद माना जाता है। हाथ–पांव की गुप्त चोट पर भी इसका लेप/(सेक) लगा कर पट्टी बांधी जाती है।

लड्डू

लड्डू बनाने के लिए हलवे वाला तरीका ही अपनाया जाता है। फर्क सिर्फ इतना है कि इसमें आटे के आधे हिस्से से बड़ा भाग यानी एक किलो आटे में 600 ग्राम चीनी की जरूरत होती है।

आटे के एक चौथाई हिस्से के बराबर घी में आटा गुलाबी होने तक भूनें और कढ़ाही नीचे उतारकर गर्मा–गर्म भुने आटे में चीनी, गरी का बुरादा, काजू, किशमिश एवं अलग से थोड़ा घी मिलाकर कौंचा चलाते रहें जब हल्का गर्म रह जाय तो फटा–फट लड्डू बांधने शुरू करें। बस लड्डू तैयार हैं। खाने की देरी है। (यह पारंपरिक डिश नहीं है)

बोर्नवीटा-हार्लिक्स नहीं मंडुआ माल्ट, पौष्टिक पेय

मंडुआ से माल्ट भी बनता है। दक्षिण भारत में यह रागी माल्ट के नाम से बहुत मशहूर है। यह बहुत ही पौष्टिक होता है और खाने–पीने में स्वादिष्ट। माल्ट बनाने के लिए मंडुआ को छान कर साफ करें, 24 घंटे तक पानी में भिगोकर रखें, फिर पानी से निकाल कर साफ कपड़े में रखकर पोटली में बांध दें। मंडुआ बहुत जल्दी अंकुरित होने वाले अनाजों में प्रथम पंक्ति पर है। हल्के अंकुर आने के बाद अगले दिन अंकुर मसलकर हटा दें और छाया में अच्छी तरह फैलाकर सुखा दें। सूखने पर मंडुआ को कढ़ाही पर तेज आंच में थोड़ा–थोड़ा इस तरह भुनें जैसे मारसा (चौलाई) को भूनते हैं। इसके थोड़े–बहुत खील भी बनेंगे। भूने मंडुआ को चक्की या ग्राइंडर पर पिसवा लें, घारट हो तो और भी अच्छा। महक बढ़ाने के लिए

पीसने से पहले इसमें छोटी इलाइची दाना डाल सकते हैं। पीसने पर तैयार हो गया है रागी माल्ट। एक–दो चम्मच माल्ट एक गिलास में दूध के साथ मिला कर खायें। मंडुआ माल्ट से बोर्नवीटा और हार्लिक्स का स्वाद आयेगा और यदि मेहमान आ जाएं उन्हें कुछ बताये बिना चाय या काफी के स्थान पर एक–दो चम्मच माल्ट डालें और पिलायें। गर्मा–गर्म माल्ट, पीने वाला पूछेगा वाह, यह किस कम्पनी की काफी है। निःसन्देह यह जोरदार पेय है।

माल्ट बच्चों व बूढ़ों को स्वस्थ रखने और हड्डी व दांतों की कमजोरी के लिए जोरदार टॉनिक है। बच्चों को दूध के साथ खिलाने से यह बहुत पौष्टिक व गुणकारी है। माल्ट सम्पूर्ण भोजन एवं टॉनिक दोनों का काम करता है। हड्डियां मजबूत बनाता है और शरीर का पूर्ण विकास करता है। कई रोगों से भी बचाता है।

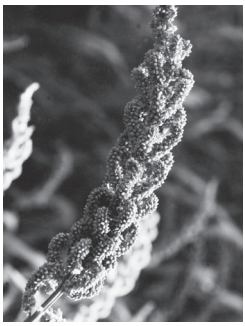

झंगोरा

झंगोरा उत्तराखण्ड की एक प्रमुख फसल है। कुमाऊंनी में यह मादिरा एवं हिन्दी में सांवा, सुवां एवं समा आदि कई नामों से जाना जाता है। अंग्रेजी में इसे बार्नयार्ड मिलेट कहा जाता है। चावल को भले ही सामाजिक एवं सरकारी मान्यता प्राप्त है किंतु पोषण की दृष्टि से झंगोरा ज्यादा महत्वपूर्ण है। झंगोरा है तो सबसे बारीक किंतु वैज्ञानिकों एवं योजनाकारों ने इसे मोटे अनाज का नाम देकर उपेक्षित रखा है। झंगोरा को नवरात्र व्रत या अन्य धार्मिक उत्सवों में फलाहार के रूप में सांवा के चावल के रूप में खाया जाता है। आर्थिक दृष्टि से यह चावल से पांच–सात गुना फायदेमंद है।

पोषण की यदि बात करें तो वैद्य, डॉक्टर व पोषण के जानकार एवं अनुभवी किसानों की नजर में यह उत्कृष्ट भोजन है। **इसमें सभी फसलों से सबसे अधिक रेशा पाया जाता है जो शुगर या मधुमेह के रोगियों के लिए उपयुक्त है।** पीलिया के रोगियों के लिए यह हल्का खाना है। इसमें प्रोटीन, खनिज एवं लौह तत्व चावल से अधिक है। यह बादी नहीं करता इसलिए गठिया रोगियों के लिए भी अच्छा है।

देहाती क्षेत्रों में झंगोरे को स्थानीय खाद्य सुरक्षा व खाद्य सम्प्रभुता का प्रतीक माना जाता है। साबुत झंगोरा को कई दशकों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। भले ही कूटाने के बाद झंगरियाल पर कुछ माह में ही कीड़ा लग जाता है, किंतु बंद डिब्बों में इसे थोड़ा लम्बे समय तक रख सकते हैं। झंगोरा की फसल शत प्रतिशत जैविक होती है। इसकी गुणवत्ता फसल चक्र के तहत उगाने से भी बढ़ती है। झंगोरा का चारा पशुओं के लिए पौष्टिक है। दुधारन गाय–भैंस झंगरेट (चारा) खाकर दूध बढ़ाते हैं, और उस दूध में पोषक तत्व ज्यादा होते हैं। झगोंरे के (चावल) को ज्यादा पानी में पका कर पिंडे या चारे के रूप में भी दुधारन पशुओं को खिलाया जाता है। इससे दूध में बढ़ोतरी होती है।

कैसे पकायें झंगोरा/झंगरियाल

झंगोरे के चावल को ठेठ गढ़वाली में झंगरियाल कहते हैं, किन्तु पकवानों में झंगोरा ही प्रचलित है। झंगोरा झटपट पकने वाला खाना है। झंगोरा पकाने के लिए सबसे पहले पतीले में पानी उबालें। जितना झंगोरा बना रहे हैं, पानी उसका दोगुना होना चाहिए। यह सावधानी रखें कि झंगरियाल में बिंई (साबुत दाना) बिल्कुल न रहे। झंगोरा यदि ओखली का कूटा है तो धोने की जरूरत नहीं और यदि मशीन से कूटा है तो उसे धोकर खौलते पानी में डालें और कौंचा चलाते रहें, ताकि झंगोरा बर्तन के तल पर न लगे और हां यदि पानी के ऊपर कुछ छिल्के वाले दाने तैर रहे हों तो उन्हें चाय छलनी से अलग निकाल लें। आंच कम नहीं होनी चाहिए, कुछ पल ढक्कन रख सकते हैं किंतु जब फिर खौलने लगे तो कौंचा चलाते रहें। पांच–सात मिनट में झंगोरा गाढ़ा होने लगेगा, यदि पानी बिना माप का ज्यादा रखा है तो मांड निकाल दें, घी के शौकीन हैं तो एक–आध चम्मच डालें, स्वाद मजेदार होगा। कौंचा चलाकर फिर अच्छी तरह पलटें जब पानी सूख जाय तो ढक्कन लगा लें। अब आंच थोड़ी सी धीमी कर दें, लेकिन बहुत कम नहीं। थोड़ी देर भपने दें, इसकी जांच के लिए पतीले के झंगोरे वाले हिस्से में बाहर से पानी के छींटे मारें, यदि पानी सूख जाय और छँया–छँया की आवाज आ जाय तो पतीला उतार दें, थोड़ी देर बाद परोसें। देखिए कितना मजेदार फर–फर्रा झंगोरा बना है। खाने में आनन्द आयेगा। झंगोरा की भीनी–भीनी खुशबू झंगराण आपका मन मोह लेगी।

झंगोरा के साथ बहुत अच्छा लगता है- फांणू, झोळी, कढ़ी, डुबका, मणझोळी, दही, कद्दू का रैठू व काखड़ी का रैला, चैसू, कंडाली की कपिली, राई की कपिली, पिंडालू के हरे पत्तों की कपिली, आलू का झोल, थेच्वांणी व कद्दू की सब्जी आदि।

झंगोरा की खीर

झंगोरा की खीर उत्तराखण्ड के खानपान की एक खास पहचान है। झंगोरे को सांवा के चावल व सांवा की खीर के रूप में देशभर में जाना जाता है। व्रत और नवरात्रों के अवसर पर लोग सांवा अवश्य खाते हैं। खीर बनाने के लिए खुले पतीले या डेगची में झंगोरा पकाने की विधि अपनायें। कौंचे से झंगोरा हिलाते–घुमाते रहें। आंच कम न होने पाये, यानी उसमें

पूरा उबाल आना चाहिए, साथ ही बर्तन भी छोटा न हो। बर्तन के तले पर झंगोरा न लगने दें दूध पहले से गर्मकर रखें, दूध की मात्रा झंगोरे से चार गुना से अधिक होनी चाहिए और चीनी या गुड़ की मात्रा बराबर। एक पाव झंगोरे के लिए एक पाव गुड़ चीनी और एक किलो दूध होना चाहिए। जब झंगोरा अधपका हो जाय तो देखें उसमें पानी ज्यादा तो नहीं है, यदि पानी ज्यादा है तो अलग निकाल लें, फिर उसमें दूध और चीनी डाल दें, जब उबाल आने लगे तब आंच थोड़ी कम कर सकते हैं। किंतु उबाल रुकना नहीं चाहिए, कौंचा चलाते रहें। ध्यान रहे गुठलियां न बनें। स्वाद और जायका लाने के लिए खीर में कद्दूकस किया गया गोला, किशमिश व इलाइची पाउडर डालिए, चीड़ के जंगल के बीच रहने वाले लोग सिर्फ छेंती बीज के मेवे का आनंद ले सकते हैं। जब खीर लसपसी हो जाय या नीचे से जलने लगे तो बर्तन नीचे उतार दें। खीर ज्यादा गाढ़ी भी न हो वरना ठंडी होने पर सख्त हो जायेगी। झंगोरे की खीर न ज्यादा गर्म खानी चाहिए न ज्यादा ठंडी।

खीर मध्यम गर्म परोसिए देखिए कितनी स्वादिष्ट लगती है, आप खाते ही रह जायेंगे। खीर खाने का आनन्द लेना है तो हाथ से ही खाइए। आप उंगलियां भी चाटेंगे और उंगलियों से खाने की थाली भी खीर कब साफ हुई पता नहीं चलेगा।

छंचेरा/छछिंडा

पुराने समय में छंचेरा/छछिंडा खाने का रिवाज था। घर में जिस दिन ताजा मट्ठा बनता था उस दिन खाने–पीने के शौकीन लोगों की जीभ छंचेरा खाने के लिए मचलती थी। परन्तु अब बहुत कम घरों में छछिंडा पकाया जाता है। कहीं–कहीं तो यह शब्दावली से भी गायब हो गया है। दक्षिण भारत में चावल के साथ दही पकाकर छछिंडा की तरह खाने का रिवाज आज भी खूब प्रचलित हैं। गढ़वाल में इसे छंचेरा/छछिंडा कहते हैं, और कुमाऊं में छसिया।

छंचेरा/छछिंडा बनाने के लिए डेगची या पतीले में पानी उबालें। निर्धारित मात्रा में झंगोरा साफ कर अच्छी तरह धो–कर खौलते पानी में डालें। करछी को तेज गति से घुमायें, झंगोरा बर्तन की तली में बहुत तेजी से चिपकता है। इसलिए कौंचा या करछी से हिलाने में लापरवाही बिल्कुल न करें। आंच पूरी होनी चाहिए इतनी कि उबाल रुके नहीं, जब

झंगोरा अधपका हो जाय और पानी कम होने लगे तो उसमें झंगोरा की मात्रा से दोगुना या अधिक मट्ठा डाल दें। साथ में लहसुन, नमक, मिर्च एवं हलके मसाले डालकर अच्छी तरह हिलाते रहें। आंच थोड़ी कम कर सकते हैं, किंतु तैयार होने की पहचान है, पकता छंछेरा थिरकने लगेगा। वह थीड़–थीड़ कर उछल कर बाहर गिरने लगेगा और गाढ़ा होने लगेगा, तब एक दो मिनट के लिए ढक्कन लगा दें और आंच कम कर दें। बर्तन चूल्हे से नीचे उतारकर थोड़ा सा इंतजारी के बाद परोसिए और खाइए मजेदार स्वादिष्ट व पौष्टिक छंचेरा। देखिए कितना स्वाद आता है इस पारंपरिक व्यंजन से। आपको सर्दी भी नहीं लगेगी। खीर की तरह इसे हाथ से खाना चाहिए। आपको चाटने से कोई नहीं रोकेगा।

चावल का छछिंडा

चावल का छछिंडा भी उपरोक्त तरीके से बनायें।

- छंछिंडा छांछ ही नहीं अपितु दही के साथ भी बना सकते हैं। किन्तु दही में पानी मथ दें, तब इस्तेमाल करें।

भुड़का/फ्राय झंगोरा

ताजा झंगोरा खाने के बाद यदि बच जाय तो उसको बासी कह कर फेंके नहीं अपितु स्वच्छ साफ बर्तन में हवादार स्थान या फ्रिज़ में रख दें। जब दुबारा भूख लगे या दूसरे वक्त के खाने के लिए बासी झंगोरे को बारीक चूर दें। उसमें जरूरत अनुसार नमक हल्की मिर्च और धनिया पाउडर मिलायें। लोहे की कढ़ाही चूल्हे पर रखें। घी या शुद्ध सरसों का तेल उसमें डालें और जख्या, फरण व राई–सरसों में से कोई भी तड़का सामान्य से थोड़े अधिक डालें और झंगोरे का चूरा उसमें छोंक दें। कौंचे या पलटा से अच्छी तरह मिलायें या कढ़ाही को दोनों हाथों से पकड़कर हिलाते हुए पलटें। हल्के पानी के छींटे मार सकते हैं। थोड़ी देर ढक्कन लगाकर हल्का भाप दें। फिर पलटें ताकि कढ़ाही के तले में ज्यादा न लगे। तैयार है भुड़का झंगोरा, गर्मा गरम परोसें, खाने में जो मजेदार स्वाद आयेगा आप कहेंगे ताजे झंगोरे की अपेक्षा बासी भुड़का झंगोरा ज्यादा स्वादिष्ट है। और हां कढ़ाही में चिपकी झंगोरा की परत तो और भी मजेदार, कुरकुरी लगती है। बच्चे इसे खाने के लिए झगड़ते हैं। इसके साथ साग की जरूरत नहीं। थोड़ा दही या छाछ अच्छी लगती है।

कौणी

कौणी (कंगनी) एक महत्वपूर्ण पौष्टिक अनाज है। इसे अंग्रेजी में फौक्स टेल मिलेट कहते हैं। कौणी को मुख्यतः भात के रूप में खाया जाता है। इसकी खीर भी बहुत अच्छी बनती है। कौणी की खेती मुख्यतः झंगोरा के साथ मिश्रित रूप से की जाती है। कौणी की फसल व दानों पर कोई रोग नहीं लगता। कौणी को कई दशक तक सुरक्षित रखा जा सकता है, किन्तु चावल बनाकर इसे ज्यादा लम्बे समय तक नहीं रख सकते। **कौणी को पहाड़ों में औषधि खाद्य के रूप में सर्दियों में इस्तेमाल किया जाता है। बच्चों को जब खसरा रोग होता है तो उन्हें कौणी का भात खिलाया जाता है। इससे खसरा या 'मीज़ल्स' तुरंत बाहर आ जाता है।**

जहां तक पौष्टिकता की बात है, अब वैद्य, डॉक्टर एवं पोषण के जानकार मधुमेह व पीलिया रोग में कौणी का भात खाने की राय देते हैं। इसमें गेहूं और चावल की अपेक्षा प्रोटीन की मात्रा अधिक है। **रेशा भी गेहूं चावल से 40 गुना अधिक पाया जाता है। इसमें विभिन्न खनिज विटामिन पाये जाते हैं। पचने में यह बिल्कुल हल्का है।**

कौणी का भात खीर एवं अन्य व्यंजन झंगोरा की तरह बनाये जाते है। आधुनिक तरीके से बिस्कुट, लड्डू इडली एवं मिठाईयां भी बनायी जा सकती हैं।

मंडुआ-झंगोरा के आधुनिक व्यंजन

पारपंरिक फसलों से बनाये जाने वाले व्यंजन एक तरफ हमारी खानपान की संस्कृति के महत्वपूर्ण हिस्से हैं तो दूसरी तरफ स्वाद एवं पौष्टिकता में इनका कोई जबाब नहीं, किंतु इसका मतलब यह भी नहीं कि इन फसलों के आधुनिक व्यंजन बिल्कुल न बनें। कोदा, झंगोरा व मरसा आदि से बिस्कुट, केक, पेस्ट्री, बर्फी, माल्ट, नूडल, इडली व डोसा आदि भी बनाये जा सकते हैं। इससे पारपंरिक फसलों का महत्व ही बढ़ेगा, लेकिन इनकी प्रोसेसिंग की तकनीक व इनमें प्रयोग होने वाले संसाधन स्थानीय ही विकसित किये जाने चाहिए। बाहरी खतरनाक रसायनों से बचा जाना चाहिए।

मंडुआ-झंगोरा के बिस्कुट और स्नैक्स

मंडुआ, झंगोरा, कौणी व मारसा (रामदाना) पारंपरिक खानपान तक सीमित नहीं हैं, अपितु आधुनिक तरीके के खानपान में भी ये एक नया रास्ता दिखा सकते हैं। बड़ी–बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के बिस्कुट व अन्य नमकीन आदि हमारे घरों व रसोई में पहुंच रहे हैं। हमारे पैसों से ये कंपनियां मालामाल बन रहीं हैं किंतु बर्गर, पास्ता, नुडूल व मैगी जैसे अन्य बाहरी खाद्य पदार्थों से हमारा एवं हमारे बच्चों का स्वास्थ खराब हो रहा है, क्योंकि उनमें खतरनाक रसायन भी मिले होते हैं, जबकि बिस्कुट नमकीन बनाना इतना कठिन नहीं। हम मंडुआ, झंगोरा एवं रामदाना आदि से स्वादिष्ट मजेदार आरोग्य पौष्टिक बिस्कुट व नमकीन घर पर ही बना सकते हैं। जानिए कुछ तरीकेः

मंडुआ के बिस्कुट

मंडुआ को साफ कर छड़कर (छिलका उतारकर) बारीक आटा बना लें। तीन चौथाई मंडुआ आटा एवं एक चौथाई गेहूं का आटा बिस्कुट बनाने के लिए उपयुक्त है।

उदाहरण के लिए

मंडुआ आटा	300 ग्राम
गेहूं आटा	100 ग्राम
ताजा क्रीम या शुद्ध दूध	200 ग्राम
चीनी पीसी हुई	200 ग्राम
बेकिंग पाउडर	8 से 10 ग्राम
एसेंस	5–7 बूंद

मंडुआ, गेहूं आटा एवं चीनी पाउडर को छलनी से अच्छी तरह छानकर मिश्रण बना लें। इस मिश्रण को दूध या क्रीम के साथ अच्छी तरह गूंथे। गूंथे हुए आटे की छोटी–छोटी गोलियां घी के हाथ से बनायें और इन्हें गोल बिस्कुट की तरह बनायें या बेलन से मोटी परत बेलकर बाद में छुरी से बिस्कुट के आकार के टुकड़े बनायें। यदि घरेलू लकड़ी के कारीगर द्वारा रोटाने बनाने का लकड़ी का सांचा/यंत्र हो तो और भी अच्छा है। इन बिस्कुटों को ट्रे में घी लगा कर बिजली के ओवन में सेकें। ओवन का तापमान 150 डिग्री सेंटीग्रेड रखें। 30 मिनट तक सेकें। बिस्कुट तैयार

हैं। ठंडा होने पर मजे से चाय या हर्बल पेय के साथ नाश्ते में खायें। यदि बिजली का ओवन नहीं हो तो तवे के ऊपर बिस्कुट को समान आंच में रखकर ऊपर से थाली या अन्य ढक्कन रखकर तब तक सेकें जब तक बिस्कुट भूरा न हो जाय।

झंगोरा के बिस्कुट

झंगोरे का बारीक पिसा आटा (1 कटोरी)	160 ग्राम
कैस्टर शूगर	80 ग्राम
बेकिंग पाउडर	5 ग्राम
शुद्ध घी	80 ग्राम
ऐसेन्स	कुछ बूंद
पानी	लगभग 200 मि.ली.

बनाने की विधि

झंगोरे का आटा, चीनी, बेकिंग पाउडर को अच्छी तरह मिश्रित करें और अच्छी तरह मसलते रहें, अन्दाज का पानी मिलाकर आटे की तरह गूंथे। अब गोली बनाकर थोड़ा मोटे अंदाज से चकला बेलन की सहायता से बेलें और छुरी से बिस्कुट जैसे पीस बनायें। तवे को चूल्हे पर रखें। हल्की आंच होनी चाहिए और शुद्ध घी के हाथ से मसलकर बिस्कुट तवे पर रखें, ऊपर गोल थाली से ढक दें। यदि कंडे/उपलों की समान आंच हो तो और भी अच्छा है।

15 मिनट बाद जब बिस्कुट भूरे रंग के हो जायें तो तवा उतार दें। ठंडा होने पर जोरदार बिस्कुट खाइए। सावधानी रखें आंच बहुत कम चाहिए वरना बिस्कुट जल जायेंगे, शहरों में बिजली के **ओवन में अच्छे बिस्कुट बनाये जा सकते हैं।**

मल्टी ग्रेन बिस्कुट

पौष्टिक अनाज, मंडुआ, रामदाना और झंगोरा का मल्टी ग्रेन बिस्कुट भी उपरोक्त विधि से बना सकते हैं। सामग्री का अनुपात निम्नानुसार रख सकते हैं–

मिश्रित बारीक पिसा हुआ आटा	300 ग्राम
पिसी हुई चीनी	150 से 200 ग्राम

बेकिंग पाउडर	8 से 10 ग्राम
शुद्ध देसी घी	150 ग्राम
ऐसेन्स	5–7 बूंद
पानी	जरूरत अनुसार

जिस तरह आटा गूंथते हैं उसी तरह अच्छी तरह गूंथें और मंडुआ के बिस्कुट की तरह ही पकायें।

झंगोरा के स्नैक्स

जरूरत अनुसार झंगोरा/झंगरियाल को साफ कर रात को पानी में भिगो दें। उसे दोगुना पानी में यानी यदि आपने 1 कटोरी झंगोरा भिगाया है तो दो कटोरी से अधिक पानी के साथ अच्छी तरह पकायें। पकाने से पूर्व उसमें हल्का नमक, मिर्च, मेथीदाना, अजवाइन थोड़ा सा हल्दी पाउडर एवं चुटकी भर बेकिंग सोडा जरूर मिलायें। पकने के बाद उसे अच्छी तरह घोटें, उसकी राब बन जायेगी, अब ठंडा होने दें। एक साफ कपड़ा लें, उस पर बारीक छेद कर दें। अब तैयार झंगोरा की राब छेद वाले कपड़े पर डालें। यह कपड़ा जलेबी बनाने वाले कपड़े की तरह का हो। धूप में एक सफेद पालिथिन की चादर तख्त/चारपाई के ऊपर बिछायें और कपड़े में रखी झंगोरे की राब को मुट्ठी में बांध कर दबाकर पालिथिन की चादर पर छोटे–छोटे छल्ले का आकार देते हुए निचोड़ें। धूप में तब तक सुखायें जब तक छल्ले पालिथिन को छोड़ न दें। तैयार है स्नैक्स सामग्री, इसे बन्द डिब्बे में रखें।

मेहमानों एवं स्वयं घर के सदस्यों के लिए चट–पट, चटपटा स्नैक्स–नमकीन खाने–खिलाने के लिए इसे सरसों के तेल या रिफाइंड में तलें, और गर्मा–गरम परोसें, साथ में चाय–काफी की चुस्की ले सकते हैं।

झंगोरा के पापड़

झंगोरा झंगरियाल को साफ कर रात को पानी में भिगो दें। सुबह उसमें थोड़ा मेथी दाना, अजवायन और हल्का नमक व चुटकी भर बेकिंग पाउडर मिलाकर दोगुने पानी में प्रेशर कुकर या सामान्य पतीले में अच्छी तरह तब तक पकायें और घोटें जब तक उसकी राब (पेस्ट) न बन जाय। खूब ठंडा होने दें। धूप में तख्त के ऊपर एक सफेद पारदर्शी पॉलिथिन की शीट

बिछाकर करछी से राब निकाल कर पॉलिथिन के ऊपर छोटे–छोटे पापड़ के आकार में फैलायें और तब तक सुखायें, जब तक पापड़ पॉलिथिन को छोड़ न दे। पालिथिन नहीं है तो थाली एवं परात में भी इसी तरह बना सकते हैं। बस तैयार है झंगोरा के स्वादिष्ट पौष्टिक पापड़ इन्हें अच्छे साफ डिब्बे में रखें और जब मन करे या मेहमान आयें, उन्हें तलकर या सेककर खिलायें। खाने वाले वाह... वाह करते आपकी तारीफ करेंगे। कहेंगे यह तो बतायें यह स्वादिष्ट पापड़ किस चीज के बने हैं।

[स्रोतः बिस्कुट व स्नैक्स के लिए परंपरागत फसलों की उन्नत तकनीकियां जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्व विद्यालय पर्वतीय परिसर रानी चौरी (टि.ग.) से आभार सहित।]

पापड़े, शादी और बारिश

खाना चाहे जितना स्वादिष्ट हो किंतु कढ़ाही या अन्य बर्तन में चिपके झोळी, कढ़ी, फाणु, चैसू, चुड़कानी, कापिली, भात, मीठा भात रोटी व लगड़ी का अधजला हिस्सा और अधिक स्वादिष्ट लगता है। इसे पापड़े कहते हैं। पापड़े कुर्र... कुर्र खाने में मजा आता है। इसे खाने की बच्चे खूब फरमाइश करते हैं किंतु माता–पिता डराते हैं, मत खाओ तुम्हारी शादी में बारिश होगी, किंतु स्वादिष्ट पापड़े खाने से भला कौन रोक सकता है, और हां अगर किसी की शादी में बारिश हो गयी तो उनके सौजुड़्या (हमजोली) के साथी बर-ब्योली को खूब चिढ़ाते हैं, तुमने पापड़े खाये हैं, पर किसने? बर ने या ब्योली ने? एक दूसरे पर पापड़े खाने के आरोप लगाने में मजा आता है।

फास्ट फूड, फास्ट बीमार, फास्ट मौत

मारसा/रामदाना

गढ़वाली में मारसा, कुमांऊनी में चुआ हिन्दी में चौलाई व देशभर में रामदाना के नाम से जाना जाने वाले खाद्यान्न को कभी भगवान राम ने भी जरूर खाया होगा तभी तो व्रत नवरात्रों में रामदाना को फलाहार के रूप में खाया जाता है और इसका नाम रामदाना पड़ा। रामदाना दुनिया का सबसे पुराना खाद्यान्न है। इसे अंग्रेजी में अमरेंथ कहते हैं। रामदाना से हरा साग, रोटी, लड्डू, भूनकर, हलवा और बिस्कुट आदि विविध व्यंजन बनाये जाते हैं। सर्दियों में जब बारिश होती है या बर्फ पड़ती है, तो गांव के लोग चूल्हे के आस–पास बैठकर, आग भी तापते हैं और कढ़ाही चूल्हे के ऊपर रखकर रामदाना भूनकर गपशप करते हुए बिना तिथि के त्यौहार के रूप में मजे–मजे में खाते हैं। **पौष्टिकता की दृष्टि से रामदाने के दानों में गेहूं के आटे से दस गुना कैल्शियम, तीन गुना वसा तथा दुगुने से अधिक लोहा होता है। धान और मक्का से भी यह श्रेष्ठ है। शाकाहारी लोगों को रामदाना खाने से मछली के बराबर प्रोटीन मिलता है। रामदाने का हरासाग भी बहुत उपयोगी है।**

रामदाना की रोटी

एक जमाने में रामदाने के आटे की अलग से भी रोटियां बनायी जाती थीं। रामदाने की रोटी मीठी होती है किंतु आटा बहुत चिपचिपा होता है। इसलिए रोटी मुश्किल से बनती है। यहां तक कि चक्की में आटा पीसना भी मुश्किल होता है, क्योंकि रामदाना के कुछ बारीक–बारीक चिकने दाने चक्की के अन्दर से फिसल कर साबुत ही बाहर आ जाते हैं। इसको मंडुआ गेहूं के साथ मिश्रित भी पिसाते हैं। मिश्रित आटे की रोटी भी बहुत स्वादिष्ट व पौष्टिक होती है और आसानी से बनाई जा सकती है। रोटियां इतनी मीठी व स्वादिष्ट कि आप बिना साग के ही गर्मा गरम खा सकते हैं। किंतु ज्यादा गर्म न खायें, पेट खराब हो सकता है। रोटियां

हरे साग के साथ ज्यादा अच्छी लगती हैं। कढ़ी और दही के साथ भी मजेदार लगती हैं। उच्च हिमालयी क्षेत्रों में आज भी रामदाने की रोटियां खायी जाती हैं।

कैसे भूनें रामदाना

रामदाना भूनने के लिए लोहे की कढ़ाही चूल्हे पर रखें। उसे बराबर मध्यम आंच में गर्म करें। सूती कपड़े के टुकड़े (हंडबीड़ा) पास रखें या लकड़ी की डंडी पर सूती कपड़े को गेंदनुमा (गोला) बना दें। इस गेंदनुमा कपड़े पर यदि सूखी साफ राख है तो लगाकर कढ़ाही के तले पर छिड़कें और रामदाने को एक मुट्ठी से थोड़े कम कढ़ाही पर डालें और कपड़े की गेंद से इसे फटाफट हिलाते–डुलाते रहें, कुछ ही क्षणों में बारीक रामदाना के दाने तिड़–तिड़ करके उछल–कूद शुरू कर देते हैं। बस आप अब और तेजी से हिलाते रहें किन्तु जब रामदाना के दानों की आवाज ज्यादा आने लगे तो क्षण भर रुकें फिर और तेज करें, देखते–देखते कढ़ाही का तल फूले दानों या खील से भर जायेगा। फूले दाने ऊपर और सामान्य दाने फूलने के लिए नीचे जायेंगे, फिर भी कुछ दाने फूलने से बच जायेंगे। बस फटा–फट कपड़े से कढ़ाही के दोनों हत्थे पकड़कर उसे हिलाते हुए दूसरे बर्तन में डाल दें, और कढ़ाही फिर उसी तरह चूल्हे पर रख कर पहले की तरह निरंतर यह क्रम जारी रखें। यदि एक व्यक्ति को दिक्कत है तो दूसरे को कढ़ाही उतारने के लिए जरूर साथ रखें। जितना रामदाना चाहें फुला लें।

पौराणिक मान्यता है कि यदि रामदान के खील अच्छे बन रहे हैं, तो भी यह न बोलें कि अच्छे हैं, बल्कि बोले खराब हैं। वरना रामदान के खील बनने खराब हो जायेंगे। भूनते समय छी...छी...मारसा की आवाज निकालते हैं। रामदाना भूनने की ये मान्यतायें आज भी लोग अपनाते हैं। भूने रामदाने को छलनी से छानें, अनखिले दाने छन जायेंगे और खील रह जायेंगे। बड़ी मात्रा में भूनने के लिए आधुनिक मशीनें भी होती हैं।

गर्म कढ़ाही में एक बार एक मुट्ठी से ज्यादा न डालें वरना अनखिला दाना ज्यादा होगा।

अनखिला रामदाना फेंके नहीं, उसको गेहूं या मंडुवे के साथ मिलाकर आटा, हलवा व सत्तू बनायें।

रामदाना के खील गुड़ और थोड़ा सा तिल भूनकर मिलाकर खायें। देखिये कितना मजा आता है, कितनी ऊर्जा मिलती है।

नाश्ते में रामदाना के खील बिना पकाये गर्म दूध के साथ मिलाकर पॉरिज की तरह खाये जा सकते हैं। यह तैयार नाश्ता बहुत ही सुपाच्य और पौष्टिक होता है।

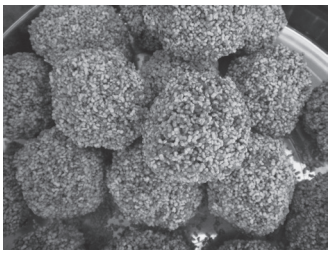

मारसा/रामदाना के लड्डू

भुने हुए या फुलाये हुए रामदाना के लड्डू मनुष्य ही नहीं अपितु भगवान शंकर को भी प्रिय हैं। इसीलिए शिवरात्रि के पर्व पर रामदाना और तिल के लड्डू बनाने का रिवाज है। किन्तु सिर्फ पर्व पर ही नहीं अपितु गर्मियों को छोड़कर हर मौसम में रामदाना के लड्डू सेहत के लिए बहुत फायदेमंद हैं। **लड्डू बनाने के लिए फुलाया रामदाना और गुड़ वजन में बराबर मात्रा में चाहिए।** पतीले को चूल्हे पर रखकर गर्म करें। उसमें 100 मि.ली. पानी डालकर उबाल आने पर उसमें गुड़ के छोटे–छोटे टुकड़े डालकर पकायें लेकिन पलटा या करछी लगातार चलाते रहें वरना गुड़ बर्तन के तले पर चिपक कर जलने लगेगा। गुड़ को तब तक पकायें जब तक पानी सूखे नहीं और चासनी तैयार न हो जाय। तार की जांच के लिए एक–दो बूंद पका गुड़ थाली में रखे पानी में डालें। गुड़ थाली में रखे पानी में नीचे बैठकर जम जायेगा फिर उंगली से इसकी जांच करें, कि कितने तार बन रहे हैं। दो–तीन तार की चासनी अच्छी है। चासनी कच्ची होगी तो लड्डू नहीं बन पायेंगे। इसलिए चासनी का ख्याल रखें। चासनी तैयार होने पर भुना हुआ रामदाना माप के हिसाब से उसमें फटा–फट मिलायें, देर नहीं करनी चाहिए। भुने हुए तिल भी इसके साथ मिलाने चाहिए, यदि लड्डू ज्यादा बनाने हैं तो परिवार के सभी सदस्य लगें और मुट्ठी की सहायता से जल्दी–जल्दी लड्डू बटें। देरी न करें वरना चासनी ठंडी होने पर लड्डू नहीं बन पायेंगे, पूरी सामग्री जम जायेगी।

रामदाना के लड्डू अब घरों तक सीमित नहीं है, ये सेहत मंद लड्डू हैं। स्वाद के साथ–साथ पौष्टिकता में भी भरपूर है। बाजार में इनकी खूब मांग बढ़ने लगी है। चिकनाई या वसा से परहेज रखने वालों के

लिए भी ये उपयुक्त हैं। गिफ्ट पैक/उपहार में अच्छी सेहत की कामना के जोरदार लड्डू भेंट करें।

साबुत रामदाने का हलवा

साबुत रामदाना को अच्छी तरह साफ कर उबाल लें। पानी अलग निथार दें। रामदाना वजन का दो तिहाई गुड़ या चीनी को पानी के साथ अलग उबाल लें। लोहे की कढ़ाही चूल्हे में रखकर गर्म करें। उसमें घर्या (देसी घी) डालकर, उबले हुए रामदाना को तब तक तक भूनें जब तक वह भूरा नहीं हो जाय। अब उबले पानी को उसमें डालें और थोड़ी देर पकायें कद्दूकस किया हुआ गोला व किशमिश इसमें डालें जब हलवा कढ़ाही छोड़ने लगे तो समझो पूरी तरह तैयार है। अब कढ़ाही नीचे उतार दें और थोड़े ठंडा होने दें। ज्यादा गरम न परोसें ज्यादा गर्म रामदाना पेट खराब करता है। यह हलवा नाश्ते के लिए भी अच्छा है। स्वीट डिश में भी स्पेशल डिश है। हलवा खूब चिपचिपा होता है।

भुने रामदाने का हलवा

उपरोक्त विधि से भुने रामदाने का हलवा बनाया जाता है। इसमें देसी घी की मात्रा थोड़ा ज्यादा चाहिए। लेकिन ज्यादा देर तक भूनने की जरूरत नहीं।

हिमालयी रामदाने के सभी पकवान ज्यादा स्वादिष्ट व पौष्टिक होते हैं। जब ज्यादा सर्दी लग रही हो तो रामदाने के पकवान खायें और सर्दी दूर भगायें।

आधुनिक खानपान में रामदाना

भुने रामदाने के आटे से हलवा, बर्फी, पूरी, बिस्कुट, केक, शक्करपारा एवं पॉरिज आदि खानपान के शौकीन लोग बनाने लगे हैं।

रामदाना की म्यूजली खायें– कैंसर दूर भगायें

म्यूजली एक स्वादिष्ट एवं पौष्टिक व्यंजन है। पश्चिम के देशों में जौ जई एवं गेहूं आदि को प्रोसेस कर, उसके साथ ड्राई फल के मिश्रण से बनी म्यूजली बहुत लोकप्रिय है। अब कैंसर के बढ़ते खतरे को देखते हुए गेहूं से बनी म्यूजली से लोग परहेज करने लगे हैं। यह माना जाता है

कि कैंसर के जीवाणु गेहूं के दाने के खाद्यान्न से बढ़ते हैं। भले ही गेहूं घास कैंसर रोधी है। लेकिन कैंसर के खतरों को कम करने एवं उसके जीवाणुओं की वृद्धि रोकने के लिए रामदाना, मंडुआ झंगोरा एवं कंडाली बहुत उपयोगी है।

स्विटजरलैंड में रामदाना की म्यूजली बहुत पसन्द की जाती है।

इस तरह बनायें रामदाना की म्यूजली

भुने हुए रामदाने के खीलों को शहद, बादाम, सिरोला, अखरोट एवं किशमिश के साथ अच्छी तरह मिश्रण बनायें। यही म्यूजली है। म्यूजली को आप नाश्ते में आराम–आराम से चबा–चबाकर शान्त चित मन से खायें देखें किस तरह से जोरदार स्वाद आपकी जीभ को आनन्द पहुंचाता हैं। यह म्यूजली बहुत **पौष्टिक और कैंसर रोधी** मानी जाती है।

चीणा (चीना)

एक जमाने में चीणा मौसमी भूख निवारण का खाद्यान्न था। भादों के महीने में जब गरीब छोटे किसानों के घर में पुराना अन्न समाप्त हो जाता था तो चीणा की पहली फसल जल्दी पककर आती थी और आड़े वक्त लोगों की खाद्य और पोषण सुरक्षा करती थी। चीणा को कूट कर चावल बनाते थे और इसका भात खाकर लोग अपनी भूख मिटाते थे। चीणा पौष्टिक अनाज मिलेट परिवार में शामिल हैं। उत्तराखण्ड में चीणा की फसल अधिकांश इलाकों से पूरी तरह समाप्त हो गयी है। हां गढ़वाल के गौरवशाली भड़ माधोसिंह भण्डारी के वंशजों के गांव मलेथा में जायद की फसल के रूप में गेहूं की फसल कटाई के बाद धान की रोपाई से पूर्व चीणा की फसल आज भी उगायी जाती है। यह एक महत्वपूर्ण फसल है, इसका भात खूब फरफरा पकता है, दही मट्ठा के साथ ज्यादा अच्छा लगता है। बिना हल्दी डाले पीला दिखायी देता है। क्योंकि इसके दाने ही पीले होते हैं। चीणा के स्वतः खुशबू वाले जोरदार 'बुखणे' बनते हैं। **चीणा के बुखणा** देखें पेज नं. 135 पर।

मुंगरी (मक्की) और काखड़ी

मक्की पहाड़ के कुछ इलाकों में पूरे भोजन के रूप में शामिल है। वहां पर मक्की की रोटी, दलिया एवं भात के रूप में खायी जाती हैं। किंतु अधिकांश हिस्सों में भादों के महीने में कच्ची मक्की के भुट्टों को भूनकर और उबालकर बड़े शौक से खाया जाता है। गढ़वाली–कुमांऊनी लोकगीतों में मुंगरी और काखड़ी (पहाड़ी खीरा) का जगह–जगह उल्लेख मिलता है। ससुराल गई बेटियां भादों के महीने में जब मायके आती हैं तो पारंपरिक किस्म की स्वादिष्ट खुशबूदार मुंगरी को अंगारों में भून कर या उबाल कर खाती हैं।

खीरे को गढ़वाली में काखड़ी तो कुमांऊनी में ककड़ी कहते हैं। काखड़ी सामान्य खीरे से बहुत बड़ी होती है। पहले 3 किलो से 5 किलो तक की काखड़ी मिल जाती थी, किंतु अब इतनी बड़ी नहीं मिलती। हरी काखड़ी के भिंडू को काटकर अलग कर देते हैं, यह खूब कड़वा होता है। शेष काखड़ी पर चीरे लगाकर बराबर पीस बनाकर, उसमें हरी मिर्च वाले चटपटे मोरा नमक के साथ मिला कर बड़े चाव से खाने की परंपरा आज भी है। घर आये मेहमानों को भी बड़े शौक से हरी काखड़ी खिलायी जाती है। लेकिन जनाब यह बाजारू खीरा नहीं है, यह काखड़ी जब कटती है तो दूर–दूर तक इसकी महक पहुंच जाती है, और स्वाद की बात करेंगे तो आपके मुंह में पानी आ जायेगा। बहुत ही मुलायम व स्वादिष्ट, कई बीमारियों को भगाने वाली काखड़ी का असली बीज अब बहुत कम दिखाई देता है। अब छोटा खीरा ज्यादा चलन में है। हरी और खरसी (पकी लाल/पीली) काखड़ी का रैलू (रायता) भी जोरदार बनता है। उसमें अगर मोरा का चरचरा–बरबरा नमक हो जाय तो और भी अच्छा, रैलू झंगोरा के साथ ज्यादा मजेदार लगता है।

पौष्टिक अनाज एवं गेहूं चावल के पोषणमान की तुलनात्मक सारणी

प्रति 100 ग्राम	प्रोटीन	वसा	ऊर्जा किलो/ किलौरी	रेशा	खनिज लवण	कैल्शियम	लाइसिन प्रोटीन	मिथायोनिन प्रोटीन	सिस्टीन प्रोटीन	ट्रिप्टोफेन प्रोटीन	आइसोल्यूसनी प्रोटीन	लौह	थाईमील	राइवो फ्लोविन
1. झंगोरा	6.2	5.8	309	9.8	4.7	14	16.6	1.9	2.8	1.0	8.0	18.6	0.33	0.10
2. मंडुआ रागी	7.3	1.3	288	3.6	2.7	344	3.5	3.4	2.2	1.6	6.4	3.9	0.5	0.11
3. कौणी	12.3	4.3	331	8.0	3.3	31	2.2	2.8	1.6	1.1	7.6	2.8	0.59	0.11
4. चीणा	12.5	1.1	341	2.2	1.9	14	3.0	2.6	1.0	0.8	8.1	2.9	0.41	0.28
5. रामदाना	15.6	6.3	410	2.4	2.9	222	5.5	2.6	2.1	-	3.9	13.9	-	-
6. बथुआ	16.2	-	395	-	3.0	149	6.0	2.2	1.2	-	3.3	6.5	-	-
6. ओगल/कट्टू	12.0	2.4	355	10.3	2.9	114	6.2	1.6	1.6	-	3.7	13.2	-	-
7. चावल	6.8	0.5	345	0.2	0.7	10	3.7	2.4	1.4	1.4	3.9	1.8	0.41	0.4
8. गेहूं	11.8	1.5	346	1.2	1.5	41	2.9	1.5	2.2	1.1	3.3	3.5	0.41	0.1

स्रोत– मलेशी 2001 लैग एवं पियरसन 1980

चावल के पकवान

बकड़ा भात (सादे चावल)

सादे चावल के भात को ठेठ ग्रामीण भाषा में बकड़ा भात कहते हैं। "बकड़ा भात" शब्द का इस्तेमाल ज्यादातर सामूहिक भोज दाल–भात की दावत के वक्त करते हैं। घर में पहले पीतल की डेगची में भात पकाते थे और मांड भी निकालते थे। मांड का उपयोग सभी लोग करते थे, अब प्रेशर कुकर आने से डेगची का भात ही नहीं अपितु डेगची भी लुप्त हो गयी है। अधिकांश घरों में प्रेशर कुकर में ही भात बनाते हैं। भात पकाने की विधि के संदर्भ में हमें लगता है कि कुछ बताने की जरूरत नहीं।

हां चावल या भात खाने और पकाने वालों को यह जरूर ध्यान देना चाहिए कि वे सफेद चमकीले चावल का मोह जरूर त्यागें। धान की भूसी के अन्दर यानी चावल की बाहरी परत जो कुछ मटमैली होती है तो कुछ चावल लाल होते हैं, कुछ की परत हल्की लाल होती है किन्तु परत के अन्दर कुछ किस्मों का चावल सफेद होता है। ध्यान देने वाली बात यह है कि चावल की यह बाहरी परत ही सबसे ज्यादा पौष्टिक होती है। **इसमें विटामिन बी के साथ-साथ स्टार्च, फासफोरस व कैल्शियम भी होता है। लाल चावल में तो विटामिन ए भी होता है।** गोल्डन चावल बनाने वाली बहुराष्ट्रीय कम्पनी विटामिन ए का दावा करती हैं किंतु हमारे यहां दर्जनों लाल चावल की प्रजातियाँ विटामिन ए से भरपूर हैं। इसलिए मशीन में चावल इतना साफ न

उखल्यारी–गिज्याली (ओखली में धान कुटाई)

करें कि उसकी मटमैली परत छिल जाय सामान्यतः मशीन के कूटे चावल और ओखली के कूटे चावल में भी अंतर है। ओखली का कूटा चावल निसन्देह ज्यादा पौष्टिक होता है। **'उखल्यारी' और 'गिज्याली' (ओखली और मूसल)** हमारे अच्छे स्वास्थ के प्रतीक हैं। प्रसव से पूर्व धान कूटने से बच्चा आसानी से होता है।

मीठा भात

मीठा भात गढ़वाल की खानपान की संस्कृति का पहला हिस्सा है। जब भी कोई शादी या अन्य समारोह होते हैं तो उसमें मीठा भात जरूर परोसा जाता है। गुड़ में पकाने से इसका रंग हल्का लाल हो जाता है। शहरी संस्कृति के लिहाज से मीठा खाने के बाद खाते हैं, किंतु पहाड़ में सामूहिक भोज के अवसर पर मीठे से खाने की शुरुआत करते हैं, कुछ खाद्य विशेषज्ञ इसे पाचक रसों के अनुसार उचित मानते हैं। घरों में कभी कभी मीठा भात शौक से खाते हैं।

मीठा भात बनाने के लिए लोहे की कढ़ाही में चावल की माप के दुगने पानी से थोड़ा कम अन्दाज का गुड़ डालकर उबाल देना चाहिए और उसमें चावल डालकर करछी या कौंचा से हिलाते रहिए। चावल को उबलने दें। जब चावल तीन चौथाई पक जाये तो उसमें देसी घी डालें। साथ ही सूखे फल नारियल गिरी, किशमिश व सौंफ आदि भी डाल सकते हैं। घी डालने के बाद उसे पलटा कर अच्छी तरह मिलाना चाहिए, अब आंच हल्की कर इसे भपाने रख दें। बर्तन के तल पर हल्का–हल्का जल भी जाय तो अध जला पापड़ा खाने के शौकीनों की इच्छा भी पूरी हो जायेगी।

हां एक और बात ध्यान देने की है, यदि देसी घी न मिले तो रिफाइंड डाल सकते हैं, किंतु रिफाइंड चावल डालने से पूर्व खौलते पानी में डालना चाहिए या रिफाइंड को पहले गर्म कर भिगाये चावल के साथ भूनना चाहिए, ताकि रिफाइंड खाने के बाद गले में न चिपके। तैयार है मीठा भात, इसकी भीनी–भीनी मीठी खुशबू से कईयों के मुंह से लार टपकने लगती है। गर्मा–गरम परोसिये खाने में देर तो आप कर ही नहीं सकते।

चावल को भिगोकर उसका पाउडर बनाकर हलवा भी जोरदार बनता है।

पुलाव-खिचड़ी

चावल की खिचड़ी आम–खास है। सभी लोग वक्त–वेवक्त अस्वस्थ होने या कभी–कभी शौक से खिचड़ी खाते हैं। पुलाव तो सामान्य चावल का बना लेते हैं किंतु खिचड़ी का मजेदार स्वाद लेने के लिए खिचड़ी के चावल और दाल की प्रजातियां भी विविधता युक्त हैं। खिचड़ी का खास चावल है– मोटे उखड़ी, **कांगुड़ी, लठमार, कलौ, भेटकलों एवं कफल्या आदि,** ये सभी चावल मोटे हैं। इनके साथ दाल पसंद की जाती है– **नौरंगी, उड़द, राजमा, रगड़वास व लोबिया (सुंटा)**। दाल पहले खड़ी–खड़ी पकानी पड़ती है। खिचड़ी में यदि थोड़ा देसी या घर का घी डाल दिया जाय तो जोरदार स्वाद आ जाता है। लठमार के चावल सबसे चिपचिपे होते हैं, ये खिचड़ी के लिए बहुत पंसद किये जाते हैं, इनकी बिल्कुल अलग पहचान है, गेहूं की तरह गोल किंतु चपटे होते हैं। जापान और चीन में इस तरह की प्रजातियां बहुत पसन्द की जाती हैं।

हां खिचड़ी को अधिक स्वादिष्ट व आनंददायक बनाने के लिए उसके दोस्तों को कदापि न भूलें। खिचड़ी के चार यार– **दही, पापड़, घी, अचार, और पांचवा ताजा मक्खन भी शामिल कर सकते हैं।**

चावल की खीर

पारंपरिक खानपान में चावल की खीर का महत्वपूर्ण स्थान है। पितरों को तर्पण देते वक्त खीर जरूरी मानी जाती है। घरों में शौक से भी खीर बनायी जाती है। खीर के लिए लठमार एवं उखड़ी मोटे चावलों को खास माना जाता है। किंतु बासमती चावलों की खीर भी आकर्षित करती है। खीर में काजू, किशमिश व नारियल गिरी आदि भी अब डाला जाने लगा है। किंतु पुराने समय में शुद्ध दूध को ही ज्यादा प्राथमिकता दी जाती थी। ज्यादा से ज्यादा चीड़ और अखरोट के बीज की गिरी डालते थे। उसी से खीर मजेदार बनती थी।

खीर से जुड़ी सच्ची कहानी सुनिए– एक बार एक पशुपालक परिवार डांडा छानि में रहता था। छनी में बरा (राशन) कम बचा था। अचानक उसके यहां तीन–चार मेहमान टपक पड़े। राशन के नाम पर दो मुट्ठी चावल के अलावा कुछ नहीं था। मेहमानों को खाना तो खिलाना ही था। छानि में डेरा सिर्फ चौमासा यानि बरसात में पशु चराने के लिए आता था।

घर दूर था, वहां से अगले दिन ही राशन/बरा आ सकता था। पशुपालक ने चूल्हे के ऊपर खीर पकाने के लिए कढ़ाही चढ़ा दी, दो मुट्ठी चावल से उसे कतई निराशा नहीं हो रही थी। उसने चावलों के साथ खूब सारा शुद्ध दूध डाल दिया, और पकाता रहा। बांज की लकड़ी की आग थी, दूध पक कर कम होता गया। वह पुनः दूध डालता गया, और करछी से हिलाता रहा। थोड़ा सा गुड़ था, वह भी खीर में डाल दिया। जितना दूध था सब खीर में डाल दिया। तैयार खीर को सेलपाड़ा (पत्थर चट्टा) के पत्तों पर मेहमानों को परोसा। परिवार के सदस्यों सहित सबने पेट भर कर खीर खायी, फिर भी खीर बच गयी। मेहमान पहले खुशबुश करते रहे, किंतु आखिर बोल ही पड़े, "हमने अपने जीवन में इतनी स्वादिष्ट खीर कभी नहीं खायी है, ये तो बताओ आपने इसमें क्या–क्या डाला है।" पशुपालक बोला– मैंने तो सिर्फ अपने हाथ का दूहा दूध और घर का चावल डाला है, बाकी इन गाय भैसों से पूछो, इन्होंने जंगल में कौन–कौन सी जड़ी–बूटी वाला घास–चारा खाया है। इतनी बात करते–करते मेहमानों को खीर की "माच" यानी नशा जैसा होने लगा। जिस टाट–बोरे के ऊपर वे बैठे थे, उन्हें वहीं नीद आ गयी।

नमकीन खीर

खीर... भला नमकीन कैसे हो सकती है? लेकिन पहाड़ों में कई स्थानों पर नमकीन खीर बनाने का रिवाज भी है गुड़ या चीनी की जगह हल्का नमक डालते हैं। यही है नमकीन खीर।

चावल का तिलोठा

चावल और तिल से बनने वाला तिलोठा झट–पट बनने वाला पूरा खाद्य है, जो अक्सर सर्दियों में खाया जाता है। इसकी तासीर गर्म मानी जाती है। तिलोठा बनाने के लिए पहले चावल के दसवें हिस्से के बराबर तिल कढ़ाही या तवे पर फटा–फट भून कर अलग रख लें। तिल भुनने में सावधानी बरतें, तिल जलें नहीं, जले तिल कड़वे हो जाते हैं। तिल बहुत जल्दी भुन जाता है। चावल का पतीला चढ़ा दें। भुने हुए तिलों को सिल–बट्टे या मिक्सी की सहायता से पाउडर बना लें। जब चावल दो तिहाई पक जाय तो तिल का पाउडर उसमें डाल दें साथ ही नमक, मिर्च एवं मसाले भी जरूरत अनुसार डाल दें। कौंचे से इन्हें अच्छी तरह मिला

लें। गर्म मसाला डालने की जरूरत नहीं है, तिल खुद गर्म होता है। तिलोठा के बर्तन को ढक दें। आंच तेज न करें, थोड़ी देर तिलोठा का पतीला ढककर भपाने रख दें। पतीला चूल्हे से उतार कर थोड़ी इंतजारी के बाद गर्मा–गरम तिलोठा परोसें। स्वादिष्ट तिलोठा खाते–खाते मजा आयेगा। लेकिन पसीना भी बहने लगेगा। सर्दी भाग जायेगी।

घैंड

घैंड खाने का रिवाज पुराने दिनों में खूब था किन्तु अब पहाड़ी घरों में खानपान से घैंड गायब हो गयी है। घैंड एक तरह की चावल और सरसों के खल की खिचड़ी थी, जिसमें दाल की जगह सरसों का पिन्ना (खल) सीमित मात्रा में डाला जाता था। कुछ लोग चुलू का खल भी इसमें डालते थे। और स्वादानुसार नमक, मिर्च मसाला डालकर इसे चटपटा बनाते थे। चावल के खाने की यह विविधता आनंददायक होती थी। घैंड की जोरदार खुशबू आती थी, नाक में भी चिरमिरी सुंगध आती थी। आज भी आप घैंड बनाकर चावल के विविध स्वाद का मजा ले सकते हैं। लेकिन घैंड के लिए पिन्ना या खल उन दिनों घर का होता था गांव की महिलायें घर पर ही सरसों–तोड़िया व चुलू का तेल निकालती थीं, उसके पिन्ना से ही घैंड बनती थी।

गिंजड़ी

पुराने समय में सर्दियों में अक्सर घरों में कभी–कभी गिंजड़ी जरूर पकती थी, किन्तु अब आम लोगों के शब्दकोष एवं खानपान की संस्कृति से गिंजड़ी लुप्त होने के कगार पर है, जब कि सर्दियों के लिए गिंजड़ी बहुत उपयोगी है।

चावल/भट्ट की गिंजड़ी

भट्ट की दाल को साफ कर लें। लोहे की कढ़ाही या तवे को चूल्हे पर रखकर खूब गर्म करें और उसके ऊपर थोड़ा साफ छनी हुई राख बुरक कर उसमें भट्ट डालें। कपड़े की सहायता से भट्टों को हिलाते रहें। तड़–तड़ की आवाज के साथ भट्ट भुजने लगेंगे, तुरंत उतार दें। सारे भट्ट एक साथ न भूनें थोड़ा–थोड़ा यानी छोटी घान बनायें। भुने हुए भट्ट को पतीले या प्रेशर कुकर में पकायें। थोड़ी देर पकने के बाद उसमें चावल

डालें। एक किलो चावल के साथ 200 ग्राम भट्ट पर्याप्त है। कौंचा की सहायता से भट्ट एवं चावल को अच्छी तरह मिलायें और उसमें नमक, मिर्च, मसाला अन्दाज का डालें। हल्की आंच में पकायें। उतारने से पूर्व दो चार चम्मच घी यदि डाल सकें तो स्वाद और महक लाजबाब होगी। पांच–सात दालचीनी या गंदेला के पत्ते और हरा धनिया भी इसे जायकेदार बनाएगा। तैयार होने पर गरमा–गरम गिंजड़ी परोसिए। गिंजड़ी बहुत ही स्वादिष्ट व पौष्टिक होती है। खाते समय भट्ट के दाने दातों से दबने पर अलग आनन्द देते हैं।

झंगोरा/भट्ट की गिंजड़ी

झंगोरा की गिंजड़ी भी उपरोक्त तरीके से बनाई जाती है। फर्क सिर्फ इतना है कि भट्ट को पहले अच्छी तरह पकाते हैं, बाद में पानी बढ़ा कर उसमें झंगोरा डालते हैं और अच्छी तरह मिला कर पकाते हैं। उतारने से पूर्व घी डाला जाता है। तब देखें झंगोरा की गिंजड़ी का जोरदार जायका और स्वाद।

गहथ (कुलथ) की गिंजड़ी

गहथ की दाल को उबाल कर या दरदरा पीस कर उसको चावल या झंगोरा के साथ पकाया जाता है। इसे गहथ की गिंजड़ी कहते हैं। गहथ की गिंजड़ी ज्यादा गर्म होती है। सर्दियों के लिए यह बहुत उपयोगी है। नमक, मिर्च, घी इच्छानुसार डालें। गर्म मसाला वर्जित है।

गुर्दे की पथरी के लिए गहथ की गिंजड़ी रामबाण औषधि है। गिंजड़ी खाने से पथरी कभी नहीं होगी, और यदि छोटी पथरी है तो दो-चार बार गिंजड़ी खाने से ही टूट-टूट कर पेशाब के साथ बाहर निकल जायेगी।

मुसैलु

मुसैलु चावल के झटपट बनने वाले एक व्यंजन को कहते हैं। आज बहुत कम लोग मुसैलु बनाते हैं। मुसैलु में खिचड़ी या पुलाव की तरह दाल/सब्जियां कुछ भी नहीं डालते हैं। थोड़ी देर पहले चावलों को पानी में

भिगो देना चाहिए। लोहे की कढ़ाही या पतीला चूल्हे की आंच में रख कर उसमें घी/तेल डाल कर गर्म करते हैं, और छौकण/तड़के के लिए थोड़े ज्यादा मात्रा में जख्या/राई आदि डालते हैं, और चटपट भिगोये चावल उसमें छौंक देते हैं, साथ में नमक, मिर्च, हल्दी व हल्के मसाले डाल कर हल्के से अलट–पलट कर अन्दाज का पानी डाल कर हल्की आंच में पकाते हैं। इसी व्यंजन को कहते हैं मुसैलु। चावल की तासीर ठंडी होती है किंतु मुसैलु की तासीर बदल कर गर्म होनी स्वाभाविक है। आप भी बनाइए मुसैलु, देखिए खाने में कितना मजा आता है। न सादा भात, न खिचड़ी न पुलाव बिल्कुल अलग स्वाद वाला व्यंजन है मुसैलु।

चौल्वाणी (चावल का साग)

चौल्वाणी यानी चावल का साग बनाने की परंपरा अब भी गांवों में कहीं–कहीं बची हुई है। कुछ लोगों के लिए मजबूरी में यह साग जरूरी है तो कुछ लोग बड़े शौक से आज भी चौल्वाणी बनाते हैं। भात के साथ चावल का ही साग, है न मजेदार खाने पीने की परंपरा, आज के नए अंदाज में इसे चावल का शोरबा भी कह सकते हैं।

चौल्वाणी बनाने के लिए 5–7 लोगों के लिए 100–150 ग्राम चावल पानी में अच्छी तरह भीगने के लिए रख दें। एक दो घंटे के बाद जब चावल भीगकर फूल जाय तो हल्के पानी के साथ इन चावलों को सिल–बट्टे से पीस दें। मिक्सी में भी पीस सकते हैं। जब यह पिट्ठी तैयार हो जाय तो इसके साथ पानी मिलाकर अन्दाज से नमक, मिर्च, मसाला मिला दें, लोहे की कढ़ाही को चूल्हे पर चढ़ाकर गर्म करें, घी, तेल या रिफाइन्ड डालकर जख्या, प्याज लहसुन गंदेला की पत्तियां या धनिया की हरी पत्तियों का तड़का डालें और छौंक दें। करछी चलाते रहें, अच्छी तरह मिलाने के बाद अन्दाज का पानी डाल दें। ध्यान रहे कि पानी इतना डालें कि दोबारा पानी न डालना पड़े नहीं तो इसके स्वाद का मजा कम हो जाता है। सावधानी इतनी भी रखनी पड़ती है कि शुरू में यह पतला लगता है किंतु एक–दो उबाल के बाद गाढ़ा होने लगता है और कढ़ाही के तल पर चिपकने लगता है, इसलिए करछी बार–बार चलानी पड़ती है। आंच एक समान रखें। 20–25 मिनट में ही चौल्वाणी पक कर तैयार हो जायेगा। चौल्वाणी उतारने से पहले उसमें हरा धनिया और खट्टे के लिए नीबू या थोड़ा सा दही या छांछ/तुरसै डालेंगे तो चौल्वाणी और भी स्वादिष्ट बनेगा।

गर्मा गर्म चौल्वाणी भात, झंगोरा व रोटी के साथ परोसें खाने में मजा आयेगा। इसमें आप घी डाल सकते हैं, यदि आप चौल्वाणी किसी नये व्यक्ति को खिलाने के बाद या खिलाते समय पूछेंगे कि वह कौन सा साग खा रहे हैं, तो वह कढ़ी से आगे नहीं बढ़ेगा किन्तु इसमें कढ़ी के बेसन जैसा स्वाद तो है नहीं। यह अलग तरह का स्वाद होता है और यदि चावल अच्छी प्रजाति के हैं तो खाने वाले उंगली चाटते रह जायेंगे।

मांड का मजा

मांड का स्वाद एक बार किसी ने चख लिया तो वह मांड का मुरीद बन जाता है। प्रेशर कुकर आने से पूर्व जब डेगची या पतीले में चावल पकते थे तो मांड जरूर पसाते थे। खास चावल का खास मांड होता था। उखड़ी (असिंचित) खुशबूदार चावल या बासमती जैसे चावलों का मांड लाजवाब होता था। च्वाटू, कफल्या या कलौ प्रजाति के चावल का मांड हो तो कहना ही क्या? बड़े–बड़े त्यौहार जैसे उत्सव की अनुभूति होती थी। यह मांड इतना गाढ़ा होता था कि ठंडा होने पर थाली में जम जाता था। जिसे छुरी से छोटे–छोटे टुकड़ों में काटा जा सकता था। मांड को गर्मागर्म गुड़ या चीनी के साथ पीने में मजा आता था। कुछ लोग मांड के इतने दीवाने होते थे कि उन्हें मांड का नशा जैसा अनुभव होता था। बच्चों में मांड को लेकर घर में झगड़ा होता था।

मांड के शौकीन की एक कहानी– एक घर का मुखिया मांड का बहुत शौकीन था। उसकी जोरदार खुराक मांड ही था। एक बार वह एक पंचायत में बैठा हुआ था। घर में पत्नी ने भात पकाया तो पति की मांड की खुराक का ख्याल आया। वह सोचने लगी यदि बैठक के बीच में पति के लिए मांड ले जाती हूं तो लोग मजाक उड़ायेंगे और मांड कहकर घर में बुलाती हूं तो बेइज्जती होती है, और यदि पति को मांड न दूं तो पति नाराज होंगे। वह करे तो क्या करे? झट से उसे ख्याल आया और पंचायत के सम्मुख जाकर धड़ल्ले से बोली, "सौणू के बाबा जी घर में धानशाही का भाई मानशाही आया है, आते हो तो आओ, नहीं तो वह शीतलपुर को जा रहा है।" पति भी कम होशियार नही था जैसे सुना फट से पत्नी की बात समझ गया और चला आया घर। धानशाही के भाई मानशाही – मांड का गर्मा–गर्म आनंद लिया और चल दिया फिर बैठक में।

सचमुच मांड में गुड़ या चीनी मिलाकर पिएं तो ज्यादा मजा आता है और हां अगर नमकीन पीना चाहते हैं तो धनिया, लहसुन वाले नमक डालकर गर्मागर्म पिएं। लेकिन इस स्वाद में बहुत गुण और पौष्टिकता भी है इसमें स्टार्च और विटामिनों की भरमार भी है। किंतु, पहले मांड पीने या मणझोळी के लिए निकालते थे, फेंकने के लिए नहीं, किंतु आज के चावलों में मांड नहीं और यदि निकाला भी तो फेंक देते हैं, जो गलत है।

मांड औषधि भी है

सामान्य पेचिश, मरोड़ व आंव के लिए मांड रामबाण औषधि है। एक चौड़े कटोरे या डोंगे में गर्मा–गरम मांड निकालें और उसमें गुड़, मिश्री व थोड़ा सा शुद्ध घर का देसी घी मिलाकर इस तरह ढकें ताकि भाप की बूंदें उसी बर्तन में गिरें बाहर बिल्कुल न गिरें। जब मांड ठंडा होने के अंतिम पड़ाव पर यानी थोड़ा नम हो तो ढक्कन हठा दें। आप देखेंगे ढक्कन से मांड के कटोरे में पानी की बूदें टपक रही होती हैं। इस मांड को रोगी को पिलाएं। दो–तीन दिन तक इस तरह का मांड पिलायेंगे तो पेचिश व आंव बिल्कुल ठीक हो जायेगा।

जच्चा बच्चा के लिए अमृत समान है मांड

यदि प्रसूति के बाद मां के स्तनों में दूध कम आता है तो बच्चे की प्राण रक्षा के लिए मां व परिवार की चिंता बढ़ जाती है, इस चिन्ता को दूर करने के लिए विज्ञापनों से दूर पारंपरिक ज्ञान महत्वपूर्ण धरोहर है। मां का दूध बढ़ाने के लिए सभी तरह के लाल चावल, उखड़ी (असिंचित)/ चावल व बासमती चावल के भात में ज्यादा पानी डालकर देर तक मांड की शक्ल में पकाया जाता है, और इसमें घी और गुड़ डाल कर मां को खिलाया जाता है। यदि बार–बार मीठा पसंद नहीं, तो मूंग की पतली खिचड़ी बनाकर खिलायी जाती है, निःसंदेह मां के स्तनों से दूध निकलने लगता है, और धीरे–धीरे बढ़ने लगता है। सामान्य बच्चे के लिए **अन्न प्राशणन** में भात खिलाया जाता है। इतना ही नहीं यदि मां का दूध बिल्कुल नहीं है तो बाहरी दूध के अलावा कई बार जच्चा को मांड पिलाने की परंपरा भी है।

और चावल दवा भी है

- **प्रसूति व गर्भाशय संबंधी रोगों में चावल की साठी, कफल्या, कलों व चवारिया प्रजातियों का भात व पीठी जोरदार औषधि है। जोड़ों के दर्द एवं टूटी हड्डी जोड़ने के लिए साठी का भात बहुत उपयोगी है।**
- **साठी चावल का भात गठिया रोग की औषधि है।**
- **लाल चावलों में विटामिन ए प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। बहुराष्ट्रीय कंपनी मोन्सेंटो के गोल्डन राइस के झांसे में न आयें। विटामिन ए आंखों की ज्योति ठीक रखता है। लाल चावल व ब्राउन चावल खाइए और रतौंधी जैसी बीमारी दूर भगाइए।**

मांड का साग मंडवाणी

मांड का साग या मंडवाणी बनाने के लिए मांड की जरूरत पड़ती है। मांड के लिए उखड़ी लाल चावल व पारंपरिक प्रजाति के चावलों को पकाइए। चावल में पानी का अनुपात सामान्य से थोड़े ज्यादा रखें, पकाने का बर्तन पतीला या डेगची उत्तम है। चावल डालने के बाद बीच में कौंचा व पलटा से हिलाते रहें ताकि चावल बर्तन के तल में न चिपके, जब चावल तीन चौथाई से ज्यादा पक जाय और भात के ऊपर मांड दिखाई देने लगे, यदि मांड बहुत कम है तो थोड़ा और पानी डालिए और उबाल आने के तुरंत बाद बर्तन के ढक्कन की सहायता से चावल रोक कर थाली या किसी बर्तन में मांड पसा दें। पतीले को दोनों हाथों से हिलाकर चावलों को बराबर कर चावल भपाने के लिए हल्की आंच में चूल्हे पर रख दें।

मांड का साग बनाने के लिए लोहे की कढ़ाही चूल्हे पर रखें। घी/सरसों का तेल डालकर उसमें जख्या, प्याज, लहसुन व गंदेला की पत्तियों का तड़का डालें। हरा धनिया हरी लहसुन के पत्ते खास हैं, दो–चार चेरी (छोटे) टमाटर व जरूरत अनुसार नमक मिर्च व हल्का मसाला भी भूनिए। थोड़ा सा गर्मागर्म भात भी उसके साथ तड़कें और खूब मिलाकर उसमें मांड छौंक दें। करछी से अच्छी तरह मिलाते रहें, जरूरत अनुसार उसमें गरम पानी डालें। साग न ज्यादा गाढ़ा हो न ज्यादा पतला किंतु बाद में पानी न डालें। पकने में ज्यादा देर नहीं लगेगी। लो तैयार है मांड का मंडवाणी या मांड का साग। मंडवाणी की भीनी–भीनी खुशबू से मुंह में

पानी आने लगता है। हरा धनिया डालना न भूलें। गर्मागर्म मांड का साग और भात परोसिए। मेहमानों को खिलाने में शर्म न समझें।

मांड–भात खाने वाला यदि कोई नया–नया व्यक्ति है तो वह इसे चखकर आनंदित हो उठेगा। वह कहेगा इतना स्वादिष्ट यह शोरबा आखिर है क्या? मन में यह भी सवाल आयेगा कहीं यह मीट का शोरबा तो नहीं? पर इसमें तो मीट का टुकड़ा भी नहीं, वह बार–बार पूछेगा और जब आप उसे सच्चाई बतायेंगे तो आखिर वह आश्चर्यचकित तो होगा ही किंतु मांड के साग का स्वाद कभी नहीं भूलेगा। किंतु इसमें सिर्फ स्वाद ही नहीं अपितु पौष्टिकता भी तो है। सच में मीट के शोरबे से कम नहीं।

मुझे आज भी याद है मांड का स्वाद... 35 साल पूर्व एक दिन मैं अपनी पत्नी कमला के साथ डांडा जा रहा था, तब हमारी नई–नई शादी हुई थी। रास्ते में जंगल के बीच हम एक घर में पानी पीने के लिए रुके, घर में उखड़ी चावलों के पकने की भीनी–भीनी खुशबू आ रही थी। हमें प्यास लगी थी। घर की मुखिया श्रीमती इन्द्र देई ने हमें पानी पिलाया। हम चलने लगे तो वह बोली बैठो...बैठो कुछ खाकर जाओ... भूख लगी होगी। लम्बी चढ़ाई चढ़ने के बाद सचमुच भूख लग रही थी और उखड़ी चावलों की खुशबू हवा में बहने के कारण मेरा मन खाने के लिए तो मचलने लगा। हमें जल्दी वे क्या खिलाती दाल–सब्जी बनाने का वक्त तो था नहीं, उन्होंने भात का मांड पसाया। कढ़ाही चूल्हे पर रखी थोड़ा मक्खन डाला जख्या का तड़का लगाकर मांड छौंका और ऊपर से नमक मिर्च डाल दिया। सग्वाड़े में गयी और वहां से हरा धनिया और दो चार लहसुन के पत्ते मांड के साग में डाल दिये। कुछ मिनट में ही उन्होंने हमें खाना परोस दिया। हमने उस दिन प्रेम से जो मांड का साग और भात खाया था उसका स्वाद और जायका आज तक नहीं भूले हैं।

चावल/भात तो आप रोज खाते हैं पर बाजार व सरकारी गल्ला के चावल को पकाकर यदि मांड निकालना चाहते है तो उसमें मांड है ही नहीं। चाहे आप उसे देर तक ही क्यों न पका लें। उसमें आखिर तक दुर्गंध जैसा पानी ही निकलेगा। यह सिर्फ पेट भराऊ भात है। जब मांड ही नहीं तो स्टार्च एवं अन्य खनिज विटामिन भी उसमें बहुत कम हैं। और यदि धान की कथित उन्नत प्रजातियों का भात भी आप पकाते हैं तो उनमें भी गाढ़ा मांड नहीं निकलता और यदि थोड़ा–बहुत मांड निकाले भी, तो

उसमें वह स्वाद नहीं है। यह बात साफ है कि कथित उन्नत हाईब्रिड चावल के भात में पौष्टिक तत्व बहुत कम हैं, और यदि वह ज्यादा रासायनिक खादों एवं कीटनाशक जहरों से उत्पादित है और मिल में कूटा गया है तो वह सिर्फ पेट भरने मात्र के लिए है। **ओखली का कुटा चावल ही ज्यादा पौष्टिक और गुणकारी है।**

एक्वांण्या

चावल को लोहे की कढ़ाही में ज्यादा पानी के साथ बहुत देर तब तक पकाया जाता है जब तक वह खूब लसपसा न हो जाय। इसे एक्वांण्या कहते हैं। एक्वांण्या को लहसून नमक के साथ मजे में खाते हैं। प्रसूता महिलाओं एवं जच्चा–बच्चा के लिए यह दूध बढ़ाता है।

पिंडालू (अरबी) की खीर

जौनसार बाबर में पिंडालू को उबालकर, छिलके निकालकर, करछी से अच्छी तरह घोट कर, दूध मिला कर खीर बनाते हैं, मीठे के लिए गुड़ या चीनी मिलायी जाती है। देर तक पकाने पर जोरदार स्वादिष्ट खीर बनती है।

नमक की विविधता

नमक को उत्तराखण्ड में 'लोण' कहते हैं। नमक तो नमकीन ही होता है भला उसमें विविधता की क्या बात है? ज्यादा से ज्यादा सादा समुद्री नमक, हिमालयी सेंधा नमक और काला नमक। भारत में पांच तरह के प्राकृतिक नमक पाये जाते हैं। लेकिन खानपान के शौकीन उत्तराखण्ड के लोगों ने एक ही सादे नमक को विविध स्वाद एवं जायके में बदल दिया है। अलग–अलग वनस्पति एवं जड़ी–बूटियों को मिश्रित कर कई तरह के नमक बनाये जाते हैं। यह नमक पाचन शक्ति ठीक रखता है, भूख बढ़ाता है और खाने में आनन्द देता है। खाने वाले लोग खूब चटकारे लेते हैं। ज्यादा प्रचलन में समुद्री नमक है, क्योंकि आजादी के बाद हिमालय पर्वत का सिंध या सिन्धु नमक का बड़ा हिस्सा पाकिस्तान में चला गया। सेंधा नमक सबसे शुद्ध है, आज भी यह नमक हमारे बाजारों में आ ही जाता है, किंतु बहुत महंगा है। खाना–पीना जो भी किसी को खिलायें या खायें, किन्तु खाकर धोखा देना, नमक हलाली ही कहा जाता है।

मोरा नमक

मोरा (मरवा–मोरवा) तुलसी के पौधे की शकल का पौधा है। इसकी पत्तियां एवं तना जोरदार खुशबू देता है। सादे नमक के साथ इसकी खुशबूदार पत्तियों को सिल–बट्टे में पीसें तो हरा नमक तैयार हो जाता है। यह हरा नमक जोरदार स्वाद में बदल जाता है। चखने पर मन करता है कि इसे खाते जाएं। सलाद व काखड़ी–खीरे को और अधिक जायकेदार बनाता है और यदि दो–चार हरी मिर्च मिला दें तो और भी चटखारेदार। मोरा नमक के साथ मजे से कोदा व गेहूं की रोटी खा सकते हैं। दही, मट्ठा रैला और मणझोळी को यह जोरदार स्वाद और खुशबू में बदल देता है।

इसी तरह से आप बना सकते हैं विविध रंग, स्वाद एवं गुणों वाला नमक–

1. हरे धनिया का नमक

2. लहसुन की फलियों और लहसुन के हरे पत्तों वाला नमक

3. अदरख नमक
4. हरी मिर्च वाला नमक
5. भुड़की मिर्च का नमक
6. पुदीना नमक
7. जम्बू-चोरा नमक
8. राई नमक
9. जीरा नमक
10. अलसी नमक (अलसी को भूनकर नमक के साथ पीसा जाता है)
11. राई व जीरा के बीज को भूनकर उसको नमक के साथ सिल-बट्टे से पीसें, यह नमक भी जोरदार होता है।

उपरोक्त सभी नमक इतने स्वादिष्ट होते हैं कि दाल–सब्जी के अभाव में नमक के साथ रोटी खायी जा सकती है। ऊपर से थोड़ा पानी और चाय।

छौंक/तड़का की महक

तड़का या छौंक खानपान का शृंगार है। इससे खाने में जायका आता है। दाल–सब्जी एवं अन्य खाद्यों के तड़के से पता चल जाता है कि किस चीज का छौंक लगा है। **प्रचलित छौंक हैं- जख्या, फरण, गंदरैण, लाल मिर्च, जीरा, राई, चमसूर, मेथी, धनिया, प्याज, लहसुन, हींग, काली जीरी एवं अदरख आदि।** छौंक, तड़का या फ्राय करने से खानपान की तासीर भी बदल जाती है। खाना स्वादिष्ट के साथ–साथ पौष्टिक व पाचक भी बन जाता है।

उत्तराखण्ड में खानपान के शौकीनों ने अलग–अलग भोज्य पदार्थों के लिए अलग–अलग तड़का स्वादानुसार ढूंढ़ा है और उसको खाने की विविधता में शामिल किया है।

जख्या का पौधा

1. जख्या को हिन्दी में हुलहुल कहते हैं। देश के कई हिस्सों में यह पैदा होता है लेकिन तड़के में इसके बीजों का उपयोग उत्तराखण्ड के लोगों ने सदियों पूर्व ढूंढ़ लिया था। अब यह तड़का पूरे देश में महक फैला रहा है।

सूखे आलू, अरबी, तल्ड, हरी सब्जी, कढ़ी, मणझोळी, मट्ठा, कद्दू, तोरी एवं चचिंडा आदि

की सब्जी में जख्या का तड़का सबसे अच्छा लगता है। इन भोज्य पदार्थों में जब जख्या का तड़का लगता है तो निःसंदेह खानपान का स्वाद ज्यादा मजेदार हो जाता है। खाते समय भुने हुए जख्या के दानों की कुर्र...कुर्र की आवाज आती है। दांतों में कहीं यदि जख्या का दाना भी फंस जाय तो बाद में भी जोरदार महक की अनुभूति होती है। **यह पेट के कीड़ों की औषधि भी है।** उड़द की दाल के पकोड़ों में जख्या का छुपका मशहूर है।

2. फरण, गंदरैण जम्मू– दही, मट्ठा, मणझोळी, अरहर व मलका की दाल आदि में इन चीजों का तड़का चार चांद लगा देता है। यह पाचन शक्ति बढ़ाता है और कफ़ कम करता है। ऊंचाई वाले जंगलों में मुख्यतः ये जड़ी–बूटियां मिलती हैं। औषधिय गुणों से भरपूर यह तड़का भूख भी बढ़ाता है।

3. मेथी– कद्दू की सब्जी, झोळी एवं कढ़ी में इसका खास जायका है। भूनते समय सावधानी जरूरी है, जलने न दें वरना कड़वा लगेगा।

4. हींग– कंडाली की कापिली, अरबी (पिंडालू), पालक की कापिली मट्ठा, मणझोळी, दही राजमा एवं उड़द की दाल में बहुत उपयोगी है।

5. धनिया-जीरा– सभी तरह की दालों एवं साग–भुजी में सामान्य रूप से धनिया का तड़का लगाया जाता है।

6. काली जीरी- तड़का ही नहीं डायबिटीज़ की दवा भी– ठीक जीरे जैसा, रंग काला लेकिन पौधा बिल्कुल अलग। खाने में इतना कड़वा कि आप एक–दो दाने मुंह में रखेंगे तो थूके बिना नहीं रहेंगे। किंतु अगर इसी काली जीरी का छौंक आप उड़द की दाल व पिंडालू (अरबी) में लगायेंगे तो दाल सब्जी कड़वी नहीं होगी बल्कि उसका स्वाद बढ़ जायेगा। इतना ही नहीं उड़द की दाल में काली जीरी का पाउडर भी डाल सकते हैं। पुराने समय में उड़द की दाल में काली जीरी जरूर डालते थे। काली जीरी से न सिर्फ स्वाद बढ़ता है अपितु भारी दालों का वादीपन भी दूर होता है। इसलिए भारी दालों में काली जीरी का तड़का व मसाला फायदेमंद है। किंतु मात्रा कम रखें, अरहर व मसूर में न डालें वरना दाल कड़वी हो जायेगी। **काली जीरी औषधिय गुणों से भरपूर है। यह बुखार, पीलिया, पेट के कीड़े एवं मधुमेह (डायबिटीज़) की रामबाण औषधि है। दवा के लिए काली जीरी का पाउडर पानी में उबालें, जब पानी आधे से कम रह जाय तो उसे ठंडा होने पर रोगी को पिलायें, जरूर फायदा होगा।**

डायबिटीज़ में लम्बे समय तक उक्त तरीके से खाली पेट काली जीरी का हल्का गर्म पानी पीना चाहिए।

7. गंदेला (कढ़ी पत्ता)– गंदेला की पत्तियों का तड़का, झोळी, मणझोळी कढ़ी, कद्दू की सब्जी व अरहर की दाल का खास तड़का है। स्वाद बढ़ता है, और पौष्टिकता से भरपूर है।

पहाड़ी मसाले

1. पहाड़ी धनिया– छोटे आकार का हरा–पीला दाना, खूब खुशबू और जायकेदार। सामान्य धनिया से बिल्कुल अलग।

2. बड़ी इलायची– जल स्रोत व नमी वाले स्थानों में पैदा होती है। यह अधिक स्वाद एवं खुशबू देती है।

3. लहसुन– लहसुन की अनेक प्रजातियां है, पहाड़ी लहसुन औषधिय गुणों से भरपूर होता है।

4. प्याज– प्याज को फसल के वक्त हरी एवं सामान्य सब्जी की तरह भी खाते हैं और मसाले में तो उपयोग होता ही है। पहाड़ी प्याज बहुत पिर–पिरे होते हैं। काटते वक्त खूब आंसू बहने लगते हैं।

5. हल्दी– पहाड़ी हल्दी पतली गांठ वाली, औषधिय गुणों के लिए ज्यादा प्रसिद्ध है। अस्थमा, खांसी, बुखार, चोट के लिए बहुत उपयोगी है। तेज महक दूर से ही पता चलती है। खाने में बहुत स्वादिष्ट।

6. अदरख– पहाड़ी अदरख रेशेदार व खूब रसदार, टिकाऊ और अच्छी खुशबू व अच्छा स्वाद। कम डाला जाता है।

7. दालचीनी– पहाड़ में दर्जनों तरह की दालचीनी के पेड़ खेतों एवं जंगलों में पाये जाते हैं। अच्छी महक और गुणों से भरपूर दालचीनी के सूखे व हरे पत्ते भी उपयोगी है। छाल नहीं निकालनी चाहिए इससे पेड़ मर जाता है। दालचीनी के पत्तों की जोरदार चाय भी बनती है। दालचीनी के पत्तों को ही बाजार में तेजपत्ते के नाम से जाना जाता है।

8. टिमरू के बीज– टिमरू के बीजों को भी गर्म मसाले के रूप में इस्तेमाल करते है। यह जैविक कीटनाशक भी है।

9. भांग के बीज– भांग के मोटे बीज सर्दियों के लिए गर्म मसाले और चटणी के काम आते हैं। तड़का लगा सकते हैं।

10. पहाड़ी मिर्च– पहाड़ी मसालों में मिर्च का महत्वपूर्ण स्थान है। पहाड़ी मिर्च खूबसूरत चमकदार लाल रंग बिखेरती है, न बहुत तीखी न बहुत फीकी। भूनी या भूटी मिर्च हरे साग कापिली, पत्युड़ व भड्ड की बनी दाल का शृंगार है। हरी मिर्च सामान्य दाल सब्जी में इस्तेमाल होती है। पहाड़ी मिर्च भूनने पर जोरदर खुशबू देती है।

नोट– छौंक/तड़का भी मसाले में शामिल है। इस तरह लगभग 20–25 तरह के मसाले पहाड़ में उगाये और खाये जाते हैं।

आलण

आलण का पहाड़ी खानपान की पाक विधि में महत्वपूर्ण स्थान है। यह आड़े वक्त साग सब्जियों का पूरक भी है। जब घर में दाल पककर तैयार हो रही हो और मेहमान आ जाय तो फटाफट उसमें बेसन का घोल डाल दें, लेकिन यदि बेसन नहीं तो आटे का घोल बनाकर अच्छी तरह पकाइए और परोसिए खाने वाला चटकारे लेकर खायेगा।

और हां, हरी सब्जियों की कापिली एवं आलू के थिच्वाणी में आलण पूरक का काम करता है। यदि आप अंदाज का आलण डालकर उसे ठीक–ठाक पका लें, तो कोई भी यह नहीं कह सकता कि इसमें कोई दूसरी चीज भी डाली है। लेकिन आलण कच्चा रहने पर स्वाद बिगाड़ सकता है, इसलिए इसे कम डालें और खूब पकायें। पकने पर आलण का अपना स्वाद उस व्यंजन में बदल जायेगा जो आपने पकाया है। उदाहरण के लिए कंडाली, पालक, खोल्या एवं राई आदि की कापिली में आलण डाला जाता है। आलू के थिच्वाणी में भी आलण जरूरी माना जाता है। आलण मुख्यतः आटा, बेसन का घोल एवं चावल, झंगोरा को भिगो कर उसे सिल–बट्टे से पीसकर बनाया जाता है। चावल के कणका एवं झंगरियाल का आलण ज्यादा अच्छा होता है।

घर की दाल मुर्गी बराबर
दालों की विविधता

घर की दाल मुर्गी बराबर नई कहावत कहनी चाहिए– सचमुच पहाड़ी राजमा की दाल तो मुर्गी से भी बढ़कर है। जो लोग राजमा की दाल खाते हैं वे मीट के बराबर प्रोटीन व अन्य खनिज–विटामिन प्राप्त कर लेते हैं। रेशा अलग से मिलता है। दालें एक तरह से शाकाहारी मीट है। दालों के माध्यम से हिंसा को रोका जा सकता है। सिर्फ पशु हिंसा ही नहीं अपितु जमीन की हिंसा भी इनसे रुकती है, क्योंकि दालों को किसी तरह की रासायनिक खादों की जरूरत नहीं पड़ती, उल्टे दालें अपनी जड़ों और पत्तियों के माध्यम से जमीन को पोषक तत्व ही देती हैं।

पहाड़ में लोगों के दोपहर के भोजन में ज्यादातर दाल खायी जाती है। दाल–भात के बिना भोजन की तृप्ति नहीं होती। दालों में भी जोरदार विविधता है। उत्तराखण्ड में दालों की विविधता इस प्रकार है–

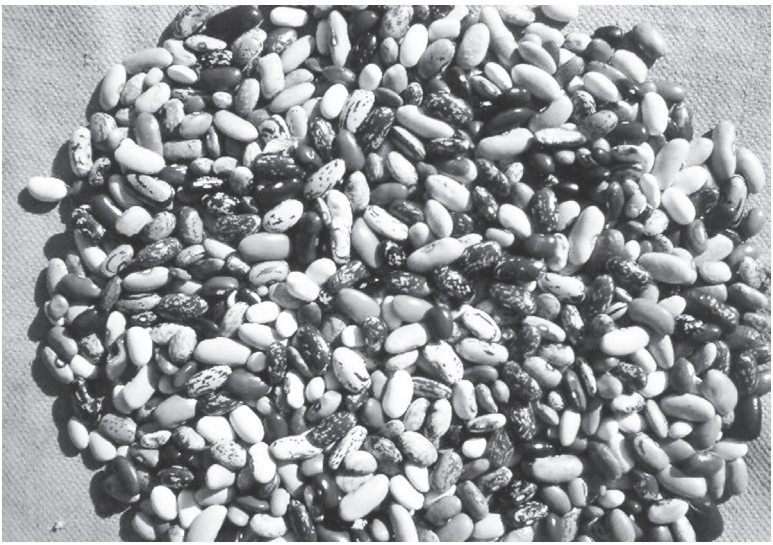

1. राजमा पौधों एवं रंग-रूप के आधार पर 220 के लगभग किस्में अब तक खोजी जा सकी हैं। 2. उड़द की दो–तीन किस्में हैं, लेकिन जौनसार में सफेद उड़द की भी चर्चा है। 3. मसूर, 4. तोर, 5. गहथ (कुलथ), 6. भट्ट, 7. नौरंगी, 8. लोबिया (सुंटा), 9. रगड़वांस, 10. गुरूंश, 11. मूंग, 12. मटर, 13. घाल्डा (मटर की प्रजाति), 14. चना। इन दालों की कई अलग–अलग प्रजातियां हैं।

लगभग 260 से भी अधिक तरह की दालों की विविधता अलग-अलग ऊंचाई एवं घाटियों में देखी जा सकती है।

राजमा की बेल वाली किस्में अक्सर मिश्रित रूप से उगायी जाती हैं, और दर्जनों प्रजातियां एक साथ विविध रंगों में खायी भी जाती हैं। इन सबका स्वाद मिलता जुलता है। हर एक सीजन में नई दाल की महक व स्वाद जीभ का आनन्द ही नहीं अपितु आरोग्य की सही दिशा है।

राजमा की दाल

राजमा को उत्तराखण्ड में छेमी के नाम से भी जाना जाता है। हर्षिल, जोशीमठ, चकराता एवं मुंस्यारी की राजमा प्रसिद्ध है लेकिन पूरे देश में चकराता राजमा सर्वोत्तम मानी जा सकती है। हालांकि बाजार में जम्मू की राजमा की ज्यादा पहचान है। हर एक विशेष उत्सव के अवसर पर राजमा की दाल जरूर बनायी जाती है। राजमा की दाल अक्सर घरों में भी बनायी जाती है। सभी तरह की पहाड़ी राजमा आसानी से गलने वाली व स्वाद में उत्तम होती है। इसको बनाने के तौर–तरीके सब लोग जानते हैं। घरों में अक्सर राजमा की दाल और बासमती या अन्य भात को लोग बड़े चाव से खाते हैं। जायके के लिए घी का इस्तेमाल करते हैं। राजमा को मिश्रित दाल के रूप में भी खाया जाता है। पौष्टिकता में भरपूर राजमा प्रोटीन व रेशे का बड़ा स्रोत है। राजमा की तासीर ठंडी मानी जाती है इसलिए, लहसुन, प्याज एवं गर्म मसाले इस्तेमाल करते हैं, या अन्य दाल के साथ में खाते हैं।

तोर की दाल

तोर की पहचान विशेष दाल के रूप में होती है। पहाड़ में मुख्यतः गर्म घाटियों में तोर अच्छी होती है। ऊंचाई में रहने वाले लोग सर्दियों के लिए पहले से तोर का प्रबंध कर लेते हैं। तोर अरहर की एक प्रजाति है,

किंतु मैदानी अरहर से यह बिल्कुल भिन्न है। पहाड़ी तोर का दाना थोड़ा छोटा होता है। रंग हरा–भूरा और स्वाद में पहाड़ी तोर मैदानी अरहर की अपेक्षा बहुत अच्छी होती है। तोर को साबुत दाल के रूप में ही खाया जाता है, तोर पकने में भी ज्यादा समय नहीं लेती है। दाल सामान्य तरीके से बनायी जाती है किंतु भड्डू में ठंडी आंच में पकाये जाने पर तोर की दाल ज्यादा स्वादिष्ट होती है। चूल्हे से दाल उतारते समय थोड़ा सा घी हो जाय तो खाने में और अधिक स्वाद और जायका आ जाता है। **तोर को खूब घोट-घोट कर शोरबा या सूप बनाकर पीने में मजा आता है और सर्दी दूर भाग जाती है। तोर की दाल को राजमा, उड़द एवं अन्य दालों के साथ मिश्रित भी बना सकते हैं। पौष्टिकता में भी तोर प्रोटीन व रेशे से भरपूर है।**

उड़द दाल

उड़द की दाल पहाड़ की एक और मशहूर दाल है। एक जमाने में देहरादून में माजरा की बासमती एवं रानी पोखरी की उड़द की दाल प्रसिद्ध थी। लेकिन वहां अब बहुमजिंले कंकरीट के "जंगल" उगने से इन प्रजातियों पर संकट आ गया है। उड़द की दाल उत्तराखण्ड की संस्कृति में दाल से लेकर पकोड़ा एवं पूजापाठ तक बड़ा महत्व रखती है। उड़द की दाल के साथ घर्या घी का जोरदार जायका आता है। काला जीरा और अदरख इसका खास मसाला है। माघ महीने की संक्राति को खिचड़ी संक्राति कहते हैं। उस दिन उड़द की दाल और चावल की खिचड़ी जरूर पकायी जाती है। इसे खिचड़ी संक्रात के रूप में मनाया जाता है। उड़द की दाल के साथ चावल मिलाकर खिचड़ी का दान भी दिया जाता है।

सबसे सुपाच्य 9 रंगी दाल

विविध आकर्षक 9 रंगों में उगने वाली, नौरंगी की दाल की बनावट पर यदि नजर डालें तो यह 12–13 किस्मों में दिखायी देगी। इसे रैस, रैयांस, तित्रया दाल व झिलंगा आदि कई नामों से जाना जाता है।

अंग्रेजी में इसे राइसबीन कहते हैं। पहले दोयम दर्जे की दाल समझ कर इसका उपहास भी उड़ाते थे। **शादी व अन्य उत्सवों में नौरंगी की दाल नहीं खिलाते हैं। किंतु नौरंगी दाल की पोषण की सच्चाई यदि देखें तो यह उड़द और मूंग से भी बेहतर है। इसमें अच्छा प्रोटीन पाया जाता है, साथ ही राजमा, उड़द व मूंग की अपेक्षा अधिक रेशा भी मिलता है। अमीनोअम्ल, ट्रिप्टोफेट तथा मिथायलीन की मात्रा भी अधिक पायी जाती है।** गरीबों की यह प्रमुख दाल है। **नौरंगी में यलो मौजैक वायरस** से लड़ने की विलक्षण क्षमता है।

नौरंगी दाल खाने से गैस नहीं बनती, यह सबसे हल्की दाल है, आसानी से हजम होती है। अलग जोरदार स्वाद वाली यह दाल झंगोरा और भात के साथ मजेदार लगती है। इसका सूप जोरदार होता है। मिश्रित दाल के रूप में भी अच्छी लगती है। इससे परांठे व भरवा रोटी लज़ीज़ बनते हैं। सामान्य दाल की तरह बनायी जाती है। मसाले व हल्दी ज्यादा खपाती है। परांठों के लिए पेज 64 देखिए।

तुरसै

दाल–सब्जी में जब मिर्च–मसाला या नमक ज्यादा हो जाता है तो खाने वालों को मन मार के खाने की नौबत आ जाती है। खाने के साथ थोड़ा–थोड़ा तुरसै डालें। आप मजे–मजे में पूरा खाना खा लेंगे। पुराने लोग खाते समय तुरसै जरूर मांगते थे। गर्मियों में तो यह ज्यादा जरूरी लगती थी, पर यह तुरसै कौन सा व्यंजन है? तुरसै दही, या मट्ठे के खट्टे पानी को कहते हैं। यदि दही–मट्ठा कम है और ज्यादा खट्टी है, तो उसमें थोड़ा ताजा पानी मिलाकर 'तोड़–तोड़' कर इस्तेमाल करते हैं। तुरसै के साथ खाना मजे से खाया जाता है। अचार व चटणी की जरूरत भी नहीं पड़ती।

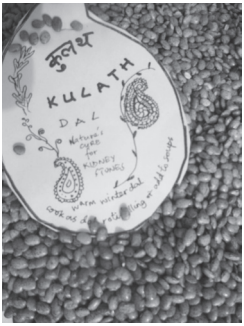

गहथ (कुलथ)

गहथ पहाड़ की औषधि वाली प्रमुख दाल है। गहथ से गथ्वाणी (गहथ की दाल), फाँणु, पटुंगी, कच्चे गहथ की भरवा रोटी/परांठे गहथ की खिचड़ी, गिंजड़ी एवं अन्य कई व्यंजन बनते हैं।

गथ्वाणी

"बरखा बत्वाणी, चौमासा की दही-मट्ठा–ह्यिुंद कु गथ्वाणी" चातुर्मास या वर्षात में दही मट्ठा अच्छा लगता और शरद काल में गथ्वाणी फायदेमंद। साबुत गहथ को अच्छी तरह छान लेना चाहिए, क्योंकि कंकड़–पत्थर के रंग का होने के कारण उसमें कंकड़ रह सकते हैं। अब इसे धो लें और अच्छी तरह उबालें, पकने पर इसे करछी से घोटें ताकि गहथ थोड़ा गाढ़ा हो जाय। लोहे की कढ़ाही में तेल या घी डालकर सामान्य दाल की तरह प्याज, लहसुन चोरा, व जीरा का छौंका लगाएं। नमक–मिर्च धनिया मसाला डालें, गर्म मसाला नहीं डालना चाहिए क्योंकि गथ्वाणी स्वतः बहुत गर्म होता है। सर्दियों के लिए यह गर्म दाल है। जिन लोगों को गर्म चीजें नहीं सुहाती हैं उन्हें थोड़ा ठंडा करके इस्तेमाल करना चाहिए। भात एवं झंगोरा के साथ गथ्वाणी का स्वाद मजेदार होता है। गथ्वाणी का स्वाद बिल्कुल अलग होता है, हल्का खट्ठापन भी महसूस होता है। सर्दी या बर्फ के दिन खायेंगे तो जाड़ा कोसों दूर भाग जायेगा। पुराने समय में गथ्वाणी के साथ तोड़िया के पिन्ना (खल) की गुठलियां भी डाली जाती थीं। इससे स्वाद बढ़ता था।

गहथ का फाँणु

फाँणु बनाने के लिए गहथ को रात को पानी में अच्छी तरह भिगो देना चाहिए। भीगे गहथ को सिल–बट्टे या मिक्सी में पीसकर मसीटा बनाना चाहिए। थोड़ा गाढ़ा मसीटा छोटी–छोटी गोलीनुमा पकोड़ी बनाने के लिए अलग कर

उसमें जरूरत अनुसार नमक मिर्च मिला लें, शेष मसीटे को पानी के साथ घोलें। लोहे की कढ़ाही को चूल्हे पर रखकर उसमें सरसों का तेल या घी डालें। गर्म होने पर उसमें जख्या या जीरा डालें, और गाढ़े मसीटे की छोटी–छोटी पकोड़ी तलें, ठीक उसी तरह जैसे कढ़ी के लिए पकोड़ी बनाते हैं। छोटी–छोटी पकोड़ी तैयार होने पर अलग संभालकर रखें। इन्हें फांणा तैयार होने के बाद उतारते समय डालना है। पकोड़ी टेस्ट करने की कोशिश न करें वरना गर्मा–गर्म पकोड़ी खूब स्वादिष्ट लगती है, आप पूरी की पूरी खा जायेंगे। पर मन मारिये भी नहीं, थोड़ी ज्यादा पकोड़ी बनाएं। वहां पर परिवार के लोग यदि हैं तो एक–आध स्वादिष्ट करारी पकोड़ी उन्हें भी चखाइए। गर्म तेल में प्याज, लहसुन का तड़का डालें लेकिन चोरा सबसे मजेदार होता है, और धनिया–जीरे का मसाला व नमक मिर्च स्वाद अनुसार डालें। गर्म मसाला भूलकर न डालें। अब पतले मसीटे के घोल को छौंक लें। जरूरत के अनुसार पानी डालें और मध्यम आंच में फांणू पकायें। सावधानी इतनी रखनी है कि फांणा कढ़ाही के तल में न चिपके। इसलिए बार–बार करछी से हिलाते रहें। फाँणा गढ़ा होता जायेगा।

जब फाँणु का रंग काला और हल्का गाढ़ा होने लगे तो समझो तैयार हो गया है। कढ़ाही नीचे उतारने से पहले उसमें पहले से तैयार पकोड़ी डाल दें। और हां थोड़ा सा छांछ/मट्ठा या दही उपलब्ध है तो उसे भी डालिए। यदि यह उपलब्ध नहीं तो नींबू का रस निचोड़ें। गर्मागर्म स्वादिष्ट फाँणु तैयार है। परोसिए और खाइए। यदि देर से खाना है तो कढ़ाही से पलट कर फाँणु को चीनी मिट्टी या स्टील के बर्तन में पलट दें। वरना कढ़ाही में फाँणु का रंग ज्यादा काला हो जाता है। पहले फाँणु तो खाते ही थे किंतु कढ़ाही चाटने में भी घर के सदस्यों को मजा आता था, चाटने के शौकीन तब तक उंगली से चाटते रहते थे जब तक चांदी की तरह कढ़ाही बिल्कुल साफ चमकने न लगे। मांजने में कोई जी नहीं चुराता था।

सावधानी– तैयार फाँणु को दुबारा गर्म करने पर भी ऊपरी पानी न डालें, वरना स्वाद बिगड़ जायेगा।

किसके साथ बहुत अच्छा डिश है फाँणु–

• झंगोरा और फाँणु • भात और फाँणु • कोदा की रोटी और फाँणु • गेहूं की रोटी और फाँणु • साथ में दही मट्ठा भी अच्छा स्वाद बढ़ाता है। यदि दही-मट्ठा ज्यादा नहीं तो तुरसै ही काफी है।

कच्चे गहथ की भरी रोटी/भरे परांठे

दालों में सिर्फ गहथ ही ऐसी दाल है जिसकी कच्चे रूप में भरवा रोटी बनाते हैं। गहथ को साफ कर रात को भिगो दें। सिल–बट्टे में पीसकर मसीटा बनाएं, और उसमें नमक, मिर्च, लहसुन, प्याज, हरा धनिया आदि मिलाकर सामान्य पराठों की तरह रोटी में भर कर घी/तेल के साथ पकायें। बिल्कुल अलग तरह का मजेदार स्वाद आयेगा। बिना तेल/घी के अंगारों पर सेकने पर भरवा रोटी भी बहुत अच्छी लगती है। रोटी के ऊपर मक्खन या घी के साथ खाने में बहुत मजा आता है।

पटुंगी स्वाद में मजेदार दवा में दमदार

यदि आप सर्दी, जुकाम एवं खांसी से पीड़ित हैं, तो रात को सोते समय गहथ को पानी में पूरी तरह भिगो दें। सुबह गहथ को सिल–बट्टे या मिक्सी में दरदरा पीसें लेकिन ज्यादा बारीक नहीं। पिसे मसीटे को अलग कर उसमें मन पसंद का नमक–मिर्च मिलायें। तवा चूल्हे में रख कर गर्म करें और गर्म तवे पर साफ छनी हुई चूल्हे की राख हलके से बुरक दें। तैयार मसीटे की गोली पानी के हाथ से बना कर, तवे के ऊपर रख कर पाथें यानी रोटीनुमा प्लेन करें। थोड़ी देर बाद जब वह एक तरफ से पक जाय तो पलट दें। पलटने में दिक्कत होती है, इसके लिए छूरी और चिमटे का सहारा लें। दोनों तरफ पलट कर अच्छी तरह पकायें। लो तैयार हो गयी गहथ की पटुंगी, गर्म–गर्म खायें। पटुंगी निःसन्देह सर्दी, जुकाम और खांसी के पीड़ित को आराम पहुंचायेगी। कच्चा जुकाम तुरंत पक जायेगा। छींकें भी ठीक हो जायेंगी और पटुंगी के स्वाद का जोरदार आनन्द भी मिलेगा। लेकिन सिर्फ सर्दी जुकाम में ही नहीं अपितु कभी भी शौक से पटुंगी का आनन्द ले सकते हैं। यदि जुकाम न हो और सूखी पटुंगी पसन्द नहीं तो हल्के घी, तेल या रिफाइंड के साथ पका कर पटुंगी के स्वाद एवं जायके का लाभ उठा सकते हैं। यह दक्षिण भारतीय थाली पीठ की तरह लोकप्रिय हो सकती है।

गहथ की पकोड़ी

कच्चे गहथ की पकोड़ी भी जोरदार बनती हैं, साबुत गहथ को जिस तरह फाँणु के लिए भिगो कर, पीस कर पकोड़ी बनाते हैं, उसी तरह बनाइए।

पकोड़ियों में अपने स्वादानुसार नमक, मिर्च एवं प्याज, हरा धनिया बारीक काटकर मिलाइए और तलिए, लेकिन दो जरूरी बातें न भूलें, एक तो जख्या और दूसरी पकोड़ी करारी बननी चाहिए। पकोड़ी तैयार होने पर गर्मागर्म परोसें, खूब मजा आयेगा। चाय, काफी के साथ यह जोरदार हल्का नाश्ता स्नैक्स की तरह है, लेकिन सिर्फ नाश्ता नहीं, अपितु आपको ऊर्जा व औषधि भी मिलेगी और भागेगा जाड़ा। साथ में थोड़ी हरी चटणी हो तो और भी मजा। यह पकोड़ी बहुत ही हल्की सुपाच्य होती है।

कभी पथरी का रोग नहीं होगा यदि...

सीजन अनुसार गहथ से बने व्यंजनों का इस्तेमाल करते हैं तो किसी को कभी किसी तरह का पथरी का रोग नहीं होगा। और यदि किसी को गुर्दे में पथरी हो गयी हो तो चिन्ता न करें, एक मुट्ठी या थोड़ा कम गहथ अच्छी तरह पका कर उसका एक गिलास सूप रोजाना खाली पेट पियें। यह क्रम एक माह या कुछ दिन और चलायें, पथरी पेशाब के साथ टूट–टूट कर निकल जायेगी। पथरी का चूरा निकलते वक्त कभी–कभी आपको ऐंठन का आभास भी हो जायेगा। उबले गहथ को भी दाल की तरह या उसमें हल्का नमक डालकर खाइए। निश्चित तौर पर बिना अपरेशन रोगी ठीक हो जायेंगे। गहथ की गिंजड़ी देखें पेज 39 पर।

पथरी ही नहीं, बिना धमका पत्थर भी तोड़ देता है गहथ

पुराने जमाने में जब पत्थर तोड़ने के लिए पहाड़ों में डाइनामाइट नहीं आया था तो लोग लकड़ियां जला कर बड़े–बड़े पत्थरों को गर्म करते थे और इन गर्म पत्थरों पर गहथ का उबला पानी डालते थे। पत्थर टूट–टूट कर चकनाचूर हो जाते थे। शायद यहीं से यह माना जाने लगा की गहथ पथरी की दवाई है। आज भी घरों के आसपास खतरे से बचने के लिए पत्थर तोड़ने का यह सुरक्षित तरीका अपनाया जाता है।

भट्ट

भट्ट उत्तराखण्ड का महत्वपूर्ण दलहन है। यह काले, भूरे, हल्के हरे, सफेद आदि कई रंगों में पाया जाता है। भट्ट की लगभग 6 प्रजातियां पायी जाती हैं। इसे पारंपरिक सोयाबीन भी कहा जाता है। सोयाबीन की गोरी फसल आने के बाद काला भट्ट धीरे–धीरे लुप्त होने की ओर बढ़ रहा है, क्योंकि सरकारी योजनाओं में सिर्फ सोयाबीन को प्रोत्साहित किया गया। किंतु भट्ट के स्वादिष्ट व पौष्टिक पकवान लोगों के खान पान से जुड़े हैं, इसलिए पहाड़ के समझदार किसानों ने अब तक भट्ट की महत्वपूर्ण खेती बचा कर रखी है। लेकिन सोयाबीन की गोरी फसल में वह गुणवत्ता और स्वाद नहीं, जो काले भट्ट में है। **काले भट्टे** में ओमेगा–3 पाया जाता है, जो रोग प्रतिरोधक शक्ति पैदा करता है। निसन्देह काला भट्ट सोयाबीन की अपेक्षा ज्यादा पौष्टिक है।

भट्ट का चुड़कानी

कुमाऊं में भट्ट की महत्वपूर्ण रैसिपी चुड़कानी मशहूर है। गढ़वाल में इसे भट्वाणी नाम से जाना जाता है। चुड़कानी बनाने के लिए लोहे की कढ़ाही चूल्हे पर रखें, और गर्म होने पर देसी घी या सरसों का तेल इतना अंदाज से डालें जो भट्ट को भूनने के लिए पर्याप्त हो। तेल गर्म होने पर उसमें साफ सुखाये हुए भट्ट डालें और अच्छी तरह भूनें। जब चड़–चड़ की आवाज आने लगे यानी भट्ट चटकने या फूटने लगें तो समझो चुड़कानी के लायक भट्ट भुन गये हैं। चड़...चड...चड़..., चुड़कानी, शायद चुड़कानी नाम भी इसीलिए पड़ा होगा। सावधानी रखें, भट्ट जले नहीं वरना चुड़कानी कड़वा हो जायेगा। चुड़कानी लस–लसा या हल्का गाढ़ा करने के लिए थोड़े से गेहूं का आटा या बेसन भी आखिरी क्षणों में भट्ट के साथ भूनने की परम्परा है। भुन जाने पर चटपट इसमें पानी डालें, गर्म पानी हो तो और भी अच्छा जल्दी चुड़कानी बनेगा, वरना ठंडा पानी भी डाल सकते हैं। नमक, मिर्च, मसाला, स्वादानुसार डालें, यदि गंदरैण, कढ़ी पत्ता या जम्बू हो तो और भी अच्छा। इसे हल्की आंच में पकाते रहें। बस तैयार है चुड़कानी। चुड़कानी भात और झंगोरा/मादिरा के साथ परोसें। खाने में कितना मजा आता है, खा कर देखें। आप कभी भूल नहीं सकते।

भट्वाणी

चुड़कानी को गढ़वाल में भट्वाणी कहा जाता है। लेकिन बनाने के तरीके में थोड़ा अंतर है पहले साबुत भट्ट को कढ़ाही या तवे में भुनते हैं, इसमें किसी तरह का तेल या घी नहीं डालना चाहिए। सिर्फ हल्की राख बुरकते हैं। इससे बर्तन में भट्ट चिपकते नहीं और अच्छी तरह चटकते और फूलते हैं। भुने भट्ट चूल्हे से उतारें और पुनः लोहे की कढ़ाही गर्म कर उसमें घी तेल डालकर प्याज, लहसुन, जख्या व जम्बू का तड़का डालकर दो चार छोटे चेरी टमाटर डालकर, नमक, मिर्च, मसाला जरूरत अनुसार घोलकर मिलाएं और पहले से तैयार भुने भट्ट इसमें डालकर खूब अल्टा–पल्टी करते रहें, ढक्कन रखकर थोड़ी देर तक पकायें। फिर अंदाज का पानी एक साथ डालें, और पकाते रहें। लगभग आधा घंटे में ही भट्वाणी पक कर तैयार हो जायेगा। भट्वाणी तैयार होने पर इसे भात–झंगोरा के साथ गर्मा–गर्म परोसें देखें कितना आनन्द आता है। कुमांऊ गढ़वाल के खानपान में इसकी विशेष पहचान है। चुड़कानी और भट्वाणी हर सीजन में खाया जा सकता है।

डुबका

भट्ट का डुबका कुमांऊ का एक और स्वादिष्ट व्यंजन है। डुबका का नाम आते ही मुंह में पानी आने लगता है। डुबका बनाने के दो तरीके है–

पहला– भट्ट को जरूरत अनुसार साफ कर रात को पानी में अच्छी तरह भिगो दें। अगले दिन सुबह भट्ट को सिल–बट्टे से पीसकर मसीटा बना लें मसीटा एक दम महीन करने के बजाय थोड़ा दरदरा बनायें। सिल–बट्टा नहीं है तो मिक्सी या हाथ ग्राइंडर से भी पीस सकते हैं। मसीटे में पानी मिलाकर घोल लें। लोहे की कढ़ाही चूल्हे में गर्म कर उसमें छौंक के लिए घी या सरसों का तेल डालकर गर्म करें, लहसुन, प्याज, जख्या, गंदरैण कढ़ी पत्ता व जम्बू आदि का तड़का लगायें। नमक, मिर्च मसाला अपनी जरूरत अनुसार, टमाटर भी डाल सकते हैं। तैयार मसीटा छौंक दें, अंदाज से पानी डालें और पकाते रहें, करछी या कौंचा चलाते रहें, वरना डुबका कढ़ाही के तल में चिपकने लगेगा। जब रंग थोड़ा काला होने लगे और महक फैलने लगे तो समझो डुबका तैयार है। कढ़ाही नीचे उतारें और भात व झंगोरा/मादिरा या कोदा की रोटी के साथ परोसें।

खाने में मजेदार स्वाद आयेगा। आप चटकारे लेकर खायेंगे, और चाटते रह जायेंगे। बहुत ज्यादा देर तक डुबका कढ़ाही में न रखें, स्टील के बर्तन में पलटकर रख सकते हैं।

दूसरा– भट्ट की दाल को चक्की या हाथ चक्की में पीसकर मोटा आटा जैसा पाउडर बना कर रख लें। लोहे की कढ़ाही चूल्हे पर रखकर उसमें अन्दाज से घी डालें और गर्म होने पर जरूरत अनुसार भट्ट का आटा डाल दें और इसे हलवा की तरह कम आंच में भूनें, जब यह हल्का भूरा हो जाय तो इसमें नमक, मिर्च व मसाला धनिया जीरा भी डालें और यदि थोड़ा और गाढ़ा बनाना चाहे तो दो–चार चम्मच गेहूं का आटा भी भूनें, किन्तु पूरी–पूरी सावधानी रखें, ज्यादा न भुन जाय, नहीं तो कड़वाहट आ जायेगी, अब जल्दी अंदाज से पानी डाल दें। पानी एक बार ही डालें तो स्वाद और अच्छा रहेगा। इसे पकाते रहें और बीच–बीच में करछी से चलाते रहें, वरना कढ़ाही के तले में चिपकने लगेगा। जब कढ़ाही के ऊपरी हिस्से में डुबका ज्यादा चिपकने लगे और पपड़ी बनने लगे तो समझो डुबका तैयार है। कढ़ाही नीचे उतारें और देरी न करें। भात एवं झंगोरे के साथ परोसें। गर्मा–गरम डुबका ठंड भगाने का व्यंजन है। पहले से ठंड लग रही हो तो खाते–खाते ठंड गुम हो जायेगी और जिन लोगों को ठंड लगती है सी...सी... करते हैं, डुबका खाने के बाद निःसंदेह उनकी सी... सी... भी गायब हो जायेगी। आप चम्मच से खाने की गलती न करें हाथ से खायेंगे तो उंगली चाटने में खूब मजा आयेगा और कढ़ाही के ऊपरी हिस्से में डुबके की जो पपड़ियां होती हैं वे अति स्वादिष्ट होती हैं। घरों में अक्सर बर्तन मांजने के लिए बच्चे कतराते हैं किंतु डुबका की कढ़ाही में चिपका स्वादिष्ट डुबका एवं उसकी पपड़ी चाटने का स्वर्णिम अवसर कोई गंवाना नहीं चाहता, इसलिए बर्तन मांजने की होड़ लग जाती है।

भटुला

भटुला भट्ट का एक और व्यंजन है, जो डुबके की तरह है, किंतु बनाने का तरीका साधारण ढंग से अलग है। भट्ट के पीसे आटे को पानी के साथ घोलें, लोहे की कढ़ाही चूल्हे में रखें, उसमें छौंके के लिए सामान्य तेल–घी डालें। प्याज, लहसुन व जख्या का तड़का तैयार कर नमक, मिर्च व मसाले को भी भूनें और भट्ट के आटे के घोल को छौंक लें। अन्दाज का पानी डाल कर इसे पकाते रहे और करछी चलाते रहें। 15–20 मिनट

दालों का पोषणमान-प्रति 100 ग्राम

	जलग्राम	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	कार्बोज ग्राम	रेशा ग्राम	कैलशियम मि.ग्राम	फास्फोरस मि.ग्राम	लोहा मि.ग्राम	विटामिन ए आईयू	विटामिन बी	ऊर्जा कैलोरी
राजमा	12.0	22.9	1.3	60.6	-	260	410	6.8	-	-	346
उड़द	10.9	24.0	1.4	59.6	0.9	154	385	9.1	63.3	042	347
गहथ	11.8	22.0	0.5	57.2	5.3	287	3.11	8.4	118.3	0.42	321
लोबिया/ सुंटा	13.4	24.1	1.0	54.5	3.8	77	414	5.9	20	0.51	323
तोर	13.4	22.3	1.7	57.6	1.5	73	304	5.8	220	0.45	335
भट्ट	8.1	43.3	19.5	20.9	3.7	240	690	11.5	710	0.37	432
नौरंगी	10.4	25.0	0.6	-	4.8	450	393	6.0	-	-	-

स्रोत– मलेशी 2001 लैग एवं पियरसन 1980

में भटुला तैयार हो जायेगा। भात झंगोरे या रोटी के साथ परोसिए और शौक से खायें स्वादिष्ट भटुला।

अंकुरित भट्ट का सेहतमंद नाश्ता

रात को भट्ट को साफ कर अच्छी तरह भिगो दें और दूसरे दिन पोटली में बांध दें। गर्मियों में जल्दी अंकुरित होता है सर्दियों में दो–तीन दिन लग जाते हैं। अंकुरित भट्ट को सुबह–सुबह हल्का नमक डालकर नाश्ते में खाईए।

- अंकुरित भट्ट को लोहे की कढ़ाही में घी/तेल के साथ छौंकिए, नमक, मिर्च हल्के मसाले डालकर परोसें। चाय के साथ जोरदार सेहतमंद स्नैक्स की तरह मजे में खायें।
- भिगोये भट्ट को नमक, मिर्च मिलाकर गर्म तेल या रिफाइंड के साथ तलिए, जोरदार खस्ता नमकीन है मेहमान आने पर चाय–काफी के साथ परोसें। कई दिन तक सुरक्षित रहेगा। तलने के लिए कम अंकुर वाला भट्ट अच्छा होता है।

भट्ट का जौला

जौला भट्ट की एक और मजेदार रैस्पी है। इसे साग या दाल के रूप में नहीं अपितु सम्पूर्ण भोजन के रूप में खाया जाता है। जौला या जौंल्या शब्द दो अलग–अलग खाद्यों का मेल है जिसे हिन्दी में जुड़वां कहा जाता है। जौला भट्ट और चावल के मिश्रण से बनता है।

जौला बनाने के लिए रात को भट्ट की दाल अच्छी तरह पानी में भिगो दें। सुबह भीगे हुए भट्टों को अच्छी तरह मसल कर चाहें तो छिलका अलग कर लें या छिलके सहित ही सिल–बट्टे या अन्य तरीके से इसे पीसकर मसीटा बना लें। लोहे की कढ़ाही में इस मसीटे को बिना छौंके पकाएं, साथ में जरूरत अनुसार चावल भी डाल दें। देर तक पकाते रहें। जब यह पक कर बिल्कुल लस–पसा हो जाय तो इसके साथ लहसुन वाला नमक मिलाकर खाएं। **यह पीलिया के रोगियों के लिए रामबाण औषधि व सम्पूर्ण भोजन भी है। पीलिया रोगी चावल की जगह झंगरियाल पकाकर बिना नमक के ही खायें** अन्य लोग स्वाद बढ़ाने के लिए घी आदि डाल सकते हैं। सामान्य लोगों के लिए भी यह हल्का सुपाच्य व सेहतमन्द भोजन है।

भट्ट की गिंजड़ी पेज 38 देखिए।
भूजें भट्ट का खाजा पेज 136 देखिए।

चैसू/चैस्वाणी

चैसू उड़द दाल का एक मजेदार डिश है। चैसू बनाने के लिए उड़द का आटा दर–दरा पीस लें, सिल–बट्टे या मिक्सी से भी घर में यह पीस सकते हैं। लोहे की कढ़ाही चूल्हे पर रखकर गर्म करें और उसमें घी या तेल अन्दाज से इतना डालें जो उड़द पाउडर को भी बाद में भून सकें। पहले जीरा या काले जीरे, चोरा का तड़का डालें, फिर दाल पाउडर डालकर हल्की आंच में हलवे की तरह भूनें। जब भुनने पर खुशबू आने लगे तो उसमें नमक, मिर्च व मसाले इच्छानुसार डालकर थोड़ी देर और भूनें और फिर उसमें अंदाज से पानी डालें। यदि गर्म पानी हो तो और भी अच्छा, अब उसे ढककर हल्की आंच में पकाते रहें। पकने में दाल की तरह ज्यादा लम्बा समय नहीं लगेगा, बस तैयार है चैसू। उतारते समय नींबू का खट्टा थोड़ा सा डाल सकते हैं। चैसू ज्यादा काला न हो, इसलिए इसे स्टील के बर्तन में पलट सकते हैं। **चैसू के साथ मजेदार लगता है भात, झंगोरा और कोदा की रोटी, थोड़ा-थोड़ा दही भी।**

इसी तरह गहथ की दाल का चैसू बनाया जाता है।

परांठे और बेल्डी रोटी

नौरंगी के भरे परांठे

परांठे तो अक्सर घरों में बनते ही हैं, ज्यादा चलन में आलू व मूली परांठा हैं। लेकिन एक बार नौरंगी का परांठा खाइए, जो पहली बार खायेगा जिन्दगी भर याद रखेगा। नौरंगी की दाल कुदरती ही नौ दस विविध रंगों में एक साथ उगती है। दाल को साफकर इसे कम पानी में खड़ा उबालें। ज्यादा गलायें नहीं, खड़ी–खड़ी उबली दाल को निथार कर उसे हल्के से सिल–बट्टे या अन्य उपकरण में पीसें। मसीटा तैयार होने

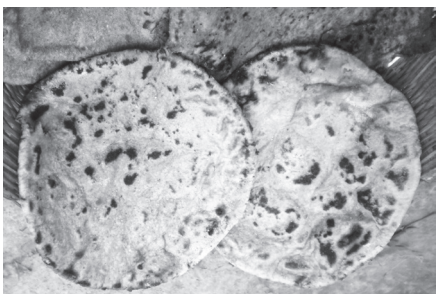

पर उसके साथ नमक, मिर्च, हरा धनिया, लहसुन, प्याज, अदरक पीसकर डालें, यदि हींग पसन्द है तो चुटकी भर डालें। मसीटा अच्छी तरह मिला लें। गेहूं का आटा या गेहूं–कोदा का मिश्रित आटा गूंथें और बनाइए नौरंगी के भरे परांठे। परांठे या बेल्डी रोटी में मसीटा बड़ी सावधानी और सलीके से भरना चाहिए, मसीटा कम न हो और परांठे के चारों ओर बराबर फैल जाय। यदि देसी घी (घर्या) है तो सबसे अच्छा वरना सरसों का तेल या रिफाइंड कम मात्रा में लगाकर पकाएं, और चूल्हे की आंच बराबर रखें। गर्मा–गरम परांठे परोसें। चटणी या अचार आपकी पसन्द है। घी मक्खन अलग से दें। खाने वाला परांठे के लजीज स्वाद से मुग्ध हो जायेगा और कहेगा एक और...। पचने में यह ज्यादा भारी नहीं है। गैस भी नहीं बनाता। नौरंगी की दाल में रेशा अधिक होता है। यह भारी नहीं होती, बहुत ही सुपाच्य है।

अन्य दालों के परांठे

इसी तरह **राजमा, गहथ, सुंटा (लोबिया) रगड़वांस, तोर** आदि दालों के भरे परांठे बनाये जाते हैं। पहाड़ी मूला (मूली) और तोमड़ी आलू के भी स्वादिष्ट परांठे बनते हैं।

बेल्डी रोटी (भरी रोटी)

तेल–घी से परहेज रखने वालों के लिए बेल्डी रोटी अच्छी है। सामान्य भरी रोटी को बेल्डी रोटी कहते हैं। इसे अंगारों में सेक कर पकाया जाता है। बेल्डी रोटी खास उत्सव की तरह बनायी जाती है और बड़े शौक से खायी जाती है। गांव घरों में जिस दिन मट्ठा बिलोया जाता है, ताजे चोपड़ (मक्खन) के साथ बड़े आनन्द से बेल्डी रोटी खिलायी जाती है। गेहूं, गेहूं–कोदा मिश्रित व सिर्फ कोदा के आटे के अन्दर उपरोक्त दालों या अन्य आलू–मूला से भरी रोटियां खूब मोटी–मोटी बनायी जाती हैं।

- **बेल्डी रोटी के साथ आप किसी भी तरह की चटणी चुन सकते हैं, लेकिन तिल और भट्ट की चटणी ज्यादा अच्छी लगती है।**
- **अचार में आंवले का अचार उत्तम है।**
- **ताजा दही स्वाद को मजेदार और पाचक बनाता है। यह बेल्डी रोटी की पारंपरिक रैसिपी है।**

लगड़ी-मीठी

लगड़ी गढ़वाल के कुछ हिस्सों में हंसी–खुशी व मेहमानों को खिलाया जाने वाला जोरदार पकवान है। लगड़ी बनाने के लिए सबसे पहले गुड़ को पानी में पूरी तरह घोल लें। गुड़ आटे से आधा होना चाहिए। आटे को इस मीठे पानी में अच्छी तरह घोलें, घोल ज्यादा पतला या ज्यादा सख्त न हो। खूब फेटें, चूल्हे पर तवा चढ़ा दें। एक कटोरी में सरसों का तेल निकालें, यदि चुलू का तेल हो तो और भी अच्छा है। छुरी, चिमटा और चम्मच पास में रखें, चम्मच से तेल तवे पर फैलायें और ऊपर से करछी से आटे का घोल डालें, हाथ की सहायता से इस घोल को तवे पर गोल घेरे में फैलायें। जब ऊपर का पानी सूखने लगे तो हल्का तेल लगायें और छुरी व चिमटा का सहारा लेकर पलट दें। जरूरत पड़ने पर किनारों से तेल डाल सकते हैं। करारा करने के लिए जरूरत पड़ने पर अल्टा–पल्टी करें। लो तैयार हो गयी मीठी लगड़ी, आप देखेंगे कि लगड़ी शहद के मक्खियों के छत्तेनुमा दिखायी देगी, खूब करारी बन जाती है। अच्छी तरह पकी गर्म–गर्म लगड़ी खाने में मजा आता है। साथ में घी का लुत्फ भी ले सकते हैं।

लगड़ी-नमकीन

गेहूं का आटा पानी के साथ अच्छी तरह घोलें या फेटें। उसके साथ नमक, मिर्च, हरी मिर्च, हरा धनिया, पुदीना प्याज व लहसुन की नई–नई कोमल पत्तियां बारीक काटकर या पीसकर अच्छी तरह मिला दें। बरसात के मौसम में कद्दू के पीले फूलों को साफ कर पीस कर घोल में मिला सकते हैं। तवा चूल्हे पर रखें और उपरोक्तानुसार जिस तरह मीठी लगड़ी बनाते हैं, उसी तरह नमकीन लगड़ी बनाएं। नमकीन चटपटी लगड़ी खाने में मजा आयेगा, गर्मा–गर्म परोसें। चटणी–अचार आप की इच्छा पर निर्भर है। **कोदा के आटे की भी जोरदार मीठी व नमकीन पौष्टिक लगड़ी बना सकते हैं।**

साकिना का भरा परांठा

साकिना मुख्यतः झाड़ीनुमा पेड़ है। शरदकाल में यह पतझड़ होता है, और वसंत ऋतु में फूल निकलने से पूर्व इसकी कलियों को उबाल कर

खाने की पुरानी परंपरा है। उबली कलियां व फूलों को चुनकर अन्दर की छोटी–छोटी डंडियां अलग करें। फूल–कलियों को सिल–बट्टे पर पीस कर पेस्ट तैयार कर उसके साथ इच्छानुसार नमक, मिर्च, लहसुन, प्याज, जम्बू मिलाकर व चोरा मिलाकर अलग रख लें। गेहूं व मंडुआ के आटे को अच्छी तरह गूंथकर गोली बनाकर उसमें सलीके से मसीटा भरकर परांठा बनायें। तेल या घी कम मात्रा में लगायें। देखिए, बिल्कुल अलग स्वाद वाला जायकेदार परांठा बनेगा, स्वाद में बेजोड़, पचने में आसान, गुणों में भरपूर। साकिना परांठे के साथ मक्खन, घी, दही व चटणी आदि अच्छी लगती है। उबले साकिना की कलियों को छौंक कर सब्जी की तरह भी खाते हैं।

इसी तरह गुरियाल (कचनार) की कलियों का परांठा बनाया जाता है। गुरियाल की कलियों की डंडियां भी अच्छी तरह छान लेनी जरूरी होती हैं। गुरियाल की उबली कलियों को हल्का सुखाकर व उबालकर जोरदार अचार भी बना सकते हैं। गुरियाल की कली का अचार बहुत ही स्वादिष्ट व मजेदार लगता है।

साकिना व गुरियाल की कथेली–रायता 107 पेज देखें।

साग-सब्जियां

उत्तराखण्ड में खेती एवं सग्वाड़ों (किचन गार्डन) में पैदा होने वाली सब्जियां हैं :– 1. आलू, 2. प्याज, 3. टमाटर, 4. पिंडालू (अरबी), 5. कुचै, 6. गंडेरी, 7. मटर, 8. लौकी, 9. तोमड़ी, 10. चचींडा, 11. गोदड़ी (धारीदार), 12. तोरी, 13. कड़वा करेला, 14. मीठा करेला (कंकोड़ा–परबल), 14. कद्दू, 15. बैंगन–भट्टा, 16. शिमला मिर्च, 17. फूल गोभी, 18. बंद गोभी, 19. भिण्डी, 20. भुजेला (पेठा), 21. काखड़ी, 22. बीन, 23. राई, 24. लाही, 25. पहाड़ी पालक, 26. ओगल, 27. मारसा, 28. देसी पालक, 29. पिंडालु के पत्ते, 30. छेमी, 31. बारहमासी छेमी, 32. सरसों, 33. चमसूर, 34. ब्रह्मी कद्दू, 35. चने की हरी सब्जी, 36. जिमीकन्द, 37. मूली, 38. गाजर, 39. शलजम, 40. जगरौ, 41. कद्दू की बेल का लुगंला, 42. घर के तल्ड, 43. मेथी, 44. बथुआ, 45. पपीता, 46. केला, 47. श्यामा सुन्दरी, 48. चर्तुफली, 49. लोबिया, 50. शकरकंदी 51. बांकला (स्यूंचना) आदि–आदि।

उपरोक्त सब्जियों में एक–एक किस्म की कई–कई प्रजातियां हैं। पहाड़ी आलू की ही 5–6 किस्में है। ये सब्जियां अलग–अलग मौसम में होती हैं, इनके खाने पकाने के तरीके हर एक इलाके में थोड़ा–थोड़ा भिन्न हैं।

हरा साग

हरा साग हमारे स्वास्थ्य और पोषण के लिए बहुत जरूरी है। यह बात सदियों से ग्रामीण जानते आये हैं। डाक्टर, वैद्य एवं खाद्य–पोषण के जानकार भी बीमारी या कमजोरी होने पर हरी सब्जियां खाने की सलाह देते हैं। पहाड़ के लोग सदियों से मौसमी हरी सब्जियां अपने खेतों एवं जंगलों से लाकर उसके विविध व्यंजन बनाकर खाते रहे हैं। हरे सागों में खेतों से राई, पालक, लाही, सरसों, तोड़िया, चिमसूर, मरसा (चौलाई) ओगल (कुट्टू) बथुआ, कद्दू की बेल, पिंडालू के पत्ते आदि मुख्य हैं और

जंगली, अर्ध जंगली सागों में कंडाली, बुढ़णी, खोल्या, लेगड़ा, जगरौ, खुल्या व खोल्या जैसी दर्जनों प्रजातियों का साग स्थानीय खाद्य सुरक्षा और खाद्य सम्प्रभुता का महत्वपूर्ण हिस्सा है। पहले आर्थिक दृष्टि से कमजोर दलित और निर्बल लोगों के खानपान का यह मुख्य हिस्सा था। किंतु अब दिन प्रति दिन सब्जियों की कमी होती जा रही है। हरे साग के व्यंजनों की विविधता भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। हरे साग का रसदार व्यंजन कापिली मशहूर है। आइए जानें हम कपिली के बारे में–

कंडाली की कापिली

कुमांऊ व गढ़वाल में कंडाली को काल्डी आला व सिसौण आदि कई नामों से जाना जाता है। हिन्दी में इसे बिच्छू घास या बिच्छू बूटी कहते हैं। बिच्छू घास का नाम सुनकर आपके रौंगटे खड़े हो जायेंगे और सचमुच शरीर के किसी अंग को यदि कंडाली छू गयी तो अगले दो दिन तक उस जगह पर झनझनाहट रहेगी, लेकिन धीरे–धीरे स्वतः खत्म भी हो जाती है। इसी कंडाली का साग या कापिली यदि आप एक बार खा लें तो जिन्दगी भर इसका स्वाद नहीं भूल सकते हैं। आपको लगेगा दुनिया में इससे स्वादिष्ट दूसरा हरा साग नहीं है। इसकी कोंपलों का साग मुख्यतः सर्दियों में ही खाया जाता है।

कापिली बनाने के लिए कंडाली की नई मुलायम कोपलें उपयुक्त होती हैं, लेकिन मुलायम कोपलें तभी होगी जब कंडाली के पौधे को हर साल काटते रहेंगे, वरना पुराना पौधा खाने लायक नहीं होता। कोपलें काटकर लाने के लिए चिमटा जरूरी हथियार है। साथ में दो मुंह वाली (दोजल्या) डंडी और तेज दरांती। डंडी से कंडाली को दबायें और चिमटे से पकड़ें और फटा–फट दरांती से काटकर टोकरी में रखें। परन्तु सावधानी रखें कंडाली शरीर को न लगे। फिर भी यदि कंडाली लग गयी तो चिल्लाइए नहीं, नाक का पानी या अमिल्डे का रस उस स्थान पर लगाएं, आराम मिलेगा। इन हरी कोपलों को घर लाकर अच्छी तरह झाड़कर साफ कर

लोहे की कढ़ाही में कम पानी में अच्छी तरह ढक्कन लगाकर पकायें। साथ में थोड़ा अमिल्डा की हरी पत्तियां भी पकायें। अमिल्डा के पत्ते हल्के खट्टे होते हैं, यह स्वाद भी बढ़ाते हैं और संतुलन भी बनाते हैं, बडियाला भी डाल सकते हैं। आप देखेंगे कंडाली की पत्तियां तो बहुत डाली थीं किन्तु पक कर ये बहुत कम हो जाती हैं। कई स्थानों में पकाने से पूर्व कंडाली की कोपलों को आग की तेज लौ के सामने क्षण भर के लिए दिखाते हैं तो उसके सूई नुमा तेज रोयें बारूद की तरह जल जाते हैं। ऐसा करने से कापिली ज्यादा स्वादिष्ट होती है। लेकिन यदि ऐसा न भी करें तब भी कंटीलें रोओं का असर पकने से खत्म हो जाता है।

इस उबली कंडाली को सिल–बट्टे से पीसें या करछी से अच्छी तरह घोटें और थाली में अलग निकालकर उसमें पानी मिलाकर घोलें। इस घोल में थोड़ा सा आटा/बेसन या चावल का आलण (चावल की पिट्ठी) भी अच्छी तरह मिलायें। अन्दाज का नमक, मिर्च डालें। थोड़ा सा धनिया पाउडर डाल सकते हैं। टमाटर या मसाला डालने की जरूरत नहीं। अब कढ़ाही पुनः चूल्हे पर रखें। छौंके के लिए सरसों का तेल डालें। तेल गर्म होने पर पहले उसमें जरूरत अनुसार लाल मिर्च भूनना न भूलें, मिर्च भून कर अलग निकाल दें। अब तड़के के लिए उसमें जख्या, चोरा, लहसुन या हींग डालें, और फटाफट कंडाली का घोल उसमें डाल दें। छांय–छांय

रेणुका देवी का भोग है– कंडाली का साग और कोदा की रोटी

उत्तरकाशी जिले के डुंडा के समीप मां रेणुका देवी सिद्ध पीठ है। यहां प्रतिवर्ष वैशाखी के दूसरे दिन बड़ा मेला लगता है। मां रेणुका की पूजा अर्चना पारंपरिक ढंग से करते हैं। मां को चढ़ाये जाने वाले मुख्य भोग में मंडुआ की रोटी और कंडाली का साग है। रेणुका देवी जमदग्नी ऋषि की पत्नी और परशुराम की मां थी। कोदा और कंडाली की महिमा पुराने समय से देवी के साथ जुड़ी है। कोदा और कंडाली के संरक्षण की यह अद्भुत पूजा है जो अगली पीढ़ियों को कोदा–कंडाली के संरक्षण का रास्ता दिखाती है। शायद परशुराम के बल का राज भी कोदा कंडाली रहा होगा।

की आवाज के बाद छौंक की खुशबू से वातावरण महक उठेगा। कपिली को करछी से अच्छी तरह हिलाते या घुमाते रहें, ताकि कढ़ाही के तले पर न जमे। पानी अंदाज का रखें कापिली न ज्यादा पतली हो न ज्यादा गाढ़ी। अच्छी तरह पकायें कपिली तैयार है। परोसते समय घी से ज्यादा जायका आता है। और हां भूनी पहाड़ी करारी मिर्च भी न भूलें। खायें या न खायें किंतु उसकी खुशबू भी जोरदार लगती है, चख कर जरूर देखें।

कापिली के साथ मजेदार लगती है— **कपिली-झंगोरा, कपिली-भात और कापिली-मंडुआ रोटी, यह जोरदार रैसिपी है।** स्वादिष्ट और मजेदार कापिली खाने में आनंद आयेगा, आप उंगली और थाली चाटते रह जायेंगे। कंडाली की कपिली ज्यादा गर्म मत खाइए लेकिन ज्यादा ठंडी भी नहीं। कंडाली की तासीर बहुत गर्म होती है। जब ज्यादा ठंड या बर्फ पड़ रही हो तो कंडाली खाईए, सर्दी दूर भाग जाएगी और शरीर गर्म हो जायेगा। कंडाली की खुशबू भी वातावरण में आनंद फैलाती है।

- कुमांऊ में कंडाली का सूखा लसलसा साग लहसून नमक के साथ मंडुआ की रोटी के साथ खाने की परंपरा है।

कंडाली खनिज, विटामिन व औषधि का भण्डारः—

- कंडाली में लौह तत्व अत्याधिक होता है। खून की कमी पूरी करती है। इसके अलावा फोरमिक ऐसिड, एसटिल कोलाइट, विटामिन ए व के भी कंडाली में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इसमें चांदी तत्व भी पाया जाता है।
- गैस नाशक है आसानी से हजम होती है
- कंडाली का खानपान पीलिया, पाण्डु, उदर रोग, खांसी जुकाम, बलगम, गठिया रोग, चर्बी कम करने में सहायक है। स्त्री रोग, किडनी अनीमिया, साइटिका हाथ पांव में मोच आने पर कंडाली रक्त संचारण का काम करती है।
- **कंडाली कैंसर रोधी है, इसके बीजों से कैंसर की दवाई भी बन रही है। एलर्जी खत्म करने में यह रामबाण औषधि है।**
- कंडाली की पत्तियों को सुखाकर हर्बल चाय तैयार होती है।
- कंडाली के डंठल का इस्तेमाल नहाने के साबुन में होता है। इसकी छाल के रेशे की टोपी मानसिक संतुलन के लिए उपयोगी है।

- **कंडाली को उबाल कर नमक मिर्च व मसाला मिलाकर सूप के रूप में पी सकते हैं।**
- कापिली के अलावा हरे साग की तरह खा सकते हैं।
- कंडाली के मुलायम डंठल की बाहरी छाल निकलने के बाद डंठल से बच्चों व बड़ों के लिए एनिमा का काम लिया जा सकता है।

बुढ़णी की कापिली और ढिणसा

एक जमाने में वसंत आगमन पर डांडा के जंगलों के बीच बुढ़णी की कलियां नीले–नीले फूलों से सज–धज कर मिट्टी के ऊपर लहराने लगती थीं। उन दिनों बुढ़णी की कापिली और ढिणसा का स्वादिष्ट व्यंजन घर में जरूर बनता था। बुढ़णी तो आज भी थोड़े बहुत उग आती है किंतु बूढ़े लोग जंगल जा नहीं सकते, और नई पीढ़ी इस स्वादिष्ट और पौष्टिक सब्जी से अनभिज्ञ है। आज भी आप बुढ़णी की कापिली और ढिणसा बना सकते हैं। कापिली सामान्य ढंग से बनायी जाती है किंतु ढिणसा के बारे में जानिए–

ढिणसा बनाने के लिए बुढ़णी की कोमल कलियों को सिल–बट्टे से बारीक पीसें, यह चिपचिपा मसीटा बन जायेगा, मसीटे में अपने अन्दाज से नमक, मिर्च एवं हल्का मसाला अच्छी तरह मिला कर अंदाज की टिकिया बनायें। इन टिकियों को बड़े–नींबू (गलगल) के दो पत्तों के अन्दर रखें। चूल्हे के ऊपर एक पतीला रख कर उसमें एक–दो गिलास पानी डाल कर उसमें अमिल्डा, बांज या कोई भी साफ पत्तियों की तह लगा कर उसके ऊपर बुढणी की टिकियां नींबू पत्तों सहित बराबर रखें, पतीले का ढक्कन अच्छी तरह लगा दें और चूल्हे की आंच तेज करें। आधे घंटे तक इसे पकायें। नींबू के पत्तों के अन्दर रखी बुढ़णी की टिकियां भाप से पक जायेंगी, इसे ढिणसा कहते हैं। पतीला चूल्हे से उतार कर हल्का ठंडा होने दें, और नींबू के पत्तों के अन्दर से निकाल कर खायें गरमा–गरम स्वादिष्ट व मजेदार रोगरोधी ढिणसा।

कद्दू की बेल (लुंगलों की कापिली)

कद्दू की सब्जी तो सभी खाते हैं किन्तु कद्दू की बेल की कापिली या साग के बारे में बहुत कम लोग जानते हैं। कुछ लोग बेल की सब्जी के

लिए पहाड़ के लोगों का मजाक भी उड़ाते हैं। लेकिन पहाड़ के लोग कद्दू की बेल का हरा साग मजे से खाते हैं। बरसात के दिनों में जब कद्दू की बेल बहुत ज्यादा फैल जाती है तो बेल का सबसे अगला हिस्सा जो बहुत मुलायम होता है, को तोड़कर लाइए उसका रेशा अलग कर बारीक काट कर लोहे की कढ़ाही में पका कर कंडाली की कापिली की तरह ही बनाइए। जोरदार, स्वादिष्ट व गुणवत्ता वाला साग है। भात, झंगोरा व रोटी के साथ मजेदार लगता है।

अन्य विविध तरह की कापिली (कफली)

पालक, राई, सरसों, खोल्या, बड़यालु, पिंडालू के पत्तों की कापिली भी उपरोक्त तरीके से बनायी जाती है। सबका अलग-अलग स्वाद व अलग जायका है। ऐसी जोरदार खुशबू और पौष्टिकता है जो आप के स्वास्थ्य में निश्चित सुधार लायेंगी, और बीमारियां दूर भगायेंगी। खोल्या की कापिली या साग की महक इतनी जोरदार होती है कि पड़ोसी को भी पता चल जाता है कि खोल्या पक रहा है।

मरसा (रामदाना) एवं ओगल का हरा साग

बारहनाजा के खेतों एवं घरों के आस–पास जेठ–आषाढ़ के महीनों से बरसात के दिनों तक मरसा एवं ओगल के पौधे खूब उगते हैं। इनका हरा साग मिश्रित और अलग–अलग दोनों तरह से खाया जाता है। ओगल (फाफर) का साग थोड़ा खटास वाला होता है। खेतों में निराई–गुड़ाई करते वक्त यह हरा साग खेतों में लहलहाने लगता है। कोदा गुडार्त के दिनों इसका साग खास पसन्द किया जाता है। हल्का पका कर चूल्हे से उतारते समय कच्चे प्याज डालने से इसका स्वाद बढ़ जाता है। गर्भवती स्त्रियों के लिए रामदाना का हरा साग बड़ा पोषणीय माना जाता है और सचमुच इस हरे साग में लौह तत्व सर्वाधिक होता है। यह सुपाच्य भी होता है।

लेंगड़ा की हरी सब्जी

जंगली सब्जियों में लेंगड़ा को लोग बड़े शौक से खाते हैं। लेंगड़ा जंगल और गाड गधेरों के किनारे नमी वाले स्थानों में हर साल जेठ–अषाढ़ के आगमन पर बड़ी मात्रा में उग आता है। पहले सिर्फ ग्रामीण लोग इसकी सब्जी खाते थे किन्तु अब ग्रामीण लोग लेंगड़ा इकट्ठा कर शहरों में भेज कर अतिरिक्त आय भी कमा लेते हैं। शहरों में रहने वाले पहाड़ी मूल के लोग ही इसे खरीदते हैं। मैदानी लोग इससे डरते है, किंतु यदि उन्हें इसकी गुणवता बतायी जाय और स्वाद चखाया जाय तो वे भी मांग करने लगेंगे।

लेंगड़ा बनाने के लिए सबसे पहले लेंगड़ा से रेशा और उसमें जमा हल्के भूरे रंग के रोंये/बुरादे को अच्छी तरह निकाल कर साफ धोना चाहिए। लेंगड़े ताजे होने चाहिए, इन्हें छुरी से बारीक काटें, आप देखेंगे कि काटते–काटते कटने वाला हरा हिस्सा भी काला होता जाता है, इसका मतलब साफ है कि लेंगड़ा की सब्जी में लौह तत्व खूब होता है। लेंगड़ा के साथ थोड़ा आलू मिला सकते हैं।

लोहे की कढ़ाही चूल्हे में रखें, तड़के के लिए तेल की मात्रा सामान्य सब्जी से थोड़े अधिक हो। लहसुन, प्याज, जख्या या मेथी का तड़का लगायें। उसमें टमाटर के साथ धनिया जीरा और नमक–मिर्च अंदाज से डालें, थोड़ा सा अदरक और गर्म मसाला भी डालें। अब लेंगड़े डाल कर अच्छी तरह मिला कर पलटते रहें, ताकि मसाला लेंगड़े में घुस जाय। एक समान मध्यम आंच में पकायें। ठंडा पानी न डालें, पहले से तैयार गर्म पानी डालें। पानी ज्यादा न हो बीच–बीच में सब्जी को करछी या कौंचा से हिलाते रहें। सब्जी लसलसी बननी चाहिए।

सब्जी तैयार होने पर गेहूं व मंडुआ की गर्म रोटी के साथ परोसें। खाने में मजा आएगा, साथ में थोड़ा देसी घी या मक्खन हो तो और भी स्वादिष्ट लगेगा। ग्रामीण लोग स्वाद बढ़ाने के लिए थोड़ा शुद्ध दूध भी इस सब्जी में डालते हैं। लेंगड़े का स्वाद बिल्कुल अलग होता है, जो लोग पहली बार खायेंगे उनके मानस को यह अलग तरह की तृप्ति देता है। इसकी महक भी जोरदार फैलती है।

- **यह लौह तत्व व कैल्शियम की पूर्ति करता है।**
- **पेट का कृमि नाशक है।**

सीजन अनुसार लेंगड़े जरूर खाने चाहिएं।

बथुआ खाद्य एवं हरा साग

बथुआ बहुत ही पौष्टिक खाद्य है। इसका दाना एवं हरा साग दोनों उपयोगी हैं। हिमालयी बथुआ सामान्य बथुआ से बिल्कुल अलग है। इसका पौधा खूब तगड़ा और 4-5 मीटर तक ऊंचा हो जाता है। इसकी पत्तियां शुरू में हल्की गुलाबी बाद में हरी होती जाती हैं। पत्तियां चौड़ी होती हैं। घरों के आस–पास बसंत से ही स्वतः पौधे उग आते हैं और पूरी गर्मियों में कई बार पत्तियां व टहनियां तोड़कर इसका साग खाया जाता है। हरा साग अन्य हरी सब्जियों से ज्यादा पौष्टिक है। खनिज लवण पालक के बराबर मिलते हैं। उत्तरकाशी के फते पर्वत वाले इलाके में बथुआ के दानों की खिचड़ी खाई जाती है। बथुआ की पूरी फसल वर्षात में बहुत अच्छी होती है। **इसके दानों का पोषण दूध के बराबर है।** बथुआ के साग की तासीर गर्म मानी जाती है। साग गर्म नहीं खाना चाहिए। हरे साग को उबालकर रायता भी बनता है।

मीठा करेला... डायबिटीज़ का दुश्मन

करेला... और वह भी मीठा, है न अजूबा बात ! लेकिन यह करेला चीनी की तरह तो मीठा नहीं होता। दरअसल कड़वा न होने के कारण इसे मीठा करेला कहा जाता है। इसे परबल, राम करेला और कंकोड़ा आदि कई नामों से जाना जाता है। मीठा करेला ऊंचाई वाले इलाकों में आज भी खूब उगाया जाता है। बरसात की सब्जियों के अंतिम पड़ाव में यह लोगों के पोषण के काम आता है। बिल्कुल हल्के पीले व हरे रंग और छोटे–छोटे कांटों वाले करेले कढ़ाही के ऊपर छौंकते–छौंकते और अल्टा–पल्टा कर हल्की भाप देते ही थाली में खाने लायक हो जाते हैं। इसकी सूखी सब्जी तो बनती ही है किंतु आलण डाल कर तरीदार सब्जी

भी जोरदार लगती है। छोटे–छोटे करेले कच्चे भी खाये जाते हैं, खूब स्वादिष्ट लगते हैं, खीरे की हल्की महक देते हैं। पके फलों को मोड़ कर दबायें तो जोर से फट कर छोटे पटाके जैसी आवाज आती है। पके करेले की ताजी सब्जी तो खाते ही हैं साथ ही इन्हें सुखा कर अगली सर्दी या गर्मियों के लिए रखा जाता है। जरूरत पड़ने पर भिगो कर जोरदार सब्जी बनायी जाती है।

कड़वा करेला मधुमेह/डायबिटीज़ का दुश्मन है, किंतु यह मीठा करेला भी मधुमेह की प्रभावशाली दवा है। साथ ही सभी तरह के चमड़ी के रोग एवं जलन में भी यह उपयोगी है। **इसकी पत्तियों का रस पेट के कीड़ों को मारने का काम करता है। कुष्ठ रोग में भी करेला फायदेमंद माना जाता है। इसका स्वरस कील व मुहासों को ठीक करने के काम आता है। इसकी जड़ को सुखा कर चूर्ण बना कर इसका लेप भी चमड़ी के रोगों के लिए बहुत उपयोगी है।** सब्जी के साथ इसके बीज यदि रह जाते हैं तो खराब लगते हैं, इन्हें चुनने में सावधानी बरतें किंतु बीजों को अलग से भून कर खाने में आनन्द आता है।

उत्तराखण्ड की अन्य सब्जियां तो सामान्य ढंग से बनायी व खायी जाती हैं। दर्जनों अन्य खास साग-भुज्जी के बारे में फिर कभी लिखने का प्रयास करेंगे।

प्याज टमाटर जरूरी नहीं!

कई लोगों को गलतफहमी है कि प्याज टमाटर के बिना दाल–सब्जी आदि में स्वाद नहीं आता। इसलिए वे प्रत्येक खाने में प्याज टमाटर को खानपान का जरूरी हिस्सा मानते हैं, लेकिन समाज में कई वर्ग ऐसे भी हैं जो प्याज कभी नहीं खाते, तो क्या वे बिना स्वाद और जायके के खाते हैं? कतई नहीं। वे और अधिक कुदरती स्वाद और जायका अपनी जीभ में महसूस करते हैं। प्याज टमाटर के बढ़ते प्रचलन के कारण प्याज टमाटर पर राष्ट्रीय राजनीति खूब चल पड़ी है, इनकी बढ़ती मंहगाई का असली स्वाद राजनेताओं और जमाखोर व्यापारियों को आता है।

पहाड़ों में बनने वाली कई दाल–सब्जी आदि में प्याज टमाटर की जरूरत नहीं जैसे– चुड़कानी, भटवाणी, चैसू, फांणु, काण्डाली की कापिली,

राई, लाही, पालक आदि की कापिली व हरे साग। आलू, अरबी व तल्ड के गुटके का स्वाद भी बिना प्याज टमाटर के अच्छा लगता है। हां इनमें छौंके के लिए जख्या, फरण, जम्मू–चोरा, जीरा धनिया आदि चाहिए। शादी या अन्य समारोहों में सामूहिक भोज में भड्डू में पकायी जाने वाली राजमा, उड़द, तोर व मसूर की दालों में भी प्याज टमाटर नहीं डालते हैं, फिर भी स्वाद इतना लाजबाव आता है कि खाने वाले उंगली चाटते रह जाते हैं। सीजन अनुसार उगने वाले जैविक प्याज टमाटर तो ठीक हैं किंतु बाजार में आने वाले चमकीले रंगवाले टमाटर तो खतरनाक कीटनाशक व रसायनों से भरे होते हैं जो सेहत के लिए खतरनाक हैं।

सौत वरदान!

सौत, सौतिया डाह, सौतेला व्यवहार व सौतेली मां आदि दुनिया के मानस में खलनायक का प्रतीक हैं, किंतु प्राकृतिक रूप से देखें तो सौत हमारे लिए वरदान है। कैसे? देखिए– पहाड़ में कई तरह की विविधितायुक्त मिश्रित सब्जी को सौतिया सब्जी कहते हैं। सौतिया साग–सब्जी खाने में बहुत ही स्वादिष्ट और पोषणकारी होती है। शहरी भाषा में भी तो मिक्स वेज खूब प्रचलित है। सौतिया सब्जी पोषण में अव्वल है। इधर बारहनाजा की मिश्रित खेती की चर्चा होने लगी है किंतु कुमाऊं के दूरस्थ इलाकों में इस मिश्रित खेती को सौतिया खेती कहते हैं। सौतिया खेती में मिश्रित रूप से उगने वाली फसलें एक दूसरे के गले लिपट कर हमें तो पोषण देती ही हैं साथ ही, मिट्टी को भी उपजाऊ बनाती हैं। अब सौत वरदान कह कर सीख तो लेनी ही पड़ेगी, किंतु दूसरी शादी वाली सौत तो निःसन्देह अभिशाप है, उससे तो तौबा करनी ही पड़ेगी।

बिना बोये, बिना उगाये

बिना खेती के फल, फूल एवं सब्जियां-

आरोग्य की कुंजी

बिना बोये, बिना सींचे व बिना मेहनत के विविध तरह के कंदमूल फल एवं विविध तरह की सब्जियां स्थानीय खाद्य सुरक्षा व खाद्य सम्प्रभुता की महत्वपूर्ण कड़ी हैं। जंगल और खेतों के आस–पास बिना बोये उगने वाले खाद्य पदार्थ लोगों की स्वास्थ्य सुरक्षा में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सीजन में इन्हें खाने पर स्थानीय लोग एक तरह से रीचार्ज हो जाते हैं, कई तरह की बीमारियां इन्हें खाने से दूर भाग जाती हैं। इनकी उपयोगिता देखकर ग्रामीण लोग विविधता संवर्धन के प्रति जागरूक रहते हैं। कस्बों या शहरों में रहने वाले शौकीन या विविधता के प्रति जागरूक समझदार लोगों के लिए भी स्थानीय ग्रामीण कभी–कभी बाजार तक कुछ फल व सब्जियां पहुंचाते रहते हैं। इससे ग्रामीणों की थोड़े बहुत अतिरिक्त आय तो होती ही है, लेकिन इससे बढ़कर शहरी लोगों का स्वास्थ्य भी सुधरता है। इन फल फूलों को खेतों के आस–पास ज्यादा उगाने की जरूरत है। आइए इन फल–फूल एवं सब्जियों के बारे में जानिए, आप जरूर खायेंगे।

1. **काफल**– बांज–बुरांश के मिश्रित जंगलों में पाया जाने वाला काफल यहां का प्रमुख जंगली फल है। फल खट्टा–मीठा रस भरा होता है। इसके अन्दर की गुठली सूखी और सख्त, लेकिन फल के साथ गुठली भी निगल सकते हैं। फल को नमक–मिर्च के साथ सरसों का कच्चा तेल रला–मिला कर खाने का पुराना रिवाज है। फल के अलावा इसके अनेक औषधिय गुण भी हैं। **काफल के अन्य उपयोग पेज 111 पर देखें।**
2. **बमोर**– बमोर का पेड़ मध्यम ऊंचाई वाला होता है। बमोर के फल अगस्त–सितम्बर, अक्तूबर में पकते हैं। लीची के आकार के छोटे–छोटे खट्टे, मीठे व कसैले दाने स्थानीय लोग बड़े शौक से खाते हैं। भालू को यह फल बहुत प्रिय है।

3. **बुरांश**– उत्तराखण्ड के जंगल बसन्त आगमन पर लाल–गुलाबी फूलों से सज–धज जाते हैं। पहले यह फूल सिर्फ चटणी व रैमोड़ी के लिए इस्तेमाल होता था किंतु अब बुरांश के फूलों का रस (स्क्वेश) महत्वपूर्ण पेय के रूप में उभर रहा है। यह सिर्फ मजेदार पेय नहीं है अपितु ह्रदय रोग व अन्य कई बीमारियों की महत्वपूर्ण औषधि भी है। बुरांश नेपाल का राष्ट्रीय फूल है, और हमारा राज्य वृक्ष।

4. **हिंसर पीली**– झाड़ीनुमा कंटीला नीचे से ही विभिन्न शाखाओं वाला पौधा होता है। खट्टे–मीठे रस भरे फल जेठ–आषाढ़ में पकते हैं। सुबह–सुबह यदि खायें तो खूब ठंडक पहुंचाते हैं, इनका स्वाद मजेदार है। लेकिन एक–दो बेरी अलग नहीं अपित 5–7 बेरियां एक साथ गटकें तो और भी मजेदार लगती हैं।

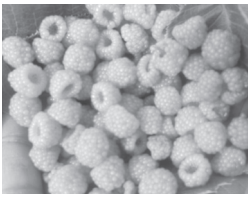

5. **हिंसर काली**– झाड़ीनुमा कई शाखाओं वाला कांटेदार पौधा होता है। पकने पर काले रंग के फल खूब लगते हैं, रस भरी बेरियां पकने पर गहरी काली हो जाती हैं। फल खूब गुच्छों में लगते हैं।
6. **जोगी हिंसर**– यह काली हिंसर की ही प्रजाति है, किन्तु इसकी बेरी थोड़ी मोटी होती है।
7. **किनगोड़**– खट्टा–मीठा फल पकने पर काला होता है। इसकी जड़ों व टहनियों से पीला कुदरती रंग बनता है। **इसका रस मधुमेह एवं आंख की रामबाण दवा है।** पौधा झाड़ीनुमा किन्तु तीन मुंह के कांटों के साथ होता है। इसे दारुहल्दी भी कहते हैं। फलों को नमक, मिर्च व तेल मिला कर खाते हैं।

8. **तोतर**– पौधा किनगोड़ की तरह, अंतर सिर्फ इतना कि इसके पत्ते मोटे कांटेदार होते हैं। फल किनगोड़ की अपेक्षा ज्यादा मोटा होता है। ऊंचाई वाले क्षेत्रों में पाया जाता है। औषधिय गुणों से भरपूर है।

9. **दालिमू (दाड़िम)**– अनार की जंगली प्रजाति है। फल खाने एवं खटाई के काम आता है। इसका अनारदाना बनता है। कई दवाओं में इस्तेमाल होता है।
10. **घिंघारू**– लाल गुलाबी रंग का खट्टा–मीठा फल व सिवकथौन की प्रजाति, खेती के औजार की बेटें, एवं इसकी जोरदार लाठियां बनायी जाती है। इसकी जड़ आग से जले की दवाई है।
11. **भिड़ काफल/कफल्या**– (स्टोबेरी की जंगली प्रजाति) स्वादिष्ट फल एवं दवा, मुंह के छाले की उत्तम औषधि है।
12. **गेंवाई/निवाई**– इसका फल खाया जाता है, पत्तियों से पशुओं, बकरियों को चारा मिलता है, कुमाऊं में **हरेला त्यौहार** के दिन इसका पेड़ लगाया जाता है।
13. **वन गेंवाई**– खट्टा–मीठा होता है, एलर्जी की दवा है। खट्टा फल ठंडक पहुंचाता है।
14. **गिले**– छोटा पौधा चीड़ के जंगल में पाया जाता है। इसका कंद मूलीनुमा होता है। कुमाऊं में खूब पाया जाता है।
15. **केमू (किमू)** – शहतूत की पारंपरिक प्रजाति है। इसकी तूत खाई जाती है जानवरों के लिए उत्तम चारा है। रेशम उद्योग में उपयोगी है।
16. **शहतूत**– शहतूत की तूत खायी जाती है। चारा व रेशे के लिए उत्तम है। आजकल टसर सिल्क में बहुत उपयोगी है।
17. **गौजिला**– चीड़ के जंगल में पाया जाता है। इसका कंद मूली की तरह होता है। जंगल में जब भूख लग जाय और कुछ खाने को न हो तो गौजिला की जड़ भूख शांत करती है।
18. **कंडरा**– पौधा खूब कांटेदार होता है। इसकी मूलीनुमा जड़ खायी जाती है। बहुत ठंडी होती है। पहले रैमाड़ी के साथ खायी जाती थी।
19. **बेर**– जंगली बेर का फल छोटा और खट्टा मीठा होता है गर्म घाटियों में पाया जाता है।
20. **करौंदा**– करौंदा गर्म घाटियों में पाया जाता है। फूल खुशबू फैलाते है। छोटे–छोटे रंगीन फल खाये जाते है। करौंदे की दो तीन किस्में

पायी जाती हैं। फल खूब मीठे कुरकुरे व स्वादिष्ट होते हैं। कच्चे करौंदे का जोरदार अचार बनता है।

21. **बेडू**– घाटियों से लेकर मध्य हिमालय तक बेडू के छोटे–बड़े पेड़ पाये जाते हैं। गर्मियों में पेड़ फलों से लद जाते हैं। पके फल जामुन जैसे दिखते हैं। लेकिन जामुन की तरह ढेले नहीं होते, मीठा रस भरा फल जेठ–आषाढ़ में पक कर खाने लायक होता है और बड़े शौक से खाया जाता है। बेडू की सब्जी पेज 87 पर देखें।

22. **तिमला**– तिमला अंजीर की जंगली प्रजाति है। पकने पर बहुत ही मजेदार। इसके अन्दर कुदरत ने बड़े तजबीज से शहद जैसा द्रव्य संजो कर रखा होता है। खाते समय शहद टपकने लगता है। तिमला के फल को सुखा कर, यह दुनिया के बहुत महंगे फलों में एक है। तिमले की सब्जी एवं अचार पेज 87 पर देखें।

23. **भीमल**– बच्चे भीमल के बीजों को चूस–चूस कर खाते हैं, गुठली फेंक देते हैं। फल खाने पर ओंठ लाल हो जाते हैं इसका चारा दुधारु पशुओं के लिए उत्तम है। रेशा भी उपयोगी है। भीमल का हरा रेशा शैम्पू–कंडीशनर का प्राकृतिक स्रोत है। पहाड़ की महिलायें सदियों से बाल धोने के लिए अठाला (शैम्पू) कंडीशनर के रूप में भीमल के हरे रेशे का इस्तेमाल करती आयी हैं। इसीलिए उनके बाल लम्बी उम्र तक मुलायम रहते हैं, और सफेद नहीं होते। भीमल के परिपक्व रेशे से जोरदार रस्सियां बनती हैं, हरे केड़ों से टोकरियां बनती हैं, और रेशे निकालने के बाद सूखे केड़ों से अंधेरे में उजाले के लिए जलने वाली टार्च/मशाल।

24. **तुंगला**– तुगंला मध्यम आकार का वृक्ष है। इसके फल खूब गुच्छों में लगते हैं, खट्टा–मीठा स्वाद आता है। जंगल में घास काटने वाली महिलाएं और बच्चे इसे बड़े चाव से खाते हैं। पत्तों से बहुत अच्छी जैविक खाद बनाई जाती है। पशुओं की अच्छी बिछावन या बिस्तर है।

25. **मालू**– मालू की बेल बहुत मजबूत होती है। इस पर लगने वाली बड़ी–बड़ी फलियों को टांटी कहते हैं। टांटी के अन्दर बड़े–बड़े बीज होते हैं। टांटी को भूनने से इन्हें आसानी से निकाला जाता है। बीज बहुत स्वादिष्ट होते हैं। बीजों से मिली परत को मांड कहते हैं। ठीक

चावल के मांड जैसा स्वाद आता है। पत्ते चारे के लिए उपयोगी हैं किंतु खाना खाने के लिए इससे बनने वाले पत्तल और ज्यादा उपयोगी हैं। टिहरी की मशहूर सिंगोरी मिठाई मालू पत्तों के अन्दर ही बनायी जाती थी।

26. **चीड़ के बीज**– चीड़ के पेड़ों पर लगने वाले फल को छेंती कहते हैं। यह फल बहुत ही कठोर होता है, किंतु जब गर्मियां पड़ने लगती हैं तो कठोर फल स्वतः खुलने लगता है और अन्दर से इसके बीज छिटकने लगते हैं। ये बीज चिलगोजे की तरह होते हैं, बहुत ही स्वादिष्ट व पौष्टिक। खीर के साथ छिलका निकालकर सूखे फल की तरह भी खाये जाते हैं। छेती मेला कभी–कभी खुद हवा से उड़ कर घर तक चखने के लिए आते हैं।

27. **कांगू**– छोटे–छोटे फल गर्मियों में पक कर मैरुनी रंग के हो जाते हैं, अन्दर से मुनक्का जैसे कुरकुरे बीज, फल खाने में मीठे लगते हैं। पेड़ की पत्तियां हल्की लाल दिखती हैं। पेड़ कांटेदार होता है फल पेट के लिए अच्छा माना जाता है।

28. **छांछरी**– मध्यम आकार का चारे का पेड़, इसका फल तिमला (अंजीर) का छोटा भाई है। ठीक वैसे ही स्वाद आता है। फल मीठे, रस भरे अन्दर शहद की तरह मीठा पदार्थ जमा रहता है। बंदरों का यह जोरदार भोजन है। जिन दिनों छांछरी पकती है, बन्दर खेती की ओर नहीं आते।

29. **खैणू**– यह भले ही चारे का वृक्ष है, किन्तु इसके फल पकने पर रस भरे मीठे होते हैं। घास काटने वाली महिलायें इन्हें शौक से खाती हैं।

30. **अमाड़ा**– सामान्य मध्यम आकार का पेड़, खट्टे फल लगते हैं, इनका अचार बहुत अच्छा बनता है। खूब खट्टा होता है। लोग अमाड़ा का थेच्वांणी भी बनाते हैं, आम के अम्वांणी की तरह। अम्वांणी भात के साथ बहुत स्वादिष्ट लगता है।

31. **खरदाली**– मुख्यतः घास का पेड़ है। इस पर पंखनुमा बीज लगते हैं। गर्मियों में ये बीज हवा में उड़कर कभी–कभी लोगों के आंगन तक खुद आ जाते हैं और अपने को खाने का निमंत्रण देते हैं। खूब चलमले होते हैं। खीर में चिलगोजे की तरह स्वाद देते हैं।

32. **इमली**– इमली की पहाड़ी प्रजाति घाटियों में पायी जाती है।
33. **धत मिल**– कुमाऊं क्षेत्र के मिश्रित जंगलों में पाया जाता है। पेड़ बड़ा होता है, फल गुच्छेदार लगते हैं। जाड़ों में खाये जाते हैं। खट्टे–मीठे फलों की चटणी भी बनती हैं। उल्टी की जोरदार दवा है। कुदरत ने बड़ी कलाकारी से बीज रखे होते हैं, ये बीज बहुत स्वादिष्ट और गुणकारी होते हैं।
34. **तोमड़ी**– गेहूं जौ के खेतों की मेंढ़ या खेतों के बीच में गेहूं की फसल के साथ उगती है। बसंत के समय पहले बच्चे इन्हें खूब खाते थे। लोग सब्जी भी बनाते थे अब कभी–कभार खेतों में गेगला हरा घास निकालने वाली महिलाएं इसका नवांण जरूर कर लेती हैं। रैमोड़ी के साथ खायी जाती है।
35. **आंवला**– पहाड़ की घाटियों के जगलों एवं खेतों के आस–पास स्वयं उगने वाले जंगली आंवलें की कई प्रजातियां पायी जाती हैं। पहाड़ी आंवले का अचार, मुरब्बा व चटणी बहुत उपयोगी है। कहावत है– "दाना कु बोल्यु और औलों कु सवाद बाद म औदो" अर्थात वृद्ध आदमी का कहा हुआ और आंवले का स्वाद थोड़ी देर में आता है। चख कर देखें कितना सच... यह सब जानते है आंवला विटामिन सी एवं आयरन का मुख्य स्रोत है।
36. **कुरफली**– गेहूं की फसल के साथ घास नुमा छोटी–छोटी फलियों वाले लैंटिल के पौधे हर साल अपने आप उगते हैं। बसंत के समय इन पर खूब पीले–पीले फूल और फलियां लगती हैं। खेतों में हरा घास निकालने वाली महिलाएं फलियों को बीन–बीन कर खाती हैं। पौधे के मुलायम अग्र भाग को रैमोड़ी के साथ खाया जाता है।
37. **मोळ (मेहल)**– जंगली नाशपाती जैसा है। पेड़ कांटेदार होता है। इसके कच्चे फल खट्टे–मीठे किंतु थोड़े कसैले होते हैं। जब पकते हैं तो काले हो जाते है और खूब मीठे होते हैं। मनुष्य के अलावा भालू व बन्दरों को यह बहुत प्रिय हैं। मेहल के पेड़ पर नाशपाती की कलम लगायी जाती है, दवा भी बनती है।
38. **भेनांणा**– यह एक तरह का जंगली अंगूर है। सफेद फल अंगूर की तरह गुच्छों में लगते हैं, पकने पर काले हो जाते हैं। खट्टे–मीठे रस भरे भेनांणे बरसात में खूब फलते हैं।

इसके अलावा गोल्या काखड़ी, सिंस्यारू, तितमैया, हरड़ा, रिखोला, पुडैल, रसभरी, बाना के बीज, बहेड़ा, कोशड़ियाली, अमिल्डा, चिफल्या व वज्रदंती आदि को भी विविध तरह से खानपान व दवा में इस्तेमाल करते हैं।

जंगली सब्जियां

1. **कंडाली**– इसे विभिन्न नामों से जाना जाता है। काल्डी, सिसौण व हिन्दी में बिच्छू घास व बिच्छू बूटी के नाम से जाना जाता है। इसका रेशा भी उपयोगी होता है। पेज 69 देखिए।
2. **लेंगड़ा**– गर्मियों व बरसात में खायी जाने वाली पहाड़ की स्पेशल सब्जी है। गाड–गधेरों के किनारे एवं सिम–सिम पानी वाले इलाकों में खूब उगता है। बारना (फर्न) की प्रजाति है। सब्जी खाने में बहुत स्वादिष्ट, लौह की मात्रा अधिक, पेट की कृमि नाशक है। लेंगडा की सब्जी पेज 73 देखिए।
3. **कुथेल्डू**– लेंगड़ा की एक और प्रजाति है। इसकी बनावट थोड़ी पतली है। इसी तरह की अन्य प्रजाति घिराओं है।
4. **चळु**– ऊंचाई वाले इलाकों में पाया जाने वाला साग है।
5. **खोल्या**– छोटी नदियों गाड–गधेरों के किनारे जहां पर पानी रुका होता है या हल्का–हल्का बहता है, **पानी के ऊपर बिना मिट्टी के, तैर कर उगने वाली यह विलक्षण हरी सब्जी है। पानी के ऊपर इसकी पत्तियां होती हैं और पानी में जड़ें स्थिरता से हिलती रहती हैं। तैरने वाली यह सब्जी बहुत स्वादिष्ट होती है।** बहुत ठंडी खूब पेशाब लाने वाली, इसका स्वाद और महक बिल्कुल अलग–गजब की है।
6. **भूतकेश**– इसे हिन्दी में सतावर कहते हैं। इसकी जड़ें गुच्छों में सैकड़ों की संख्या में होती हैं। आयुर्वेद की महत्वपूर्ण दवा हैं। बसंत के समय इस पर नई कोपलें आती हैं। इन कोपलों की सब्जी भी खायी जाती है।
7. **लेदड्या**– जेठ–आषाढ़ के महीने में खेतों के बीच एवं आस–पास उपजाऊ जगह पर स्वतः उगने वाली यह जोरदार सब्जी है। मिट्टी

के ऊपर फैले पौधे बहुत मुलायम और गुच्छों में छा जाते हैं। सब्जी हल्की खट्टी व चिकनी होती है। पेट के लिए अच्छी मानी जाती है। खाली खेतों एवं मेढ़ों पर लेदड़्या स्वतः खूब फैलता है।

8. **बथुआ**– खेतों एवं घरों के आस–पास उगने वाला जंगली बथुआ गर्मी एवं बरसात के महीनों में हरे साग की पूर्ति करता है। पहाड़ी बथुआ आप काटते रहें तो दोबारा तिबारा कई बार पुनः हरी पत्तियां आपको आकर्षित करेंगी। सब्जी की तासीर गर्म होती है। पेज नं. 75 पर देखिए।
9. **केमू**– यह शहतूत की पारंपरिक प्रजाति है। पतझड़ के बाद जब वसंत में इसकी कलियां निकलती हैं तो कलियों का हरा साग बनाया जाता है जो स्वादिष्ट और गुणकारी है।
10. **शहतूत**– शहतूत की पहली–पहली कलियां भी हरे साग के रूप में खायी जाती हैं।
11. **पिलखा**– यह एक चारे का पेड़ है जो सर्दियों में पतझड़ होता है। बसंत के वक्त जब नई कलियां निकलती हैं तो कलियां फूटते वक्त इसका बल्ब देखने लायक होता है, जिसे चुनकर व उबालकर और छौंक कर हरी साग–सब्जी बनायी जाती है। यह साग हल्का खट्टा होता है, बिल्कुल अलग स्वाद मजेदार। कई खनिज विटामिनों से भरपूर।
12. **टकुइयां-तिलण्या**– बसंत के समय उगने वाला यह पौधा गेहूं के खेत और उसके आस–पास उगता है। पौधे की पत्तियां जमीन पर चिपकी रहती हैं, मुलायम होती हैं। इसकी सब्जी भी बनायी जाती है। फूल जोरदार लाल सुर्ख धब्बे वाला है। रैमोड़ी बनाने के लिए अच्छा है।
13. **बेडू**– बेडू का बड़ा पेड़ होता है। पहले इसकी कलियों की सब्जी खाते थे किंतु अब यह परंपरा समाप्ति की ओर है। बेडू फलों की सब्जी पेज 87 देखें।
14. **खड़िक**– खड़िक का पेड़ बड़ा होता है। चारा एवं इमारती लकड़ी के रूप में जाना जाता है। बसंत में जब पेड़ पर नई कलियां आती हैं तो कलियों को चुनकर इन्हें उबालकर छौंक कर जोरदार हरा साग बनाया जाता है। लेकिन अब यह परंपरा भी कम होती जा रही है।

15. **कुकड़ी-मैकुड़ी**– इसका पौधा झाड़ीनुमा होता है। कलियों को उबालकर हरी सब्जी बनाने की परंपरा है।

16. **कुण**– फाफर–ओगल की जंगली प्रजाति है। कई स्थानों में हरी सब्जी के रूप में खायी जाती है।

17. **रामबांस**– बसंत में रामबांस की नई मुलायम कोंपलें निकलती हैं। मुलायम कोंपल को उबालकर कुछ समय पानी के धारे के नीचे सुजा (शुद्ध) कर सब्जी एवं जोरदार अचार बनाया जाता है।

18. **सेमल**– सेमल का पेड़ बड़ा व कांटेदार होता है। बसंत से पूर्व इस पर लगने वाले फूलों के खिलने (खुलने) से पूर्व जोरदार सब्जी बनती है। सब्जी के लिए अन्दर का फूल वाला हिस्सा फेंक कर केवल बाहरी छिलका खाते हैं। फूलों के खिलने के बाद फल लगते हैं। कच्चे फलों की भी सब्जी बनती है। सेमल की सब्जी औषधिय गुणों से भरपूर है। इससे कब्ज दूर होती है, पेट साफ होता है और जोड़ों का दर्द दूर होता है।

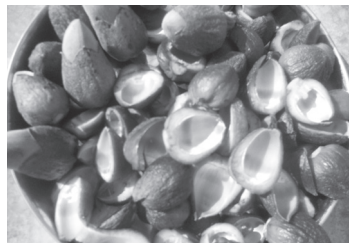

19. **तल्ड**– जंगली तल्ड जमीन के नीचे फलता है, इसकी दर्जनों किस्में पायी जाती हैं। इसको उबालकर आलू की तरह खाया जाता है। किन्तु यह आलू से ज्यादा स्वादिष्ट और पौष्टिक होता है। इसी तरह बेबर, जिमीकंद, मेंग्वा और गेंठी आदि की दर्जनों उपयोगी किस्में पायी जाती हैं। जिमीकंद खेतों के आसपास में उगाया जाता है। इसका जोरदार अचार बनता है।

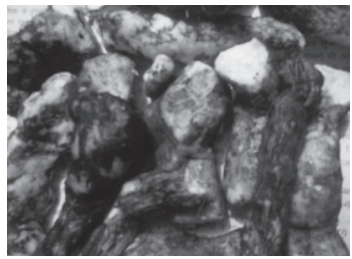

20. **जगरौ**– ऊंचाई वाले इलाकों में जगरौ का हरा साग बहुत लोकप्रिय है। घर के आस–पास भी होता है, कहते हैं जगरौ मकान के बाहरी कोने से कणसे (भली बुरी बातें) चुपचाप सुनने में माहिर है।

नोटः इसके अलावा भी कई तरह के जंगली फल और सब्जियां अलग–अलग इलाकों में पायी जाती हैं।

तिमला की सब्जी

तिमला यानी जंगली अंजीर, पकने पर मीठा फल है। लेकिन कच्चे तिमले की जोरदार सब्जी बनती है। तिमलों को अच्छी तरह धोकर उसके चार छः हिस्सों में काट लें। अन्दर के हिस्से यदि खराब है तो साफ कर लें, कढ़ाही में तेल गर्म कर तिमला को फ्राई करें। फ्राई कर इसे अलग निकालें ज्यादा तेल हो तो उसे अलग कर लें, और फिर तेल में प्याज, लहसुन व जख्या का तड़का डालें। टमाटर, नमक, मिर्च मसाले इच्छानुसार डालें और भूनें व फ्राई किए गए तिमलों को उसमें डालकर मिलाएं। ढक्कन लगाकर हल्का पानी डालकर पकायें। तैयार है तिमला की जोरदार सब्जी, मजे में खायें। तिमले को हल्का उबाल कर अचार भी बना सकते हैं। बिना फ्राई किये सिर्फ हरे तिमले को थेच कर भी सब्जी बनायी जाती है।

बेडू की सब्जी

घरों के आसपास या पनघट पर उगने वाले बेडू के फलों की सब्जी भी तिमला की तरह ही बना सकते हैं। बेडू की सब्जी खाते समय और जेठ–आषाढ़ में बेडू पकते वक्त आपको ग्रामोफोन/रेडियो आडियो में बजने वाला पहला कुमाऊंनी/गढ़वाली लोकगीत ***'बेडू पाको बारामास नरैणी काफल पाको चैत, मेरी छैला'*** जरूर याद आएगा। लेकिन सचमुच बेडू बारह महीने नहीं पकता है। बेडू तो जेठ–आषाढ़ में ही खाने को मिलता है। किंतु गीत और इसकी धुन पहाड़ ही नहीं अपितु देश के अन्य हिस्सों में आज भी बारहमास (बारह महीने) लोकप्रिय है।

च्यौ/मशरूम

च्यौ पहाड़ की एक शाकाहारी मीट जैसी सब्जी है। बरसात या बर्फ पिघलने के बाद विविध तरह के च्यौ धरती की कोख से बिना बीज के ही स्वतः

फूटते हैं। जंगलों के आस–पास रहने वाले जानकार ग्रामीण खाने वाले च्यौ और विषले च्यौ दोनों को पहचानते हैं। वरना अनजाने में जहरीला च्यौ खाकर मौत की दावत भी हो जाती है। पहाड़ों में नल्या च्यौ, बुगन्या च्यौ, कंडुड्या, बांज का च्यौ, सुर च्यौ, गुच्छी, पिट्या छतरी, तेल छतरी, गुच्छी एवं म्यौला आदि सहित दर्जनों तरह के च्यौ पाये जाते हैं। लेकिन गांव के अनुभवी विशेषज्ञों की पहचान के बिना च्यौ की सब्जी नहीं खानी चाहिए, क्योंकि जहरीले च्यौ की भी अनेक किस्में होती हैं। च्यौ की सब्जी गांव के लोग विशेष सब्जियों की तरह खासकर मीट की तरह खूब तेल मसाले के साथ बनाते हैं। च्यौ के जहर का प्राथमिक उपचार खट्टा मट्ठा है, खतरे के वक्त खूब मट्ठा पिलाना चाहिए।

देखने में छोटी स्वाद में बड़ी

बड़ी का साग पूरे देश में बड़े शौक से खाया जाता है। किन्तु उत्तराखण्ड के खानपान की संस्कृति में विविधता युक्त बड़ी बनाने और खाने की परंपरा ज्यादा मजेदार है। देखने में छोटी किंतु स्वाद और जायके के कारण निःसंदेह यह बड़ी हैं।

नाल बड़ी

नाल बड़ी पिंडालू (अरबी) के डंठलों से बनायी जाती है। पिंडालू के डंठलों से रेशा अलग कर लेना चाहिए और इन डंठलों को धूप में एक दिन हल्का सुखा लेना चाहिए। उड़द की दली हुई छिलके वाली दाल को एक बर्तन में डालकर पानी में अच्छी तरह भिगो दें। सुबह इस दाल को अच्छी तरह मसल कर कुछ छिलके अलग कर लें और तैयार दाल को सिल–बट्टे/मिक्सी या हाथ ग्राइंडर से पीस कर मसीटा तैयार करें। मसीटे में थोड़ा–थोड़ा काली मिर्च, साबुत धनिया व जीरे के दाने मिलाकर अच्छी तरह फेंटे। अब पहले से तैयार पिंडालू

के डंठलों पर एक–एक करके मसीटे का मोटा लेप चढ़ायें। लेप चढ़ाते समय हाथों में पानी मसलें इससे मसीटा हाथों में नहीं चिपकेगा। एक दो दिन इन नालों या डंठलों को मसीटे सहित टांग कर, परात में रख कर व ट्रे पर सुखायें। प्लास्टिक की सफेद चादर का इस्तेमाल भी कर सकते हैं। अधसूखे नालों को तेज छुरी से मसीटे सहित आधा–पौने इंच साइज का काटें। अगले दिन फिर सुखायें, अच्छी तरह सुखाकर डिब्बों में भरकर रख दें और जब चाहे जोरदार साग पकायें। नाल बड़ी को कुछ लोग शाकाहारी मांस भी कहते हैं। यह भी परंपरा है कि एक सीजन में यदि किसी ने नाल बड़ी बनाने की शुरुआत की तो इसे हमेशा जारी रखना जरूरी माना जाता है।

ककड़ी की बड़ी

कुमाऊं में ककड़ी की बड़ी मशहूर हैं। पहाड़ों में ककड़ी/काखड़ी/खीरा की एक ऐसी दुर्लभ पारंपरिक प्रजाति है, जिसका आकार खूब बड़ा होता है। 3 से 5 किग्रा. तक की एक ही ककड़ी मिलती है। यह बहुत स्वादिष्ट होती है। हरी ककड़ी गांव के लोग मिल–जुल कर हरी मिर्च व मोरा वाले नमक के साथ बड़े शौक से खाते हैं। कहीं–कहीं इसका साग भी बनाते हैं। बड़ी बनाने के लिए पकी/खरसी ककड़ी को कद्दूकस कर उसका पानी अच्छी तरह निचोड़ लें। उड़द की दली हुई दाल को भिगोकर साफ कर उसका मसीटा तैयार कर पहले से रख लें। मसीटे के साथ धनिया, जीरा व काली मिर्च के कुछ दाने मिला सकते हैं। अब मसीटा और कद्दूकस की गई ककड़ी को अच्छी तरह मिलाकर फेंट लें और चटक धूप में चारपाई या तख्त के ऊपर एक साफ सफेद पारदर्शी प्लास्टिक की शीट या कपड़ा बिछा कर पानी के हाथ से छोटी–छोटी बड़ियां बनायें। इन्हें धूप में दो–तीन दिन तक अच्छी तरह सुखायें। ककड़ी की जोरदार बड़ी आड़े वक्त आपको स्वादिष्ट मजेदार स्पेशल सब्जी देगी।

भुजेला की बड़ी

'भुजेलू बड़्यों कु, ठंडू पाणी पीजा छैला, बांज की जड़्यौं कु'।

गढ़वाली लोकगीतों में भुजेला की बड़ियों का जगह–जगह बहुत सुन्दर वर्णन है। कुमाऊं में इसे भुजा कहते हैं और हिन्दी में पेठा। पेठा असली मिठाई इसी से बनती है। भुजेला की प्रजाति गढ़वाल से लुप्त हो रही है। भुजेला के दाने का उपयोग तंत्र–मंत्र में झाड़खंडी खूब करते हैं। पशु के रूप में इसकी बलि दी जाती है।

भुजेला की बड़ियां भी ककड़ी की तरह कद्दूकस कर बनायी जाती हैं। इसी पद्धति से कद्दू व लौकी की बड़ियां भी बनायी जाती हैं।

दाल की बड़ी

उड़द, मूंग, नौरंगी, गहथ (कुलथ) एवं लोबिया की दली दाल के मसीटे से भी भांति–भांति की बड़ियां बनाने का रिवाज आज भी अनेक क्षेत्रों में है। आप भी बनाइए बड़ी और मजे से पौष्टिक शाकाहारी शिकार (मीट) का आनंद लें।

आलू की बड़ी

आलू और बड़ी की मिक्स सब्जी तो आपने कई बार खायी होगी किन्तु अलग से आलू की बड़ी कभी नहीं। लेकिन जिन क्षेत्रों में आलू ज्यादा पैदा होता वहां आलू की भी बड़ियां बनाते हैं। बड़ी बनाने के लिए आलू को उबाल कर छील लेने चाहिए। राजमा या उड़द की दाल चक्की या ग्राइंडर से पीसकर दरदरा आटा बनाकर उसे भून ले। ठंडा होने पर इसके साथ उबले आलू मिलाकर अच्छी तरह मथ दें और साफ जगह पर छोटी–छोटी दुकड़िया डालकर बड़ी बनायें। दो–तीन दिन धूप में सुखायें, तैयार है आलू की बड़ी।

पिंडालू की बड़ी

पिंडालू को कद्दूकस कर, उस चूरे को उड़द की दाल के मसीटे के साथ, जीरा, धनिया काली मिर्च मिला कर जोरदार बड़ियां बनती हैं।

कैसे पकायें बड़ी की सब्जी?

बड़ी का साग बनाने के प्रचलित तरीका भिगोकर तेल या घी के साथ हल्का तला जाता है। हां आलू सभी तरह की बड़ियों के साथ अच्छा लगता है। बड़ी के साग में प्याज, लहसुन जख्या, जम्बू व गदरैण का तड़का व मिर्च–मसाला भी बड़ी को जायकेदार व मजेदार बनाता है। सभी तरह की बड़ियां है तो पूर्ण शाकाहारी किंतु पिंडालू की नाल बड़ी जब तलकर या सामान्य बनायी जाती हैं तो देखने में छोटे–छोटे मीट की टुकड़ी लगती हैं और खाने में इतनी स्वादिष्ट और जायकेदार होती कि इसमें मीट का अहसास होता है। इसलिए कई पूर्ण शाकाहारी ग्रामीण इसे नहीं खाते हैं, और हां प्रियजनों की मृत्यु के समय जिस तरह मांस मदिरा व घर में तैका (उड़द के पकोड़े) तलने से परहेज होता है उसी तरह नाल बड़ी से भी परहेज किया जाता है। लेकिन सच बात यह है कि यह कतई मीट नहीं, शाकाहारी मीट कहना चाहें तो कह सकते हैं। बड़े होटलों में सोयाबीन के पकवान शाकाहारी मीट की डिश में गिने जाते है। किंतु सोयाबीन में वह स्वाद नहीं जो नाल बड़ी में है।

पिंडालू के पापड़ की सब्जी और दवा भी

कुमाऊं के कुछ ग्रामीण अंचलों में किसान पिंडालू की नाल को दवा के लिए भी इस्तेमाल करते हैं। भादों के महीने में पिंडालू की नाल से रेशा अलग कर छोटे–छोटे टुकड़े काट कर धूप में अच्छी तरह सुखाकर रख लेते हैं। सर्दी व गर्मियों में इसे भिगोकर सब्जी के रूप में भी खाते हैं, और यदि किसी के पेट में मरोड़ व आंव की तकलीफ हो तो पिंडालू के सोख्ता नालों को उबाल कर ठंडा कर रोगी को खिलाया जाता है। पहली खुराक में ही आराम मिल जाता है। कुमाऊं के गांवों के लोग आंव व मरोड़ के वक्त पास–पड़ोस से ढूंढ़–ढूंढ़कर इसका उपयोग करते हैं।

बड़िल

एक जमाने में जब पहाड़ों में मसूर की दाल खूब होती थी तो दाल खा–खाकर लोगों को बिकुळ (उब) पड़ जाती थी। इसलिए स्वाद बदलने के लिए बिल्कुल नए अंदाज में मसूर की दाल के बड़िल बनाते थे। नई पीढ़ी तो बड़िल शब्द भी नहीं जानती लेकिन शब्दों से न तो पेट भरता

है न टेस्ट आता है, इसलिए हकीकत में आप पारंपरिक व्यंजन बड़िल को बनाकर देखें।

ऐसे बनायें बड़िल: छिलके वाली मसूर की दाल को पनचक्की, चक्की या ग्राइंडर से सूजी की तरह दरदरा पीस लें। लोहे की कढ़ाही में पानी गर्म कर खौलायें, पानी और दाल पाउडर का अनुपात बराबर–बराबर रखें पानी थोड़ा ज्यादा रख सकते हैं। फटा–फट इस पाउडर को खौलते पानी में डालें और साथ में नमक, मिर्च और हल्के मसाले भी। कौंचा से अच्छी तरह मिलाएं और पकाते रहें, अच्छी तरह पकने पर कढ़ाही नीचे उतारें और गर्मा–गर्म घोल को बड़ी थाली, परात या ट्रे में डालकर उसे समतल करें जैसे हलवाई मिठाई बनाता है। ठंडा होने पर घोल जम जाता है। अब इसे मिठाई की तरह तेज छुरी से काटें। अलग–अलग टुकड़ियां निकाल लें, तैयार है स्वादिष्ट बड़िल। यदि और मजेदार ढंग से खाना चाहते हैं तो घी या तेल को गर्म कर जख्या और गदरैण का तड़का लगा कर बड़िल छौंक दें। ठंडा होने पर खायें। यह पूरा नाश्ता भी है और सब्जी भी। रोटियां भी इसके साथ खा सकते हैं। साथ में कुछ गर्म पेय हो जाय तो और भी अच्छा। बिल्कुल अलग महक और मजेदार स्वाद का आनन्द और साथ में पोषण वाला बड़िल, ताजा स्नैक्स भी।

आलू का थेच्वांणी

आलू के थेच्वांणी का झट–पट साग में महत्वपूर्ण स्थान है। थेच्वांणी बनाने के लिए छोटे–छोटे आलू ज्यादा उपयुक्त होते हैं। बारीक आलू फेंकने के बजाय उसका सदुपयोग भी कर सकते हैं। आलू को अच्छी तरह धो लें, यदि घर के आलू हैं तो छिलका निकालने की जरूरत भी नहीं। बाजार के आलू का छिलका निकालना जरूरी है। आलू को सिल–बट्टे पर थेचें। थेचने (कूटने) से ही इस व्यंजन का नाम थेच्वांणी पड़ा। थेचे हुए आलू के बारीक–बारीक टुकड़ों को अलग रख दें। अब लोहे की कढ़ाही में घी डालकर जख्या, लहसुन, प्याज का तड़का लगाएं और चट–पट थेचे हुए आलू को उसके साथ भूनें। कुछ देर तक अल्टा–पल्टी कर नमक, मिर्च मसाला डालकर हल्का पानी डालकर मिलाएं और ढक्कन रख दें। थोड़ी देर पकने के बाद करछी से पलट कर तरीदार सब्जी लायक अन्दाज का गर्म पानी डालें, फिर ढक्कन लगा कर पकायें। थेच्वांणी तैयार है। उतारने से पहले हरा धनिया डालना न भूलें।

थेच्वांणी का स्वाद शोरबा जैसा मजेदार लगता है। थेच्वांणी को गाढ़ा करने के लिए छौंकने से पूर्व या थोड़ी देर बाद उसमें गेहूं के आटे या चावल/झंगोरा को भिगो कर व पीस कर, उसका आलण (पेठी) डाल सकते हैं। इससे थेच्वांणी और अधिक स्वादिष्ट होता है।

थेच्वांणी के साथ **झंगोरा,** ज्यादा अच्छा लगता है। **भात** और रोटी के साथ भी मजेदार है।

मूली का थेच्वांणी

पहाड़ी मूली को पौड़ी में और कुमांऊ में मूला भी कहते हैं, इसका थेच्वांणी भी आलू के थेच्वांणी की तरह बनाते हैं। जख्या का तड़का और लहसुन इसे ज्यादा मजेदार बनाता है। भात–झंगोरे के साथ मूला थेच्वांणी का खूब मेल आता है। **आम वाले इलाकों में इसी तरह छोटे-छोटे कच्चे आम के दानों को थेच कर सब्जी बनाते हैं, जिसे अम्वांणी कहते हैं। अम्वांणी-भात खूब पंसद करते हैं**

झोळी

झोळी पहाड़ का पारंपरिक साग है। झोळी बनाने के लिए गेहूं के आटे के साथ छांछ/मट्ठा घोलिए और साथ में नमक, मिर्च, हल्दी व हल्के मसाले। लोहे की कढ़ाही चूल्हे पर चढ़ायें और छौंक के लिए सरसों का तेल डालें। लहसुन, प्याज व मेथी या जख्या का तड़का लगाएं और तैयार घोल को छौंक दें। अच्छी तरह पकायें बीच–बीच में करछी चलाते रहें ताकि कढ़ाही की तली में झोळी न लगे। गंदेला (कढ़ीपत्ता) डालें, मजेदार खुशबू और स्वाद आयेगा। उतारते वक्त हरा धनिया यदि उपलब्ध है तो जरूर डालें। काखड़ी/खीरे के मौसम में थोड़ा सा कद्दूकस कर काखड़ी डालें देखें कितना आनन्द आता है। काखड़ी की महक से झोळी के स्वाद का जायका निःसंदेह बढ़ता है। लौकी भी कद्दूकस कर डाल सकते हैं। झोळी न ज्यादा गाढ़ी हो न ज्यादा पतली, सावधानी यह रहे कि बाद में पानी न डालना पड़े, बाद का पानी भूल कर न डालें, वरना झोळी का मजा किरकिरा हो जायेगा। तैयार है झोळी, मजे से खाइए। झोळी की रैसिपी या झोळी के साथ **सबसे अच्छा लगता है झंगोरा**। झंगोरा न हो तो भात व गेहूं कोदा की रोटी भी अच्छी लगती है। झोळी का मजेदार स्वाद इतना लजीज कि निःसंदेह थाली ही नहीं कढ़ाही चाटने का मन

करेगा, क्योंकि लोहे की कढ़ाही में पपड़ियां ज्यादा स्वादिष्ट होती हैं। पहले घरों में झोळी की कढ़ाही मांजने के लिए दिक्कत नहीं होती थी, बच्चे खुशी–खुशी कढ़ाही मांजने की प्रतीक्षा करते थे। नजर कढ़ाही चाटने पर होती थी। जुकाम के वक्त झोळी खाने का मन करता है। इससे जुकाम ठीक होता है।

मणझोळी

घर में जब **लैदा यानी दूध** दही हो तो ग्रामीणों को दाल या साग की चिंता नहीं। कहावत है ***'जैका घर म लैदू, वैथै साग क्या चैदू'।*** एक जमाने में घर के सदस्यों को खिलाने के लिए स्वादिष्ट मणझोळी जरूर बनती थी। घर के चावलों को खुली डिगची या पतीले में पकाते थे चावल पकाने के लिए 'अदांण' यानी पानी थोड़ा ज्यादा रखते थे। जब चावल 80 प्रतिशत तक पक जाते तो गाढ़ापन आने लगता था। फटाफट बर्तन नीचे उतार कर थाली में मांड पसा देते थे। पुनः चूल्हे पर चावल को भपाने रख देते थे। मांड ठंडा होने पर उसे लकड़ी के बर्तन फुर्रा पर डालते थे और उसके साथ ढिढक्याली (खूब गाढ़ी) दही मिलाते थे। जरूरत अनुसार मोरा नमक, मिर्च, हल्दी, हरा धनिया लहसुन व जीरा सिल–बट्टे से पीसकर डालते थे। मोरा और चोरा मणझोळी का खास मसाला था। कुछ शौकीन लोग लोहे की करछी को गर्म कर उसमें तेल डाल कर लहसुन व जम्बू का छौंक भी लगते थे। मणझोळी सिर्फ चावल के साथ नहीं अपितु झंगोरा के साथ भी खाते थे। झंगोरा के मांड़ की भी मणझोळी बनाते थे। चावल और झंगोरे के साथ मणझोळी चार चांद से ऊपर कई चांद लगा देती थी। लोग सपोड़–सपोड़ कर या सपड़के मार कर मजे से खाते थे और थाली चाटने का आनन्द भी लेते थे। आप भी कभी मणझोळी बनाकर चखें, देखें अपने पुरखों के खानपान का स्वाद। उनकी सेहत का राज भी तो इसी तरह के खानपान में छिपा था। यदि घर में दही नहीं तो पड़ोसी की दी गयी मट्ठा से भी झोळी और मणझोळी बनाने का रिवाज था। घर में लैदा न होने पर पड़ोसियों के घरों से दही मट्ठा बांटने का रिवाज रहा है। ठेठ गांव में आज भी यह रिवाज कायम है। लोग एक दूसरे को अच्छी सेहत के नुस्खे बांटकर, आपस में मेल जोल भी बढ़ाते हैं। यदि मांड न भी निकालें तो दही–मट्ठा में नमक मिर्च–मसाला हरा धनिया डाल कर उसे छौंक कर, आप मणझोळी का मजा ले सकते हैं।

पत्यूड़

उत्तराखण्ड के खानपान में हरे पत्तों से बनने वाले पत्यूड़ का महत्वपूर्ण स्थान है। मौसम अनुसार जिस क्षेत्र में जो भी पत्तेदार साग होता है, उसके पत्यूड़ बनाकर खाने एवं मेहमानों को विशिष्ट व्यंजन के रूप में खिलाने की परंपरा रही है। गढ़वाली/कुमांऊनी खान पान की यह खास डिश है।

पिंडालू के पत्यूड़

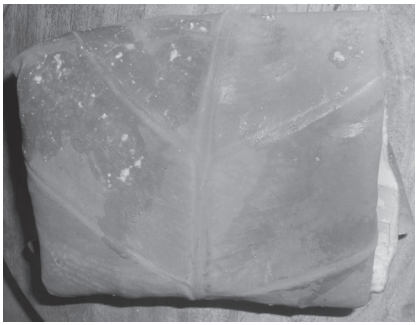

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी त्यौहार के अवसर पर पिंडालू (अरबी) के पत्तों के पत्यूड़ और दूध के पकवान बनाकर बाल भगवान को खिलाने की परंपरा है। सभी लोग बड़े चाव से पत्यूड़ का आनंद लेते हैं। यदि किसी के खेत में पिंडालू नहीं उग रहा है तो पड़ोसी उसे पत्ते दे देता है। दूर–दूर तक नाते रिश्तेदारी में पिंडालू के पत्ते पहुंचाने का रिवाज आज भी है। शहर या कस्बों में रहने वाले लोग भी जन्माष्टमी के दिन पत्यूड़ के लिए पिंडालू के पत्ते सब्जी की दुकान से खरीद लाते हैं।

पत्यूड़ बनाने के लिए पिंडालू के हरे मुलायम पत्तों से डंठल अलग कर पत्तों के बीच का रेशा निकाल दें। एक डोंगे या भगोने में बेसन या गेहूं का आटा अच्छी तरह घोलें, उसमें अंदाज से नमक, मिर्च, लहसुन एवं मसाला मिला दें, थोड़ा गर्म मसाला भी डालें और अच्छी तरह घोंलें। घोल न ज्यादा पतला होना चाहिए न ज्यादा गाढ़ा, अब पिंडालू पत्ते को परात में उल्टा रखकर पूरे पत्ते के ऊपर समान रूप से घोल मलें और फिर पत्ते के ऊपर दूसरा पत्ता चिपका कर उस पर भी घोल मलें और यदि पत्ते

छोटे हैं तो उसके ऊपर एक और पत्ता इसी तरह चिपकायें। यदि पत्ते बड़े हैं तो इसको नीचे से उल्टा मोड़ें फिर उस पर बेसन चिपकायें अब पुनः इसको मोड़ें, पत्ता और छोटा हो जायेगा। मोड़कर बेसन जरूर मलें। इसे तीन–चार इंच आकार में ढालने के लिए पत्ते के छोड़ किनारों को पुनः मोड़ें, इसी तरह अन्य पत्यूड़ तैयार करें। इस तरह के पत्यूड़ को भाप में पकाया जाता है। इसका तरीका बहुत सरल है। जिस पतीले, कढ़ाही या प्रेशर कुकर में पत्यूड़ बनाने हैं, उसके तले पर हरे मक्की के व अन्य साफ पत्तों का मोटा गोल डिल्ला (छल्ला) बना कर रखें और उसमें पानी डाल दें। चार पत्यूड़ के लिए एक डेढ़ गिलास पानी पर्याप्त है। पानी ज्यादा नहीं होना चाहिए वरना पत्युड़ गीले हो जाते हैं। अब पत्यूड़ों को छल्ले के ऊपर रखकर ढक्कन बन्द कर मध्यम आंच में पकायें। सावधानी रखें पत्यूड़ अच्छी तरह पकने चाहिए नहीं तो पिंडालू के पत्तों की 'किंक्वाली' (अजीब तरह की खुजली) खाते समय गले में लगती है। पत्यूड़ पकने के बाद चूल्हे से उतार कर थाली में अलग–अलग कर ठंडे करने रख दें। जब खूब ठंडे हो जायं तो इन्हें छुरी से छोटे–छोटे पीस में काटें। किंतु पीस का आकार ज्यादा छोटा भी न हो। रात के बनाये पत्यूड़ सुबह काटने के लिए अच्छे होते हैं। जल्दी के लिए फ्रिज का उपयोग कर सकते हैं।

अब छौंका या तड़का की बारी है, इसके बिना पत्यूड़ का जायका अधूरा है। लोहे की कढ़ाही गर्म करें, यदि देसी या घर का घी है तो बहुत अच्छी बात है, नहीं तो सरसों का तेल खूब गर्म करें, उसमें चार–छह सूखी लाल मिर्च तलें, जब लाल मिर्च का रंग बदल कर भूरा या काला हो जाय तो छलनी या कौचा से फटाफट मिर्च अलग निकाल लें, पहाड़ी मिर्च की जोरदार खुशबू फैलेगी। और तड़के में लहसुन, जख्या या जीरा डालें, लेकिन सबसे अच्छा तड़का जख्या व लहसुन है। यदि थोड़ा हींग पाउडर या फरण हैं तो आखिर में उसे डाल कर, फटा–फट पत्यूड़ छौंक लें। अच्छी तरह मिलायें, यदि कौचा या करछी का उपयोग पलटने में न करें तो अच्छा है, क्योंकि इससे छोटे–छोटे पीस का टूटने का डर होता है। अच्छी तरह मिलाने के लिए दोनों हाथों से कढ़ाही पकड़ कर पत्यूड़ पलटते रहे। खूब गर्म होने पर परोसें। पत्यूड़ के ऊपर एक–आध भूनी मिर्च जरूर परोसें। पत्यूड़ का नाश्ता खाने में बहुत ही मजेदार होता है। पत्युड़ के साथ रोटियां भी लाजवाब लगती हैं।

राई के पत्यूड़

राई के हरे पत्तों को साफ धोकर बारीक काट लें, उसमें अन्दाज का बेसन या आटा मिलायें। नमक, मिर्च व धनिया पाउडर डाल कर थोड़े–थोड़े पानी की बूंद छिड़कें और अच्छी तरह मिलायें। अच्छी तरह मिलने पर जब गोलियां बनने लायक हो जायें तो खाने लायक सामान्य टिकियानुमा पत्युड़ बनायें। लोहे की कढ़ाही में तेल डाल कर गर्म करें, कुछ लाल मिर्चों को भून कर अलग निकाल लें और गर्म तेल में जख्या या जीरा डालें, फिर फटाफट एक बार में 4–5 पत्यूड़ की टिकियां अलग–अलग डालें। तेल तलने जैसा नहीं होना चाहिए। तेल इतना हो जिसमें पत्यूड़ आधे तेल और आधे भाप से पकें। दो–तीन बार पलटते रहें। पत्यूड़ की टिकिया या गोली को दबाकर पतला कर देना चाहिए। कुरकुरे होने पर कौचा से पत्यूड़ अलग निकाल दें। इस तरह बारी–बारी से थोड़े–थोड़े तेल और तड़का डाल कर और गर्मागर्म पत्यूड़ पकाते रहें और तैयार पत्यूड़ परोसते रहें, देखें खाने में कितना स्वाद और आनन्द आता है। साथ में रोटी और चाय हो जाय तो और भी अच्छा नाश्ता हो जाता है। और हां भूनी मिर्च के शौकीन पत्यूड़ के साथ थोड़ी–भूटी मिर्च का मजा लेना न भुलें।

आप उपरोक्त विधि से बना सकते हैं–

- **मारसा (रामदाने) के हरे पत्तों के पत्यूड़**
- **पालक के पत्तों के पत्यूड़**
- **लौकी की बेल के अग्रिम भाग के मुलायम पत्तों के पत्यूड़**
- **बन्द गोभी के पत्यूड़**

गट्टे

पौड़ी गढ़वाल के कुछ हिस्सों में मारसा की हरी पत्तियां काटकर इस तरह आटे के साथ मिलाकर तेल में तल कर पकाया जाता है इसे गट्टे कहते हैं। गट्टे खूब मजेदार लगते हैं।

तल कर बनायें पत्यूड़

गढ़वाल के कुछ हिस्सों में उपरोक्त पत्तों के पत्यूड़ तलने की विधि से भी बनाये जाते हैं। इसकी विधि है– बेसन का घोल तैयार कर उसमें

नमक, मिर्च, मसाला अच्छी तरह मिला देते हैं। लोहे की कढ़ाही में तेल गर्म करते हैं, और पत्तों को लपेट कर छोटा–छोटा कर उन्हें बेसन के घोल में डुबोकर फटाफट तलते रहते हैं। मारसा, राई, पालक, लौकी की पत्तियां, बन्द गोभी के पत्तों को लपेट कर बेसन के साथ पत्युड़ बना कर खायें। चटणी आप अपनी इच्छानुसार चुन सकते हैं।

खुल्या के पकोड़े

खुल्या एक पत्तेदार जंगली पौधा है। इसके पत्ते पौधों के साथ राई की तरह जमीन से ही लगते हैं। नदी के किनारे या नमी वाले इलाकों में खुल्या खूब होता है। पत्तियों को अच्छी तरह धोकर साफ कर लें, बेसन का घोल बनायें, उसमें जरूरत अनुसार नमक, मिर्च हल्दी आदि डाल दें। अच्छी तरह फेंटे। कढ़ाही में तेल गर्म करें और खुल्या के दो चार पत्तों को एक साथ मोड़ कर उन्हें बेसन के घोल में डूबो कर, फटा–फट खौलते तेल में डालें। पलटते भी रहें, भूरा होने पर उतारते रहें। तैयार है बिल्कुल अलग खुशबू और जोरदार स्वाद वाला खुल्या का पकोड़ा। इसको जो एक बार खायेगा कभी भूल नहीं सकता। **टिहरी गढ़वाल की हेंवलघाटी नागणी में चाय के छोटे होटलों/ढाबों में खुल्या के पकोड़े खूब बनते हैं। दूर-दूर के पर्यटक अपनी गाड़ियां रोक कर खुल्या के पकोड़े खाने आते हैं। स्वाद का मजा बांटने के लिए पैककर घर भी ले जाते हैं। पकोड़ों के साथ पोदीना व हरा धनिया की हरी चटणी और मजेदार लगती है।**

कद्दू के फूलों के पकोड़े

खुल्या के पत्तों की तरह कद्दू के पीले फूलों को चुनकर लाइए, अच्छी तरह देखभाल कर पानी में डूबो कर धो दें किंतु मसलें नहीं वरना फूल टूट जायेंगे। फूलों को बेसन में डुबोयें और तेल में तलें, तैयार हैं आपके लिए कद्दू के फूलों का पकोड़ा, एक नये स्वाद व पहाड़ी अंदाज में।

गंडेरी का साग

गंडेरी का साग कुमांऊ का जोरदार व्यंजन है। देखने में गंडेरी पिंडालू के 'घेणदा' की तरह लगता है किंतु इसका मुंह पिंडालू की तरह सफेद नहीं बल्कि गुलाबी होता है। इसका दाना गोल बेलनाकार होता है। पिंडालू

(अरबी) ठंडा व बादी होता है। किंतु गंडेरी के साग की तासीर गर्म मानी जाती है। साग बनाने के लिए गंडेरी को साफ कर छील लेना चाहिए, तत्पश्चात छुरी की आगे की धार गंडेरी के दाने पर चुभानी चाहिए और फिर जोर देकर कड़–कड़ कर गंडेरी के टुकड़े तोड़ने चाहिए। पूरा कभी नहीं काटते हैं। इसलिए इसके पीस ऊबड़–खाबड़ जैसे होते हैं। गंडेरी पकाने के लिए लोहे की कढ़ाही चूल्हे में रख कर तेल गरम करें। सामान्य लहसुन, प्याज व फरण का तड़का लगायें, व सामान्य मसाला डालें। बहुत कम पानी में गंडेरी पकायें। ढक्कन रखें किंतु बीच–बीच में खूब पलटते रहें। तैयार है गंडेरी का साग। ठंड के दिनों में खायेंगे तो ठंड कोसों दूर भाग जायेगी। खाने का स्वाद और आनन्द आप भूल नहीं सकते। मंडुआ और गेहूं की रोटी के साथ यह साग खाया जाता है।

भुड़के तोमड़ी आलू/आलू गुटका

भुड़के आलू या आलू गुटका पहाड़ी नाश्ते की पुरानी परंपरा की डिश है। इसे आलू छोला भी कहते हैं। आलू की यदि पहाड़ी प्रजातियां हों तो अच्छा और यदि तोमड़ी आलू हो तो बहुत अच्छा। आलू गुटका के लिए सबसे पहले आलू को साफ धोकर कम पानी में उबालें, यदि गंगी, जोशीमठ या मुंस्यारी का लम्बे आकार का तोमड़ी आलू है तो यह जल्दी और पूरा पकता है। आप एक ही छिलके से पूरा आलू छील सकते हैं। छिलका बिल्कुल पतला होता है। छिलके निकलने के बाद आलू के मध्यम आकार के टुकड़े बना लें।

लोहे की कढ़ाही चूल्हे पर रखें और उसमें तड़के के लिए घी/तेल डालें। तेल गर्म होने पर कुछ लाल मिर्चों को तल कर भूरा होने पर अलग निकालें। फिर जख्या व फरण डालें, प्याज भी डाल सकते हैं। नमक व मसाले अंदाज से डालें, मिर्च थोड़ी कम क्यों कि आलू में मिर्च ज्यादा नहीं खपती, मिर्च का मजा लेने के लिए भुनी मिर्च आपके पास है। भूरा होने पर सामान्य टमाटर या चेरी टमाटर को बारीक काट कर अच्छी तरह गलायें और तैयार आलू को इसके साथ छौंक कर सावधानी से पलटते रहें। पुराने समय में तो सिर्फ जख्या का तड़का ही डालते थे। जख्या इसका जोरदार तड़का है। दोनों हाथों से कढ़ाही के हत्थे पकड़ कर भी पलट सकते हैं। बस तैयार है भुड़के आलू या आलू गुटका।

तोमड़ी आलू सर्वोत्तम स्वाद वाला होता है। मजे से नाश्ते में खाइए या खाने के साथ रोटी सब्जी के रूप में सफर में ले जा सकते हैं। और हां गुटके के साथ भुनी हुई मिर्च की खुशबू का मजा भी जरूर लें। बच्चों के स्कूल का अच्छा टिफन है। तोमड़ी आलू के बराबर स्वादिष्ट देश में कोई दूसरा आलू नहीं है।

पिंडालू गुटका

पिंडालू गुटका भी आलू की तरह बनाते हैं। पिंडालू गुटकों में तड़के के लिए काला जीरा और लहसुन ज्यादा अच्छा लगता हैं। काला जीरा कड़वा होता है लेकिन पिंडालू के साथ इसका कड़वापन गायब हो जाता है। सीजन पर भुड़के पिंडालू बड़े शौक से खाये जाते हैं। मेहमानों को विशेष व्यंजन के रूप में खिलाये जाते हैं। भुटी मिर्च इसका शृंगार है। साथ में चटणी का आनंद ले सकते हैं। टिहरी गढ़वाल की हेंवलघाटी में कुजणी और धमांदस्यूं पट्टी के पिंडालू के पकवान प्रसिद्ध हैं।

तल्ड गुटका

जंगली तल्ड व सग्वाड़े (किचन गार्डन) में उगाये हुए तल्ड का भी पहाड़ के लोग गुटका बनाते हैं। शिवरात्रि व्रत में तो तल्ड का खास प्रसाद माना जाता है। शिवरात्रि के दिन दूर–दूर के जंगलों से तल्ड खोद कर लाये जाते हैं। तल्ड की दर्जनों प्रजातियां पायी जाती हैं। तल्ड के अलावा गेंठी, बेबर एवं मेंग्वा जैसे अन्य दर्जनों तरह के कंद भी खाये जाते हैं। तल्ड मधुमेह की दवाई भी है।

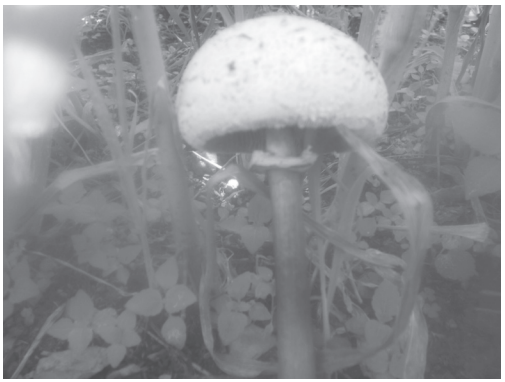

चटणी

चटणी पहाड़ ही नहीं अपितु देश के अन्य हिस्सों के खानपान का महत्वपूर्ण हिस्सा है। चटणी शब्द संभवत चाटने से बना होगा, यह ऐसी विधा है जिसे हम चाटकर या चटकारे लेकर खाते हैं। चटणी के व्यंजन का उद्‌गम स्थल भारत ही माना जाता है, अंग्रेजी शब्द कोष में चटणी के लिए कोई शब्द नहीं है।

उत्तराखण्ड में विविध तरह की चटणी बनाने व खाने का चलन रहा है।

आइए देखें चटणी की विविधता

हरी पत्तियों की चटणी

हरा धनिया • पुदीना • लहसुन की पत्तियां • अमिल्डा की पत्तियों की चटणी • भिमल्डी की चटणी • तिपतिया (खट्टे खाड़) आदि की चटणी।

भड़पकी चटणी

चूल्हे की गर्म राख या कोयलों के अन्दर आलू, टमाटर, अदरख आदि को भूनकर बनायी जाने वाली चटणी।

फलों की चटणी

टमाटर • आंवला • चुलू • खुमानी • पुलम • आलू बुखारा • आडू • टांक • नाशपाती • नाक • बग्गूगोशा • सेब • टिमरू के बीज • बुरांश के फूल • आम एवं अमाड़ा आदि की चटणी।

दलहन-तिलहन की चटणी

भट्ट एवं सोयाबीन की चटणी • भगंजीर की चटणी • तिल की चटणी • भांग की चटणी • तोड़िया • सरसों • राई • लाही की चटणी आदि

नोटः कुल मिलाकर **30 से अधिक** तरह की चटणी अलग–अलग क्षेत्रों में प्रचलित हैं। इसकी सामग्री नमक व जीरे के अलावा सब स्थानीय हैं।

आप यदि भंगजीर, तिल एवं भांग की चटणी बिना किसी हरे पत्तों के बनाना चाहते हैं तो हर एक का अलग–अलग स्वाद है। लेकिन इन्हें भूनना जरूर चाहिए। भुनने से घर खुशबू से महकता है, साथ ही जीभ भी खाने के लिए मचलने लगती है।

हरी चटणी

हरी चटणी का मजा खाने में तो है ही साथ ही इसे देखने में भी मजा आता है और इसकी खुशबू भी जोरदार होती है। हरी चटणी के लिए हरा धनिया, पुदीना एवं लहसुन के हरे पत्तों की जरूरत पड़ती है, अदरक भी मिला सकते हैं। पत्तों को साफ कर अच्छी तरह धोकर सिल–बट्टे से पीसें, साथ में एक आध टमाटर व लहसुन–प्याज भी उसमें मिला सकते हैं। स्वादानुसार नमक, हरी मिर्च एवं मसाले मिला लें। यदि मसाला न भी हो तब भी चटणी के स्वाद में फर्क नहीं पड़ता, यह चटणी रोगियों के लिए भी उपयुक्त होती है, भूख भी बढ़ाती है।

भट्ट की चटणी/घुरयुंट

लोहे की कढ़ाही या तवा अच्छी तरह गर्म करें और उसमें एक–दो मुट्ठी काले या भूरे भट्ट डालें, सूती कपड़े से चट–पट हिलाते रहें, जब भट्ट बोलने लगें तड़–तड़, तो नीचे उतार दें। यदि भट्ट उपलब्ध नहीं तो सोयाबीन भी उपयोग में ला सकते हैं।

भूने हुए भट्ट को सिल–बट्टे या मिक्सी में पीसें, उसके साथ थोड़ा हरा पुदीना मिला सकते हैं। नमक–मिर्च अपनी जरूरत अनुसार, चटणी न पतली हो न ज्यादा सख्त। खट्टे के लिए नींबू या चेरी (छोटे) टमाटर डाल सकते हैं। नाश्ते या खाने के साथ मजेदार लगती है। कुमांऊ में भट्ट की चटणी घुरयुंट के नाम से मशहूर है।

तिल की चटणी

सफेद–काले एवं भूरे, किसी भी तरह के तिल या तिल्ली की चटणी भी भट्ट की तरह भून कर बनाते हैं। भूनने में सावधानी बरतने की जरूरत है, ज्यादा देर भुनने से चटणी कड़वा हो जायेगी। हरा धनिया व पुदीना मिला सकते हैं।

भंगजीर की खास चटणी

भंगजीर सिर्फ पहाड़ी क्षेत्रों में पैदा होती है। यह एक तिलहन है। भंगजीर की चटणी भी भूनकर बनाते हैं। कुमांऊनी में इसे भंगीरा कहते है। भंगजीर काली भी होती है। ध्यान रहे कि भंगजीर आसानी से भुन जाती है, जलनी नहीं चाहिए। पीसने में भी आसान होती है। यह देखने में सफेद यानी नारियल की चटणी की तरह लगती है। हरा धनिया या पुदीना अन्य पत्ते डालने पर चटणी अर्ध सफेद लगती है। स्वाद एवं गुणवता में मजेदार है।

भांग की चटणी

भांग से डरिये नहीं यह नशे के लिए नहीं है। खेतों में उगाई जाने वाली भांग के दाने मोटे–मोटे होते हैं। इन्हें भूनने में तिल भंगजीर की अपेक्षा ज्यादा समय लगता है। इसका दाना सख्त होता है, अच्छी तरह पीसना चाहिए, भांग के दानों की तासीर गर्म होती है। यह सर्दियों के लिए ज्यादा अच्छी है। इसकी तासीर ठंडी करने के लिए साथ में हरा धनिया व पुदीना मिलाना चाहिए।

भूनकर बनाये जाने वाली चटणी में तोड़िया, सरसों, राई, लाही की भी जोरदार चटणी बनती है। यह चटणी हलकी कड़वी लगती है, किंतु खाने में जायकेदार-मजेदार है।

चुलू की चटणी

चुलू की चटणी गर्मियों में खाई जाने वाली मशहूर चटणी है। चटणी बनाने के लिए पके चुलू/खुमानी का गूदा ढेलों से अलग कर लें, और उसमें पोदीना, लहसुन एवं प्याज मिला कर सिल–बट्टे से पीसकर हल्का नमक, मिर्च व सामान्य मसाला मिला लें, चटणी लसपसी बननी चाहिए। यदि चुलू ज्यादा खट्टे किस्म के हैं तो चटणी भी ज्यादा खट्टी होगी खट्टापन दूर करने के लिए उसमें थोड़ा गुड़ या चीनी मिलानी चाहिए, तब देखें कितनी जोरदार चटणी बनती है। चटणी रोटियों के साथ तो अच्छी लगती ही है, साथ ही इसके साथ आप भात/झंगोरा भी खा सकते हैं। दाल एवं सब्जी का काम भी चटणी कर सकती है। इसके स्वाद का अलग आनन्द है।

उपरोक्त तरीके से बनाइए

आलू बुखारा, सेब, टांक, आडु, नाशपाती, नाक, बग्गूगोशा एवं पुलम की चटणी, और मजे से चटकारे लेकर खायें।

भड़पक्की चटणी

चूल्हे के भाड़ या गर्म राख के अन्दर आलू के छोटे–छोटे दाने ढक दीजिए, यदि चूल्हा खूब गर्म है तो 20 मिनट से भी कम समय में आलू भुन कर पक जायेगा। आलू के एक चौथाई हिस्से में टमाटर के दाने भी इसी तरह भूनें किंतु टमाटर तो दो–चार मिनट से भी कम समय में पक जाते हैं। दोनों चीजों का छिलका अच्छी तरह उतारकर उसमें हरी या भुनी मिर्च, नमक व हल्के मसाले आदि डालें। यदि थोड़ा भुना हुआ अदरक हो जाये तो और भी अच्छा है, इन्हें सिल–बट्टे पर पीस लें। तैयार हो गयी भड़पक्की चटणी। यह चटणी पेट की गैस नाशक है।

सुंट्या

सुंट्या एक तरह की खट्टी मिट्ठी चटणी है। कढ़ाही में तेल गर्म कर उसके साथ धनिया और लाल मिर्च तल कर उसमें गुड़ और इमली का पानी डाल कर उबालते हैं और उसके साथ छुआरा, अदरख, नारियल गरी व किशमिश बारीक काटकर, कौंचे से घुमाते रहते हैं। खूब देर गाढ़ा होने तक पकाते हैं। गढ़वाल में श्राद्ध के अवसर पर सुंट्या विशेष व्यंजन है। इसे लोग खूब चटकारे लेकर चाटते हैं। यह पाचन के लिए अच्छा माना जाता है। गढ़वाल में शादी या अन्य उत्सव में सुंट्या वर्जित है।

खटाई/चूक (गलगल) रळाना

सर्दियों या बसंत के मौसम में जब धूप खूब खिली होती है तो गांव की महिलायें व युवतियां गलगल को छील कर, छिलकों का स्वाद भी चखते हैं और फिर उसकी एक–एक फांक का छिलका निकाल कर अन्दर के गूदे के छोटे–छोटे टुकड़े कर पत्तल या स्टील की थाली में जमा करते हैं। यह बहुत खट्टा होता है, इसीलिए गलगल को खटाई भी कहते हैं। इस खटाई को बनाते–बनाते (रळते–रळते) लोगों के मुंह में पानी आने लगता है। लेकिन इसे यूं ही नहीं खाते हैं, इसके साथ लहसुन–नमक,

मिर्च, हल्दी, हल्का मसाला, चीनी और दूध की मलाई अच्छी तरह मिलाते हैं। फिर मिल–बांट कर खाते हैं। इस रळाई खटाई को कोई गटक–गटक के खाता है तो कोई चबा–चबा कर। लेकिन खटाई पर धूप नहीं लगनी चाहिए अन्यथा कड़वी हो जायेगी। पहले गांव की महिलाएं सर्दियों में धूप में बैठकर धूप भी सेंकती थीं और समूह में गपशप मारते हुए रळाई खटाई का आनन्द भी लेती थीं।

इसी तरह माल्टे, जमीर व चकोतरा को भी रळाया व खाया जाता है।

काली खटाई

खट्टे के कुछ शौकीन लोग गलगल के रस को निकाल कर उसे खूब उबाल कर पका कर रख लेते हैं। पकाने पर यह रस जम जाता है, इसी को काली खटाई कहते हैं। इसको लम्बे समय तक रखा जा सकता है। खट्टे की जरूरत पड़ने पर इसके बहुत छोटे टुकड़े इस्तेमाल किए जाते हैं।

इसी तरह दालिमू (दाड़िम) के बीजों से भी खटाई बनायी जाती है। कुमांऊ के ग्रामीण इलाकों में काली खटाई अब भी बनायी जाती है। इसे दाड़िम का चूक कहते हैं। यह कब्ज, उल्टी एवं दस्त रोकने की दवा है।

रैलु / रायता

कुमाऊंनी रायता

ककड़ी (खीरे) का रायता तो सामान्य रूप से सब जगह बनता है, किंतु कुमाऊंनी रायता मशहूर है। रायते के लिए एक दो दिन पूर्व मिट्टी या लकड़ी के बर्तन में दही जमाते हैं और दही के साथ राई या सरसों के बीजों का पाउडर मिला देते हैं। राई–सरसों से दही में जोरदार क्रिया होती है। अगले दिन उसमें ककड़ी/खीरा कद्दूकस कर डालते हैं, और जरूरत अनुसार नमक, मिर्च, मसाला मिला कर राई, जम्बू का छौंका लगा देते हैं। इसे कहते है कुमाऊंनी रायता। खाने में स्वादिष्ट और मजेदार, यह रायता शादी या अन्य सभी समारोहों में भी खाया जाता है। गढ़वाल में सामान्य रैलु/रायता बनता है। गढ़वाल में शादियों के भोज में रायता खिलाना अशुभ माना जाता हैं लेकिन श्राद्ध में रायता जरूर बनता है। कुमांऊनी रायता बहुत ही स्वादिष्ट व पाचक होता है। खाते समय नाक के अन्दर राई/सरसों की चिरमिरी महक ऐसी दस्तक देती है कि खाने

वाला जीवन भर नहीं भूलता। हर तरह के नाश्ते में घर के अलावा छोटे होटल व ढाबों में भी यह रायता खाया जाता है। गढ़वाल में रायते को रैलु कहते है, रैलु सामान्य ढंग से बनता है।

गढ़वाल का रैठू

पके कद्दू को काट कर अंदर का गूदा व बीज अलग कर उसके मोटे–मोटे टुकड़े कर बहुत कम पानी में उबालें। छिलका न उतारें, उबलने पर ठंडा होने दें। इसको अन्दर से खायेंगे तो गुड़ जैसी मिठास आयेगी। इसकी तासीर ठंडी होती है। रैठू बनाने के लिए उबले कद्दू के टुकड़े मसल कर चूर–चूर कर उसमें दही मिलायें। नमक, मिर्च व मसाले इच्छानुसार डालें। तैयार है कद्दू का रैठू। रैठू को और जायकेदार बनाने के लिए मेथी, जीरे या राई का तड़का लोहे की करछी से लगा कर छौंक सकते हैं। रैठू झंगोरा के साथ सपड़का मार कर खाने में ज्यादा स्वादिष्ट लगता है। भात व रोटी के साथ भी खा सकते हैं, बहुत ही स्वादिष्ट और सुपाच्य है। रैठू खाने के बाद फिर जल्दी भूख लग जायेगी। मट्ठा के साथ भी रैठू बनाया जा सकता है।

साकिना की कथेली

साकिना की कलियां फूल आने से पूर्व या अर्ध फूल सहित उबालें। उबलने के बाद फूलों की छोटी–छोटी डंडियां अलग कर लें। इन फूलों को सिल–बट्टे से पीस कर मसीटा तैयार करें। इसे दही के साथ मिलाइए अपनी इच्छानुसार नमक, मिर्च, मसाला डालें। तैयार है साकिना का स्वादिष्ट रायता। गढ़वाली में इसे कथेली कहते हैं। **पेट के लिए यह बहुत उपयोगी है। आंव-मरोड़ या दस्त की रामबाण औषधि है।**

- पारंपरिक ज्ञान की जानकार महिलायें दवा के लिए साकिना की कलियों को सुखा कर रख देती हैं और बेमौसम में कभी भी रायता बना कर खाते हैं, या दवा के रूप में इस्तेमाल करते हैं।
- उबले साकिना से भरी रोटियां और परांठे भी खूब जायकेदार बनते हैं।
- उबले साकिना को छौंक कर जोरदार सूखी भुजी/भाजी भी बनती है।

कचनार/गुरियाल की कलियों का रायता

कचनार/गुरियाल की कलियों को उबाल कर भी साकिना की तरह इस्तेमाल करते हैं।

विशेष– गुरियाल की कलियों को उबालकर, हल्का सुखाकर सामान्य ढंग से अचार बनाने की विधि से स्वादिष्ट जोरदार अचार बनाया जाता है।

सांदन की कलियों/फूलों को उबालकर भी उपरोक्त विधि अनुसार रायता व अचार बनाया जाता है।

मारसा (रामदाना) के हरे साग का रायता

मारसा के हरे साग का रायता खाने की परंपरा पुरानी है। रायता बनाने के लिए मारसा के पौधे की हरी मुलायम पत्तियां व अग्रभाग को अच्छी तरह साफ करें, और इन्हें किसी पतीले में ढक्कन रख कर उबालें, पकने पर पतीला नीचे उतारें। चिमटे से ढक्कन अलग कर लें। शरीर के किसी भी हिस्से में इसकी तेज भाप लगनी खतरनाक मानी जाती है। भाप से शरीर में सूजन आ सकती है। ठंडा होने पर इस साग को दोनों हाथों से निचोड़ कर पानी निथार दें। इसे सिल–बट्टे पर पीस लें या यों ही अच्छी तरह से मसल कर व करछी से घोट कर महीन बना दें। ताजे दही के साथ इसे अच्छी तरह मिलायें, नमक, मिर्च एवं मसाले इच्छानुसार डालें, तैयार है मारसा का हरा रायता। झंगोरा, चावल व रोटी के साथ खाने में खूब स्वाद आयेगा। यह स्वादिष्ट ही नहीं अपितु खूब पौष्टिक भी है। गर्मी/बरसात के दिनों में गरीबों के लिए प्रकृति का मुफ्त का पौष्टिक उपहार, इसमें लौह तत्व सबसे अधिक होता है। उबले मारसा को छौंक कर सूखे साग के रूप में भी खाया जाता है।

बथुआ का रायता

उपरोक्त विधि से बथुआ का रायता भी बनाया जाता है। जंगली बथुआ के अलावा हिमालयी बथुआ की पत्तियां बहुत बड़ी होती हैं, यह ज्यादा स्वादिष्ट व पौष्टिक होता है। उबला बथुआ ठंडा करना जरूरी है।

आलू का रायता

पहाड़ी तोमड़ी, खोपटी या सामान्य आलू को साफ कर कम पानी में उबालें, छिलका निकाल कर उन्हें हाथ से चूर–चूर करें। लेकिन मसीटा न होने

दें। ताजा दही निकाल कर आलू के साथ अच्छी तरह मिलायें, लहसुन मोरा व धनिया वाला नमक मिलायें। राई या जख्या के तड़के के साथ छौंक सकते हैं। तैयार है आलू का रायता, भात, झंगोरा व रोटी के साथ मजेदार लगता है। पहाड़ी आलू की पारंपरिक किस्म नहीं है तो किसी भी प्रकार के आलू का रायता बना सकते हैं।

सूप और पेय

गहथ का सूप

सर्दियों में गहथ का सूप बहुत ताजगी, स्फूर्ति एवं जाड़ा भगाने वाला पेय है। गहथ की दाल को भडडू या अन्य किसी भी बर्तन में धीमी आंच में पकायें। पकने पर उल्टी करछी से अच्छी तरह देर तक घोटते रहें। यदि जल्दी है तो कुछ सिल–बट्टे से पीस सकते हैं। फिर हल्की आंच में चढ़ा दें, नमक, मिर्च, लहसुन, टमाटर हल्दी, डाल कर पकाते रहें। अंदाज का गर्म पानी डालें और पकाते रहें। बर्तन चूल्हे से उतारने से पूर्व उसमें घर का मक्खन भी जरूरत अनुसार डाल सकते हैं, और गिलास, कुल्हड़ या चीनी मिट्टी के कप में गरमा गरम, परोसें। शौक से पियें, पीते–पीते आपका जाड़ा दूर भाग जायेगा। एक नई ताकत का संचार शरीर में होगा। यदि गुर्दे की पथरी है तो लगातार एक माह तक सामान्य सूप पीने से पथरी टूट–टूट कर निकलती रहेगी। उससे आराम मिलेगा। बची दाल को रोटी व चावल के साथ खाइए।

अन्य दालों के सूप

इसी तरह आप तोर, नौरंगी, मिक्स दाल व कंडाली आदि विभिन्न सब्जियों के सूप का परमानंद उठा सकते हैं। सर्दियों के लिए ये सूप मजेदार और ठंड भागने वाले हैं।

पल्लर-दूनघाटी की पेय संस्कृति

पल्लर दून घाटी के गांवों का मशहूर पारंपरिक पेय है जो मट्ठा से बनाया जाता है। शादी व अन्य समारोहों में परोसा जाने वाला यह पेय गौरव और अच्छे स्वास्थ्य का प्रतीक है। लेकिन सिर्फ शादी समारोह नहीं

अपितु दैनिक खानपान में भी आप पल्लर का आनंद लेकर अपना हाजमा व स्वास्थ्य दुरुस्त कर सकते हैं।

पल्लर बनाने के लिए एक मिट्टी के घड़े जिसे माठ कहते हैं, को साफ कर सुखा दें। थोड़ा सा हींग, इलायचीदाना, लौंग व काली मिर्च का पाउडर बना लें और शुद्ध देसी घी के साथ उसका पेस्ट बना कर, गोबर के कंड़े को पूरा जला कर उसके साबुत अंगारे के ऊपर यह पेस्ट रखें धुंआ उठने लगेगा उसके ऊपर सुखाये गये घड़े को उल्टा कर रख दें ताकि धुंआ घड़े के अन्दर घुस जाय। धुएं की महक से घड़ा शुद्ध और खुशबू युक्त हो जायेगा। पूरा पेस्ट जलने के बाद धुंआ भी खत्म हो जायेगा। अब घड़े में आधे से अधिक या तीन चौथाई हिस्से में ताजा मट्ठा/छांछ साफ कपड़े से छान कर डालें। उसमें हल्दी पाउडर और राई दानों को पीसकर पाउडर बना कर अच्छी तरह छांछ के साथ मिलायें। यह पूरे घड़े के अन्दाज से होना चाहिए। अब इसे छौंकने के लिए गोबर के उपलों के तेज अंगारों के बीच मिट्टी के खाली कसोरे (गिलास या कटोरे के आकार का बर्तन) रखें। कसोरे खूब गर्म होने पर उसमें शुद्ध सरसों का तेल अन्दाज से डालें। जब तेल खूब गर्म हो जाय यानी कसोरे लाल गर्म हो जायं तो उनमें तड़के के लिए पहले धनिया डालें भूरा होने पर जीरा और लाल मिर्च कसोरे तड़के सहित जलने लगेंगे। पूरा न जलने दें, बस फटा–फट चिमटे से पकड़ कर कसोरों को ही सीधे घड़ें में डाल कर मट्ठा छौंक लें। सावधानी रखें छौंकते समय घड़े से आग की लपटें पैदा होती हैं, इसके बचाव के लिए घड़े का मुंह ढकने के लिए गोल पेंदे वाली डेगची या भड्डू घड़े के ऊपर रखें किंतु आग बाहर निकालने के लिए उसे विपरीत दिशा से खुला करते रहें। यदि अपनी तरफ खोलेंगे

सरसों तेल राई–जीरे
का तड़का कसोरे

गोबर के कंडों
की आग

पराल का हिंडवा (डिल्ला)

चित्र एवं जानकारी भूपाल सिंह कृशाली

तो आग की लपट से जलने का खतरा है। पूरे माठ के अन्दाज से नमक मिर्च डाल दें। फिर घड़े के खाली हिस्से को पानी से भर दें, नमक मिर्च का अंदाज चख लें। घड़े को सावधानी से घर के अन्दर रखें और घड़े को भड्डू या डेगची के ढक्कन से एअर टाइट करने के लिए घड़े और ढक्कन के जोड़ को गीले आटे से अच्छी तरह बंद कर दें। तीन दिन तक इसे छेड़ें नहीं, चौथे दिन इसे खोलें। तैयार है जायकेदार हाजमेदार स्वादिष्ट पल्लर। इसे कप में नहीं बड़े–बड़े गिलासों में परोसें। पल्लर, आप पियेंगे तो वाह... वाह कर पीते रह जायेंगे।

पल्लर के फायदे

पल्लर पीने के बाद भारी से भारी खाना भी आसानी से हज़म हो जाता है। निसंदेह यह हाजमा दुरस्त करता है। पेट साफ करता है, खूब भूख लगती है। वैसे भी आयुर्वेद में दोपहर के खाने के बाद मट्ठा पीना औषधि माना गया है किंतु मट्ठा के पल्लर बनने से उसके गुणों में और ज्यादा वृद्धि हो जाती है। पेट के रोगों की यह अचूक दवा है। दून घाटी के गांवों में खानपान की संस्कृति का यह महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसीलिए शादी समारोह में आये मेहमान शौक से पल्लर पीते हैं और शर्म व झिझक को दूर फेंक कर पल्लर ठेकियों (डिब्बों) व बोतलों में भर–भर कर अपने प्रियजनों के लिए गर्व से घर ले जाना नहीं भूलते। कई–कई दिन तक पल्लर खराब नहीं होता। पल्लर गिफ्ट पैक की तरह इस्तेमाल होता है। शादी या उत्सव में पल्लर दिल खोल कर बनाते हैं। सारे गांव में घर–घर से मट्ठा इकट्ठा करते हैं 3, 5, 7, 9, 11, 13 अजोड़ मद में मटकों में भरकर बनाते हैं। गांवों में पल्लर बनाने के विशेषज्ञ होते हैं।

पर शादियां या उत्सव तो रोज–रोज नहीं होते, तो फिर पल्लर कैसे पियें? लेकिन आप छोटे घड़े में पल्लर बनाकर रोज पी सकते हैं और आने–जाने वालों को **बहुराष्ट्रीय कंपनियों के जहर युक्त शीतल पेय की जगह पल्लर का अमृत पिला सकते हैं। उत्तराखण्ड के होटल एवं टूरिस्ट व्यवसाय में लगे लोगों को अपने मीनू में यह पेय अवश्य जोड़ना चाहिए।** और जी हां पौष्टिक पल्लर मट्ठा का सम्मान ही नहीं अपितु पशु पालन का सम्मान भी बढ़ाता है। मट्ठा उत्तराखण्ड की संस्कृति का महत्वपूर्ण हिस्सा है। मट्ठा–अड़ोस–पड़ोस का धर्म भाईचारा व अच्छी सेहत का विचार भी बांटता है।

छांछ के टुकड़े... गट्यांक छा

कुमाऊं के दूरस्थ ग्रामीण इलाकों में यदि आप चले गये और ग्रामीण छांछ से आप का स्वागत करना चाहें तो आप से पूछेंगे, "छांछ खाओगे क्या?" आप सोचेंगे, ग्रामीण व्याकरण की गलती कर रहा है, आप कहेंगे, खानी क्या है, हम छांछ पियेंगे... ले आओ एक गिलास, ग्रामीण चम्मच या छुरी से काट–काट कर गिलास में छांछ के टुकड़े भर कर आपके सामने रख देगा। आप चक्कर में पड़ जाओगे यह छांछ है या पनीर या आइसक्रीम के टुकड़े। टेस्ट करेंगे तो खट्टा। निसंदेह यह छांछ होता है। इसे आप टुकड़े बना–बना कर खा सकते हैं, परंतु एक गिलास या पाव भर छांछ खाना आसान नहीं। हां आप इसको दो–तीन टुकड़े आसानी से पानी के साथ मिला कर घोल वाला छांछ या मट्ठा बना कर पी भी सकते हैं, इसी टुकड़े युक्त छांछ को कहा जाता है "गट्यांक छा"। **गुजरात, महाराष्ट्र में इस तरह की छांछ को श्रीखण्ड** कहते हैं, जिसे मीठा मिलाकर खाते हैं।

कैसे बनाया जाता है गट्यांक छा

ताजे मट्ठे को एक विशेष किस्म के मोटे कपड़े में डालकर इसे अच्छी तरह से निचोड़ कर टाइट बांध देते हैं। जब सारा पानी निथर जाता है तो मट्ठा (छांछ) का डला ठोस रूप में जम जाता है। यही छांछ के टुकड़े हैं गट्यांक छा। इन्हें आप पीस बनाकर परोस सकते हैं। किसान जब यात्रा या खेत में दूर काम करने जाते हैं तो दो–चार टुकड़े 'गट्यांक छा' रख देते हैं, जरूरत पड़ने पर इन्हें पानी के साथ घोल कर नमक, मिर्च मसाला मिलाकर तृप्ति से मट्ठा पीते हैं या रोटी के साथ छोटे–छोटे टुकड़ों में खाते हैं। गट्यांक छा लम्बे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

कफल्वाणी : एक अद्भुत पेय

काफल के फल के रस को कफल्वाणी कहते हैं। कफल्वाणी बनाने के लिए काफल के पक्के फलों को थोड़े–थोड़े सिल–बट्टे पर रगड़ कर बाहर का गूदा अलग करें। ढेलों को भी अच्छी तरह धोकर फिर रगड़ लें, ताकि पूरा गूदा या उसकी गिरवी निकल जाय। इसे रखने के लिए सबसे उपयुक्त बर्तन लकड़ी का फुर्रा, मिट्टी या चीनी मिट्टी का होता है। एल्यूमुनियम, पीतल व तांबे के बर्तन कतई नहीं चाहिए। स्टील का बर्तन इस्तेमाल कर सकते हैं। रस न ज्यादा गाढ़ा न हो, न ज्यादा पतला, अंदाज का पानी

मिला दें। इच्छानुसार नमक, मिर्च मसाला अच्छी तरह मिलायें। अब लोहे की करछी चूल्हे पर रख कर गर्म करें और उसमें थोड़ा सा सरसों का तेल डालें। तड़के के लिए जीरा, जख्या, फरण या जम्बू अच्छा है। तड़का जले नहीं फटाफट कफल्वाणी छौंक दें। तैयार है कफल्वाणी, इसे आप पेय या शोरबे के रूप में पी सकते हैं और पिला सकते हैं। पीने में मजा आयेगा, मन करता है, एक गिलास नहीं कई गिलास गटक लें।

न सब्जी, न दाल, सिर्फ कफल्वाणी

कफल्वाणी पतला होता है। उसका गूदा थोड़ा–थोड़े दिखाई देता है, लेकिन भात–झंगोरे के साथ जब इसे साग के रूप में परोसेंगे तो खाने में इतना स्वादिष्ट लगेगा कि इसके मुकाबले दाल–सब्जी बेकार है। कफल्वाणी का स्वाद और मजा आप कभी नहीं भूल सकते। भात झंगोरे के साथ वाला कफल्वाणी थोड़ा गाढ़ा रखें, दिल और दिमाग भी तृप्त हो जायेगा। एक और मजेदार अनुभव यह आयेगा कि ढाई–तीन घंटे में ही आपको पुनः भूख लग जायेगी। निसंदेह कफल्वाणी पाचक और खूब रेचक है।

काफल या कफल्वाणी खाते समय आपको *'काफल पाको मै नि चाखो'* पक्षी और उससे जुड़ी कहानी जरूर याद आयेगी, देखें पेज xii, और लोकगीत *'बेडू पाको बारामासा, नरैणी काफल पाको चैत',* भी जरूर गुनगुनाने लगेंगे। गीत भले ही सबके हृदय में बसा है किंतु न बेडू बारह महीने पकता है न काफल चैत में। काफल तो बैशाख के अंत या जेठ के महीने ही अपना अमिट स्वाद देता है। लेकिन इस गीत की धुन कफल्वाण ी की तरह लोगों के मन में बसी है। काफल की याद में भटकने वाला पक्षी सीजन में जरूर बोलता सुनायी देता है– *'काफल पाको– मै नि चाखों'। काफल पाको...*

काफल दवा भी

काफल वात–पित्त को ठीक करता है। गले के लिए फायदेमंद है व कब्ज दूर करता है, शीतलता प्रदान करता है। त्वचा को स्वस्थ बनाकर झुर्रियां दूर करता है। काफल के पेड़ की छाल भी औषधि के काम आती है।

कफल्वाणी भूख बढ़ाता है। कृमि नाशक है और पेट साफ करता है। पेट की गैस दूर करता है, गर्मी शांत करता है।

चाय नहीं... हर्बल चाय/कुदरती पेय

पहाड़ों में घर–घर चाय आये अभी ज्यादा से ज्यादा 40–50 साल हुए हैं। लेकिन खानेपीने की संस्कृति में अब पहला आदर–सत्कार चाय से ही होता है। चाय पीना हमारा शौक भी है और मजबूरी भी, एक बार आदत पड़ गयी तो छोड़ना मुस्किल है। एक जमाने में आम घरों में चाय नहीं बनती थी। मेहमानों का आदर–सत्कार भी दूध, दही व मट्ठा से करते थे। आरम्भ में चाय शुद्ध प्राकृतिक पत्तियों के रूप में थी किंतु आज बाजार से आने वाली चाय में कई हानिकारक रंग व रसायन मिले हैं जो सेहत के लिए खतरनाक हैं।

चाय के विकल्प के रूप में पहाड़ों में स्वास्थ्य के लिए कई लाभकारी वनस्पति, जड़ी बूटियां व फसलें उपलब्ध हैं जिनसे स्वादिष्ट, मजेदार गरमा–गरम पेय बनता है। सर्दी, जुकाम, गला, सिरदर्द बदन दर्द व थकान दूर करने में ये पेय बहुत उपयोगी हैं, और चाय का फालतू खर्च अलग से कम करते हैं। ये पेय हर्बल चाय के रूप में भी जाने जाते हैं, खास–खास वनस्पतियां हैं–

1. तुलसी, 2. कंडाली (बिच्छू घास), 3. कोशड़ियाली (बनफ्शा), 4. दालचीनी की पत्तियां 5. पुदीना, 6. पिपरमेंट, 7. थुनेर-रौसली, 8. रोजमैरी, 9. बुरांश के फूल, 10. लैमन ग्रास, 11. नींबू, 12. हिमालयी वन तुलसी, 13. कैमोमाइल फूल, 14. इचिनीशिआ फूल, 15. अदरक का पेय, 16. कुंजा (जंगली गुलाब) के बीजों का पेय 17. भंगजीर की पत्तियों का पेय, 18. मोरा की पत्तियों का पेय, 19. चोरू की जड़ का पेय 20. थाइमा का पेय आदि।

उपरोक्त वनस्पतियों की पत्तियां व फूल आदि को छाया में सुखा कर साबुत या पाउडर बनाकर चाय की तरह उबाल कर गुड़, चीनी/शहद डालकर मजेदार पेय की चुस्कियां ले सकते हैं। डिप चाय के रूप में भी इस्तेमाल कर सकते हैं। इन पेयों के साथ दूध की जरूरत भी नहीं, किंतु यदि मन करे तो कुछ पेय में दूध इस्तेमाल कर सकते हैं। नींबू हरेक हर्बल पेय में खप सकता है।

घर की कॉफी/गेंहू की कॉफी

गेहूं के साबुत दानों को अच्छी तरह भूनें और उसका पाउडर बनाकर दूध के साथ खूब उबाल कर, मीठा मिला कर पियें। आपको बिल्कुल

कॉफी का एहसास होगा। **कोदा की कॉफी** देखें मंडुआ माल्ट पेज 15 पर।

रैमोड़ी दुनिया का अद्भुत सलाद

एक जमाने में गांवों के लोग मिल–जुल कर चौपाल में बैठ कर रैमोड़ी खाते थे। बसंत आगमन पर जब विविध तरह की हरी कलियां एवं फल–फूल खिल आते थे तो महिलायें व बच्चे अपने खेतों के आस–पास या जंगल से इन्हें एक स्थान पर इकट्ठा कर बड़ी थाली या परात में रखते थे। विविध तरह की सामग्री को मिश्रित करने का एक अलग तरीका था, रै... मोड़ी या रै मुड़ी यानी उन्हें छुरी से बिना काटे इस तरह तोड़ना–मरोड़ना है, जैसे छांछ मट्ठा बिलोने की 'रै' घूमती है। लेकिन सारी विविधता का कीमा भी नहीं बनाना है, विविध तरह का स्वाद भी कायम रहना चाहिए, इसे कहा जाता था रैमोड़ी। रैमोड़ी की विशेषज्ञ महिलायें ही होती थीं। रैमोड़ी में जरूरत अनुसार नमक, मिर्च, डालते थे। चटपटा बनाने के लिए नींबू का खट्टा और थोड़ा सा घर का चुलू या सरसों का कच्चा तेल भी डालते थे। सब लोग मिल बैठकर बड़ी शांति, प्रेम व भाईचारे से आनंदित व उत्साहित होकर रैमोड़ी का रसास्वादन करते थे। रैमोड़ी खाकर वे कई तरह के पौष्टिक तत्वों को अपने शरीर में समेट लेते थे। रैमोड़ी से वे रीचार्ज हो जाते थे। हंसी–खुशी के माहौल में तो चार चांद नहीं, दर्जनों चांद लग जाते थे। आज भी कई स्थानों पर रैमोड़ी खाने का चलन है, किंतु पुराने जैसा माहौल और उतनी विविधता नहीं रही।

आइए आप भी बनाएं रैमोड़ी, इसके लिए निम्न में से कुछ सामग्री तो आप के आस–पास जरूर होगी– **1. बुरांश के फूल 2. प्याज की हरी पत्तियां छोटे-छोटे प्याज सहित 3. लहसुन की हरी पत्तियां 4. हरा धनिया 5. छोटी बहुत मुलायम मूली पत्तियां 6. राई की मुलायम कलियां 7. लाही की कली 8. मटर के पौधे की कलियां, मुलायम फलियां 9. घाल्डा की कलियां 10. घेंडुड़ी (पक्षी नहीं, घेंडुड़ी पौधा भी होता है) की कलियां 11. तोमड़ी की कलियां 12. कुरफली के पौधे की कलियां। 13. साकिना के फूल 14. बुढ़णी के फूल 15. कंडरा की जड़ें 16. तिलण्या 17. गुरियाल के फूल की कलियां 18. चकोतरा, नींबू का खट्टा आदि। सामग्री इकट्ठी होने पर बनाईए जोरदार रैमोड़ी।**

रैमोड़ी से पेट भले ही नहीं भरता, किंतु हंसी–खुशी मेल–मुलाकात से मानसिक खुराक और जैविक विविधतायुक्त वनस्पतियों के प्राकृतिक स्वाद के नवाण से सालभर के लिए शरीर में रोग रोधक "रजिस्टेंस" क्षमता आ जाती है। आप हर एक नये सीजन में नियमित रैमोड़ी खा सकते हैं। निसंदेह रैमोड़ी को दुनिया का अद्‌भुत सलाद कहा जा सकता है।

कलेऊ, पैणा और उत्सव के व्यंजन

कलेऊ और पैणा पहाड़ की खानपान की संस्कृति का महत्वपूर्ण हिस्सा है। बेटी को जब ससुराल भेजना हो तो उसके साथ घर में बना कलेऊ (कलेवा) जरूर दिया जाता है। कलेऊ में उड़द की दाल के पकोड़े, अरसे व रोटाना आदि मुख्य हैं। पहले हलवा भी कलेऊ में दिया जाता था। अब तो दुकान में बनी मिठाइयां इसका स्थान ले रही हैं। कलेऊ का मजेदार स्वाद उसकी ससुराल के सिर्फ अपने परिवार के लोग चखें और बाकी गांव समाज देखता रहे, यह तो न सामाजिक न्याय है न सामाजिक प्रेम–भाव। इसलिए हरेक ग्राम समाज का नियम है कि प्रत्येक परिवार किसी भी उत्सव के अवसर पर आने वाले या बनाये जाने वाले कलेऊ का एक छोटा हिस्सा गांव समाज के अन्य परिवारों तक भी पहुंचाये। चाहे एक परिवार के हिस्से एक पकोड़ी और एक अरसा ही क्यों न आये। इसे 'पैणा' कहते हैं। लेकिन जिस घर में पैणा आयेगा उस परिवार के भी सभी सदस्य छोटी–छोटी टुकड़ी चखने के हिस्सेदार होते हैं। घर के सभी सदस्यों को परसाद की तरह पैणा–कलेऊ बांटा जाता है। सबको पता चल जाता है कि फलानी बहू ससुराल आ गयी है या बेटी मायके आ गयी है। यदि किसी का सामाजिक बहिष्कार है तो उसका "पैणा बरजात" यानी उसे 'पैणा' से वर्जित किया जाता है। न कोई उसे पैणा देगा न उसका पैणा लेगा। यह जात बिरादरी से सामाजिक बहिष्कार का तरीका है। पैणा सामाजिक एकता व समरसता का प्रतीक है। पैणा के अलावा बीड़ा (दो चार अरसे पकोड़े आदि का पौकेट) नाते–रिश्तेदारों को देना कोई नहीं भूल सकता, भूलने का मतलब है नाराजगी।

पकोड़ा एक सर्वश्रेष्ठ व्यंजन

पकोड़े तो कई चीजों के और कई तरह से बनते हैं, किंतु गढ़वाल में उड़द की दाल से बनने वाले पकोड़ों की खास सांस्कृतिक पहचान है।

कोई भी शुभ कार्य जन्म दिन, मुण्डन, शादी, दीपावली, बल्दराज, वसंत पंचमी पूजन, वास्तु पूजा व गृह प्रवेश आदि घर में बने पकोड़ों के बिना पूरे नहीं होते। सभी शुभ कार्यों में घर में तैखाण (पकोड़ों के बनने की महक) हवा में फैलनी चाहिए। हां, किसी घर में सदस्य की मृत्यु "अबाजु" होने पर पकोड़े बनने पूर्ण वर्जित हैं। लेकिन मृतक के श्राद्ध के अवसर पर बनने वाले पकोड़ों से तैका खुल जाता है। पकोड़ों से शुभ कार्यों की शुरुआत होती है। लड़की की ससुराल बिदायी या अन्य अवसर पर उड़द के पकोड़े खास कलेवा हैं। पकोड़े जब बनते हैं तो उसकी खुशबू को तैखाण कहते हैं। ऐसी तैखाण (महक) अन्य पकवानों में नहीं आती। दूर–दूर तक जब तैखाण फैलती है तो पकोड़ों की महक से, मन पकोड़े खाने को मचलने लगता है। आपका मन भी मचल रहा होगा पर पहले जानिए कैसे बनते हैं पकोड़े–

उड़द की छिलके वाली दली दाल को ठंडे पानी में अच्छी तरह 8–10 घंटे तक भिगाने रखें। भीगी हुई दाल को अच्छी तरह मसल कर उसमें ज्यादा पानी डालें और आटे छानने की छलनी से छिलके अलग कर लें कुछ छिलके रह भी जायें तो कोई बात नहीं। अब इस दाल से पानी पूरी तरह निथार दें। और इसे सिल–बट्टे, मिक्सी, या हैंड ग्रांइडर से पीस कर मसीटा बनायें। मसीटे में अन्दाज का नमक–मिर्च धनिया व जीरा पाउडर मिलायें। और अच्छी तरह फेंटे। इसमें थोड़ा सा हींग पाउडर व सरसों तेल भी मिलाइए, पकोड़े पाथने या उसका आकार गढ़ने के लिए एक समतल घेरे के ढक्कन वाला डिब्बा निकालें, पहले घरों में सेर को उल्टा करके थाले से यह काम होता था। उसके ऊपर एक साफ गीला कपड़ा या साफ पालिथीन बिछा दें।

लोहे की कढ़ाही चूल्हे पर रखें, उसे गर्म होने पर उसमें अन्दाज का सरसों का तेल या रिफाइंड डाल कर गर्म होने दें। मसीटे के पास एक लोटे में पानी जरूर रखें। पानी से हथेली भिगोकर मसीटे की गोली बनायें। गोली को डिब्बे के ऊपर रखें, साफ गीले कपड़े पर रख कर गोल पाथें व ठीक मध्य पर उंगली के बराबर छेद करें। एक कटोरी में तिल, जख्या, जीरा या भंगजीर रखें और दो उंगलियों को तिल या जख्या की कटोरी में डालें, तिल/जख्या उंगली में चिपक जायेगा, इसे छेद के चारों ओर मान्यतानुसार पांच छापें लगायें। इसे छुपका कहते हैं। अब पानी के हाथ से फटाफट पकोड़ी बनाकर खौलते तेल में बारी–बारी से तलते रहें

व पलटते रहें, और पकी पकोड़ी निकालते रहें। निकालने के लिए तार (सींक) के टुकड़े का इस्तेमाल कर सकते हैं। पकोड़े भूरे होने पर ही निकालें, और हां पहली घान के दो–चार पकोड़े देवताओं व पितरों के नाम चूल्हे के ऊपर किसी बर्तन में जरूर अलग रखते हैं, जिन्हें बाद में रोट या परसाद के रूप में सबको बांटा जाता है। साथ में एक लोटे पर पानी भी भर कर रखना तैका का नियम है। इसके पीछे मान्यता जो भी किंतु अकस्मात अग्नि दुर्घटना में यह रामबाण औषधि है।

गर्मा गर्म पकोड़े परोसते रहें, गर्म पकोड़े बहुत स्वादिष्ट लगते हैं। इन पर लगा, तिल, जख्या व भंगजीर का छुपका और अधिक कुरकुरा लगता है। पकोड़े के साथ पहाड़ी संस्कृति के अनुसार शुद्ध घर्या (देसी) घी या मक्खन जरूर चाहिए। इससे स्वाद भी बढ़ता है और पचने में मदद भी मिलती है। किंतु आप चाहें तो भंगजीर या तिल की चटणी का आनंद भी ले सकते हैं। ये पकोड़े "बड़ा" जैसे मोटे नहीं होते हैं, ये पतले होते हैं और पूरी तरह अन्दर–बाहर पककर, अच्छी तरह फूल जाते हैं। इसीलिए इनके बराबर स्वादिष्ट कोई दूसरा पकोड़ा देश में नहीं बनता। लेकिन खाइए जरा संभल के... ज्यादा भी नहीं। कुरकुरे या जमजमे पकोड़ों से मन नहीं भरता, यदि 'रस्याण' अच्छी हो तो पकोड़े यादगार बन जाते हैं। **उड़द की दाल के पकोड़े तो खास सगुन हैं किंतु अलग-अलग स्वाद एवं सुपाच्य की दृष्टि से सुंटा (लोबिया), नौंरगी, भट, मूंग एवं चने की दली दाल के भी पकोड़े बनाये जाते हैं।** हां धुली दाल के पकोड़े इतने स्वादिष्ट और अच्छे नहीं बनते।

स्वांला

स्वांला गढ़वाली कलेवा/कलेऊ भी संस्कृति में पकोड़े के साथ दूसरा व्यंजन है। दीपावली, पंचमी, एकादशी दीवाली के दिन पकोड़ों के साथ–साथ स्वांले भी जरूर बनाये जाते हैं।

मीठा स्वांला

गुड़ को पानी में अच्छी तरह घोलकर गेहूं के आटे के अंदाज अनुपात में तैयार कर इससे आटा गूंथे। आटा अच्छी तरह गूंथना है। आटा तैयार होने पर स्वांले सरसों तेल/रिफाइंड में तलिए। गर्म स्वांला एवं ठंडा

स्वांला दोनों का अलग–अलग आनन्द है। इसे मीठी पूरी भी कह सकते हैं। लेकिन पूरी में वह स्वाद नहीं जो स्वांले में है।

मरस्वांला

मरस्वांला/मरसोला लाल चौलाई के आटे का स्वांला है। बनाने का तरीका दोनों का एक ही है, फर्क सिर्फ इतना है कि लाल चौलाई के आटे का रंग हल्का गुलाबी होता है, और इसे गूंथनें में मुश्किलें आती हैं, भारी लिचलिचा होता है, स्वांले जब तल कर तैयार होते हैं तो खूब फूलते हैं और अन्दर से तोड़ कर यदि देखें तो मधुमक्खियों के छत्ते के कांसले की तरह लगते हैं। मरस्वांला सामान्य स्वांलों से ज्यादा स्वादिष्ट होते हैं। पुराने समय में दीपावली के दिन बड़ी शौक से मातायें मरस्वांले बनाती थीं।

बेल्डा स्वांला (भरे स्वांले)

बेल्डे (भरे) स्वांलों को आप खूब विविधता से तैयार कर सकते हैं। **आलू, राजमा, नौरंगी, रगड़वांस, गहथ, सुंटा (लोबिया) एवं मसूर आदि के भरे स्वांले बनाने की परंपरा है।** सर्व प्रथम आपको चुनना है आप किस चीज के भरे स्वांलों का आनन्द लेना चाहते हैं। जरूरत अनुसार दाल को साफ कर खड़ा उबालें और सूप/पानी निथार दें। दालों को या आलू को सिल–बट्टे/मिक्सी में पीसें। मसीटा (पेस्ट) तैयार होने पर उसमें नमक–मिर्च एवं मसाला मिलायें। हां खास स्वाद और आनंद के लिए उसमें लहसुन, हरा धनिया, हींग व मोरा आदि मिलाना न भूलें। लेकिन मसीटा एक दम पतला या बारीक नहीं होना चाहिए। आटा अच्छी तरह गूंथ कर गोली बना कर उसमें अन्दर बड़े जतन और सावधानी से मसीटा इस तरह भरें ताकि बेलते समय पूरे स्वांले में फैल जाय और मसीटा बाहर न निकले। कढ़ाही में तेल गर्म करें और तलिए, तैयार हो गये आपके बेल्डे (भरे) स्वांले गरमा–गर्म परोसें। साथ में यदि मक्खन– घी या चटणी आदि हो तो और मजा आ जायेगा, ऊपर से थोड़ी–थोड़ी गरमा गर्म चाय...।

अरसा

अरसा गढ़वाल के कलेवा की संस्कृति में सबसे महत्वपूर्ण पकवान/मिठाई है। पहले सब जगह लड़के या लड़की की शादी के अवसर पर सलाह

पट्टा एवं दुरागमन/दुणोंज में अरसों का कंड या कंडी जरूर दी जाती थी। आज कई जगह अरसों का स्थान हलवाई की मिठाई–लड्डू व मट्ठी आदि ने ले लिया है। अरसा बनाना शादियों में आज भी शुभ माना जाता है। एक शादी में औसत 60–70 किलोग्राम चावल के अरसे बनते हैं। शादी में दूर–दराज या शहरों से आने वाले रिश्तेदारों को भी अरसों का बीड़ा (भेंट) दिया जाता है। दूर–दूर तक नाते–रिश्तेदारी में अरसे का 'बीड़ा' यानी यादगारी का गिफ्ट पैक जरूर भेजा जाता है।

आइए जानें, कैसे बनता है अरसा

अरसा खाने में जितना स्वादिष्ट और मजेदार है, बनाने में उतना ही कठिन तकनीकी वाला है। यदि बनाने में उसका अनुपात गड़बड़ हो गया तो स्वाद भी जायेगा और पूरी सामग्री भी बेकार चली जायेगी। अरसा बनाने में काफी सावधानी बरतनी पड़ती है। यह मुख्यतः चावल और गुड़ से बनता है। चावल और गुड़ का अनुपात 4:3 का होना चाहिए। हां मीठा यदि ज्यादा पसन्द है तो गुड़ की मात्रा थोड़ा बढ़ा सकते हैं। सामान्य रूप में चावल माना 1 किलोग्राम हैं तो 750 ग्राम गुड़ की जरूरत होती है। सर्दियों में गुड़ की मात्रा थोड़ा बढ़ा सकते हैं। चावल को साफ कर एक बड़े बर्तन में खुले पानी में रात को अच्छी तरह भिगो देना चाहिए। अगले दिन चावलों को निथार कर पानी अलग कर दें। अब इन चावलों को ओखली में अच्छी तरह कूट कर पिट्ठी बनानी चाहिए। पिट्ठी/पिट्ठू कूटने के लिए गांव की महिलायें इकट्ठी होती हैं। मिल–बांट कर ओखली में पिट्ठू कूटती हैं। यदि कम मात्रा में बनाने हैं तो मिक्सी में पीस सकते हैं। पिट्ठी छलनी से छान कर ढक कर रख दें। अब एक कढ़ाही को चूल्हे पर रख कर गर्म करें। उसमें थोड़ा सा पानी डालें। यदि गुड़ माना 40 किलो भी है तब भी आधा–एक लीटर पानी डालें। पानी में तुरंत टूटा हुआ गुड़ डालकर गर्म करना चाहिए। गुड़ की चासनी खूब पकायें। जब उसमें खूब उबाल आने लगे और गुड़ की खुशबू आने लगे तो कौंचा या बड़ी करछी से उसे हिलाते या चलाते रहें, दो–तीन तार की चासनी अच्छी मानी जाती है। इसे जांचने के लिए एक कांसे की थाली में आधा पानी भरें। उसमें उबलते गुड़ की दो–चार बूंदें डालें, यदि चासनी (गुड़) घुल जाय तो अभी चासनी तैयार नहीं, और यदि थाली के तल में जम कर गोली बनने लगे तो उसे खींच कर या दो उंगुलियों के बीच दबा कर

चिपाचिप कर देखें यदि दो से अधिक तार बन रहे हों तो चासनी उतार कर उसमें तुरंत पिट्ठी डालना शुरू करें। एक या दो आदमी मसल–मसल कर बारीक पिट्ठी डालें और दूसरे कौचा या लकड़ी की छड़ से उसे चासनी के साथ जोर लगा कर उल्टा–सीधा घुमाते रहें। यह बहुत कठिन काम भी है। इस प्रकिया को ताग लगाना कहते हैं। ताग मिलाते समय उसमें स्वाद व पौष्टिकता बढ़ाने के लिए सफेद/काले तिल और बारीक सौंफ मिलाइए। जब पिट्ठी पूरी हो जाये तब भी ताग को जोर–जोर से उल्टा–सीधा घुमाना चाहिए। गांव के विशेषज्ञ लोग मिलकर दो डंडों या कोंचों को मिलाकर ताग घुमाते हैं। यदि ताग गलती से गीला हो जाय तो उसके साथ थोड़ा सा कोदा का आटा या सूजी मिलाइए।

ताग तैयार होने पर इसे परात में निकाल लें, और लोहे की पकवान बनाने वाली चौड़े आकार की कढ़ाही चूल्हे या भट्टी में रख कर सरसों का तेल डालें। तेल गर्म होने पर, ताग की गोलियां कच्चे तेल के हाथ से बना कर उन्हें हल्के से दोनों हाथों से पाथें, और फटाफट तलते रहें। पाथा हुआ ताग या अरसा खौलते तेल में डालेंगे तो वह नीचे जायेगा और पकने पर ऊपर आयेगा, थोड़ा–थोड़ा पलटते रहें और जब अरसा भूरे रंग का हो जाये तो निकालते रहें। अरसे की घान नहीं डालते हैं अपितु एक–दो के क्रम में डालते व उसी क्रम में निकालते हैं। ज्यादा डालने पर अरसे कढ़ाई के तल में चिपक कर इकट्ठे हो जाते हैं। तैयार अरसों को खुली टोकरियों के बजाये पतीलों में रखते जायें, इससे अरसे कड़कड़े नहीं होते हैं। पतीले भरने पर उसे ढक दें। पतीले की गर्मी से अरसे पक जाते हैं और मुलायम रहते हैं।

अरसे कुरकरे किंतु मुलायम अच्छी तरह पकने चाहिए। यदि अरसे की सिर्फ पपड़ी पके और अन्दर ताग कच्चा रहे तो वह अच्छा नहीं लगेगा। इसलिए ताग अच्छा बनायें, ताग कठोर नहीं होना चाहिए और गोली को पाथ कर पतला जरूर बनायें। तैयार है स्वादिष्ट अरसा, किंतु खाने के लिए आपको ठंडा होने की इंतजारी करनी पड़ेगी, गर्म–गर्म खाने से पेट खराब हो जायेगा। अच्छे बने अरसे सर्दियों में दो–तीन महीने तक सुरक्षित रहते हैं। अरसों का जोरदार स्वाद आता है, इसलिए आप खाते न जायें जीभ पर नियंत्रण जरूर रखें। अच्छे अरसे की पहचान है– अरसा अन्दर बाहर पूरा पका हो और जिस बर्तन में अरसा रखा हो उसके नीचे तेल छूट जाय।

गुलगुले...

गढ़वाल के अनेक हिस्सों में आज भी गुलगुले बनाने का रिवाज है। आप भी यदि गुलगुले बनाना चाहते हैं, तो आटे के आधे अनुपात में गुड़ पानी के साथ घोलें। घोल न ज्यादा पतला हो न ज्यादा गाढ़ा। इस घोल में थोड़ा सौंफ भी मिला सकते हैं। घोल खूब फेंटें। चूल्हे पर कढ़ाही रख कर गर्म करें और सरसों/तोड़िया का तेल डालें। जब तेल खूब गर्म हो जाय तो फटाफट करछी से घोल डालते जाये, एक घान में 4–5 गुलगुले पक जायेंगे। गुलगुले का रंग जब हल्का लाल–भूरा हो जाय तो निकालते रहें। गर्मा–गर्म खा सकते हैं, नाश्ते एवं इधर–उधर ले जाने के लिए यह अच्छा पकवान/नाश्ता है।

रोटाना

रोटाना गढ़वाल का एक और कलेवा है, जो शादी या अन्य समारोहों के अवसर पर बनाया जाता है। अरसे और पकोड़ों की तरह लड़की की ससुराल बिदायी के अवसर पर गढ़वाल के अनेक इलाकों में रोटाने बनाये जाते हैं। रोटाना बनाने के लिए गेहूं का आटा, गुड़, रिफाइंड, सौंफ एवं कद्दूकस किया हुआ नारियल चाहिए। शुद्ध दूध और घी भी मिला सकते हैं।

आटे का एक चौथाई गुड़ अच्छी तरह पानी में घोल कर मीठे पानी से आटा गूथें, आटे और पानी का अंदाज भी ध्यान से देखें, कोशिश करें पानी बेकार न जाय। आटा गूंथते समय उसमें थोड़ा सा दूध, रिफाइंड/घी बारीक सौंफ व नारियल गिरी मिला दें, आटा अच्छी तरह किंतु सख्त गूंथे। इतना सख्त जिसकी गोलियां बन सकें और गोलियां दबाने पर फटे भी नहीं। स्थानीय मिस्त्री से निर्मित लकड़ी का बना सांचा अक्सर किसी घर में होता है। इस सांचे पर थोड़ा तेल लगाकर इसमें गोली रखें और दबाते जायें। लोहे की कढ़ाही चूल्हे में रख कर उसमें तेल गर्म करें, लेकिन आंच हल्की मध्यम रखें। अब रोटाना तलते रहें और भूरे होने पर निकालते रहें। रोटाना ठंडे होने के बाद मजे से खाइए। खूब स्वाद आयेगा। रोटाना को कई महीनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। तभी तो इसे कलेवा में दूर–दूर तक पहुंचाया जाता है। यह कलेवा की संस्कृति का मुख्य हिस्सा है। और यात्रा या काम के मौके के लिए तैयार फास्ट फूड/देसी अल्पाहार भी है।

असक्याः- जौनपुर का पकवान

असक्या जौनपुर पट्टी (टिहरी गढ़वाल) का मशहूर व्यंजन है। दीपावली के एक दिन पहले असक्या पकवान त्यौहार बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है।

असक्या झंगोरा, कौणी, चीणा, मक्का एवं गेहूं के मिश्रित आटे से बनता है। झंगोरा, कौणी एवं चीणा को ओखली में कूट कर अच्छी तरह साफ कर मक्का एवं गेहूं आदि के साथ घराट से दरदरा (मोटा) पीसकर लाते हैं। असक्या मीठा भी बनता है और नमकीन भी। मीठा असक्या बनाने के लिए चार पांच तरह के मिश्रित आटे को गुड़ के पानी के साथ घोल बनाते हैं और नमकीन के लिए नमक व हल्का मसाला मिलाते हैं। घोल न ज्यादा पतला होना चाहिए न ज्यादा सख्त, घोल को अच्छी तरह फेंटते हैं। पहले असक्या पकाने के लिए मिट्टी का चौड़ा तवे की तरह का बर्तन होता था किंतु पहाड़ों में कुम्हारों का धन्धा बंद होने से अब लोहे के बड़े तवे पर ही असक्या बनाते हैं। तवा मध्यम आंच में गर्मकर उसमें हल्का तेल डालते हैं और ऊपर से करछी की सहायता से मिश्रित आटे का घोल फैलाते हैं। असक्या रोटी से बड़ा बनता है, असक्या न ज्यादा पतला हो न ज्यादा मोटा, डोसे से थोड़े मोटा बनता है। इसको ढकने के लिए स्पेशल ढक्कन होता है, जिसे कापड़ कहते हैं। कापड़ का आकार दूध के बड़े डिब्बों (ठेकी) के ढक्कन जैसा होता है, जिसके ऊपर हत्था लगा होता है। घोल फैलाने के बाद फटाफट ढक देते हैं, नीचे से असक्या आंच और तेल से पकता है और ऊपर भाप से। उसे पलटते नहीं हैं, थोड़ी देर में असक्या पक कर तैयार हो जाता है। लेकिन करारा करने के लिए आप पलट भी सकते हैं। ढक्कन हटा कर चम्मच या चिमटे से निकाल कर गर्मागरम परोसते हैं। इसके ऊपर मक्खन, घी व शहद लगा कर खाया जाता है। बहुत ही मजेदार स्वाद, कुरकुरा, आप खाते जायेंगे, मेहमानों के लिए यह विशिष्ट व्यंजन है। इसका स्वाद आप जीवन में कभी नहीं भूल सकते। असक्या को यदि होटल या बाजार में लाया जाय तो यह दक्षिण भारतीय डोसे को भी पीछे छोड़ कर आगे निकल सकता है।

बाबर भी खाइए

भारतीय इतिहास में चर्चित बाबर के नाम से कई लोग घृणा करते हैं। लेकिन कुमांऊ के कुछ हिस्सों के लोग बाबर से बहुत प्रेम करते हैं। यह

बाबर खाने का स्वादिष्ट व्यंजन है। बाबर बनाने के लिए चावलों को पानी में रात भर भिगो कर रखें, सुबह पानी अलग निथार दें और चावलों को ओखली में कूटें। यह आटे जैसा बन जायेगा, इसे चावल की पिट्ठी कहा जाता है। इस पिट्ठी को पानी के साथ लसपसा घोल बनायें। चिकना और स्वादिष्ट बनाने के लिए इसमें उदाल की जड़ या चारे के पेड़ गेंठी की छाल को साफ कर कूट कर उसका लेप इसके साथ मिलायें। यह बहुत चिकना होता है। अब यह पिट्ठी बहुत ही चिपचिपी और गाढ़ी हो जाती है। इसमें मीठे के लिए गुड़ या चीनी मिला देना चाहिए। तवा गर्म कर उसमें सरसों का तेल फैला कर कटोरे या करछी से पिट्ठी डालकर फैलायें, और अच्छी तरह अदल–बदल कर पकायें, तैयार है स्वादिष्ट बाबर। इसे गर्मागर्म खाईए। ठंडा होने पर भी इसे खाया जाता है। नैनीताल के ओखलवांडा के गौनियारौ क्षेत्र में आज भी बाबर को बड़े शौक से बनाते हैं और आनन्द से खाते हैं।

कुमांऊनी लाडू

लाडू बनाने के लिए चावल का आटा पीसते हैं। इस आटे को लोहे की कढ़ाही में घी के साथ तब तक भूना जाता है जब तक यह भूरा न हो जाय। गुड़ की चासनी तैयार कर, भुने हुए आटे को चासनी के साथ अच्छी तरह मिलाते हैं। फिर सब लोग फटा–फट इसको मुट्ठी में लम्बे साइज में कसकर, दबा–दबा कर या ढाल कर अलग रखते जाते हैं। इसे लाडू कहते हैं। यह एक तरह का लम्बे आकार का लड्डू ही है, जिसे लाडू कहा जाता है। समाज के लोग मिलजुल कर लाडू बनाते हैं। लाडू बहुत ही स्वादिष्ट होता है। शादियों का यह खास पकवान है।

घेंजा

गढ़वाल में 28 गते पूष को मनाये जाने वाले त्यौहार को घेंजा कहते हैं। उस दिन झंगोरा व कौणी के आटे से बनने वाले पकवान को घेंजा का त्योहार कहते हैं। पकवानों में सबसे सादा, सुपाच्य व सबसे पौष्टिक घेंजा ही है। यह गरीबों का त्यौहार तो है ही साथ ही झंगोरा व कौणी की उपयोगिता भी बढ़ाता है।

मीठा घेंजा

सबसे पहले गुड़ को अंदाज के पानी के साथ मिलाकर तैयार करते हैं। झंगोरा/कौणी का आटा पीस कर या ग्राइंड कर पहले से रखते हैं। झंगोरा/कौणी आटा मीठे पानी के साथ गूंथा जाता है। अब पकवान बनाने के लिए एक डेगची या पतीले में बांज की पत्तियों को छोटी टहनियों सहित गोल छल्ला बना कर बर्तन के तले में रखा जाता है। यदि बांज की टहनी न मिले तो कोई भी इस तरह की साफ हरी पत्तियां होनी चाहिए। इस छल्ले के नीचे अन्दाज का पानी डालते हैं। झंगोरा/कौणी के आटे की टिकिया इतनी बड़ी बनाते हैं जो नींबू (गलगल) की पत्तियों के अन्दर आ जाय। हर एक टिकिया नींबू पत्तों के अन्दर रख कर पतीले के अन्दर छल्ले के ऊपर परत दर परत रखते हैं और अच्छी तरह ढक कर चूल्हे की आंच तेज करते हैं। छल्ले के ऊपर रखे घेंजा पूरी तरह भाप में पकाते हैं। बस तैयार है स्वादिष्ट सुपाच्य घेंजा। थोड़ा सब्र रखें, ज्यादा गर्म नहीं, ठंडा होने पर घेंजा नींबू के पत्तों को छोड़ देगा। नींबू के पत्तों की जोरदार महक के साथ खायें मजेदार व स्वादिष्ट घेंजा।

नमकीन घेंजा

ठीक उपरोक्त तरीके से नमकीन घेंजा भी बनाया जाता है। फर्क सिर्फ इतना है कि गुड़ की जगह नमक–मिर्च मिलाते हैं। नमकीन घेंजा दही के साथ भी खाया जाता है।

भरी दाल का घेंजा

झंगोरे के गूंथे आटे के अन्दर कुछ लोग, नौरंगी, तोर या राजमा की उबली दाल का मसीटा नमक–मिर्च हल्दी मिला कर भरवा घेंजा भी उपरोक्त तरीके से पकाते हैं और दही के साथ खाते हैं। तेल घी से परहेज रखने वालों के लिए घेंजा का पकवान बहुत उपयोगी है।

पापड़ी

पापड़ी का त्यौहार बिखोत संक्राति यानी बैशाख की एक गते मनाया जाता है। उस दिन घरों में परपंरागत पापड़ी जरूर तली जाती है। किंतु कुछ गांव, घरों, परिवारों में पापड़ी 'हाड' यानी वर्जित होती हैं, जब तक

उनके घर या कुल में उस दिन गाय नहीं ब्यायी, तब तक पीढ़ियों तक भी पापड़ी नहीं बनेंगी। 'हाड' पड़ने की मुख्य वजह त्योहार के दिन किसी ग्रामवासी की मृत्यु होती है। पापड़ी बनाने के लिए चावल के आटे को पानी के साथ घोल बना कर अच्छी तरह फेंटे। उसमें बहुत हल्का नमक मिला सकते हैं। चूल्हे के ऊपर एक बड़ा–चौड़ा पतीला रख कर उसमें एक–दो लोटे पानी डालें और ढक्कन लगा दें। आंच खूब तेज करें, जब पानी उबलने लगे तो ढक्कन को साफ कर उसके ऊपर, करछी से चावल के आटे का घोल पुड़ी के आकर में फैलायें और पकने पर निकालते रहें, नई बनाते रहें।

तैयार पापड़ियों को तख्त/चारपायी के ऊपर साफ कपड़ा बिछा कर धूप में सुखायें। बिखोत संक्राति त्यौहार के अवसर पर पापड़ी और आटे के स्वांले तेल के साथ तले जाते हैं। तली हुयी पापड़ी खाने में बहुत मजा आता है। लेकिन ज्यादा न खायें, प्यास बहुत लगेगी। साथ में चाय या अन्य गर्म पेय की चुस्कियों ले सकते हैं। यह पारंपरिक फास्टफूड है। तैयार पापड़ी कभी भी तल कर खाइए/खिलाइए।

यह त्यौहार फुल्यारियों का सम्मान भी करता है। वसन्त के शुभागमन पर पूरे चैत के महीने सुबह–सुबह घर की देहरी में फूल डालने वाले बच्चों/फुल्यारियों को बिखोत संक्राति के दिन पापड़ी के पकवान बड़े सम्मान व प्रेम से खिलाये जाते हैं।

इन्ड्रा

इन्ड्रा गहथ (कुलथ) की कच्ची दाल के मसीटे से बनाये जाते हैं। दाल को रात को अच्छी तरह भिगो कर सुबह सिल–बट्टे से पीस कर मसीटा तैयार कर उसमें हल्का नमक–मिर्च मिलाकर, गोलियां पाथ कर नींबू (गलगल) के पत्तों के अन्दर रखते हैं। खुले पतीले में पकने वाले चावल या झंगोरा को आखिर में भपाते समय ऊपर से नींबू के पत्तों के अन्दर सावधानी से रखते हैं। और ढक्कन लगा देते हैं। दस–पन्द्रह मिनट में भाप से यह पक जाता है। इसे इन्ड्रा कहते हैं। इन्ड्रे खाने में खूब स्वादिष्ट लगते हैं। गहथ की दाल चावल की भाप और नींबू के पत्तों के जोरदार स्वाद की महक का मजा लेने के लिए पूर्वजों के इस सुपाच्य पकवान को बनाकर जरूर खायें। इंड्रा को आप अधपक्का या पूरा पका कुछ भी कहें। लेकिन यह सुपाच्य स्वादिष्ट पौष्टिक पकवान है।

घ्वेल्डा/हिरन का पकवान

घ्वेल्डा–घुरड़ यानी जंगली हिरन के मारने व उसका मांस खाना तो अपराध है। हिंसा न करें, लेकिन शाकाहारी घुरड़ तो आप खा ही सकते हैं। जेठ के महीने की संक्राति के दिन घ्वेल्डा बनाये जाते हैं। उस दिन गेहूं के आटे को गुड़ के पानी के साथ गूंथ कर घुरड़ का आकार दिया जाता है सींग, पूंछ, टांगें सब कुछ। आटे के घुरड़ों को गर्म तेल की कढ़ाही में तला जाता है, और मजे में घुरड़ (घ्वेल्डा) खाया जाता है। इसे घ्वेल्डा त्यौहार कहते हैं।

आटे का परसाद/गुड़झोळी

पहले सूजी का चलन गढ़वाल में कम था, लोग गेहूं के आटे का ही परसाद/हलवा बनाते थे। गेहूं आटे को थोड़ा मोटा पीस कर उसका हलवा बनाते थे। गढ़वाल के कुछ हिस्सों में इसे गुड़झोळी कहा जाता है। परसाद बनाने के लिए आटे के अनुपात के अनुसार उसका आधे से अधिक गुड़ अन्दाज के पानी में उबाल लें। उबला पानी गुड़वाणी अलग रख दें किंतु ठंडा न होने दें। अब कढ़ाही में शुद्ध घर का घी या मक्खन डालें और आटा भी डाल दें। ठंडी आंच में देर तक भूनें, जब भुजरांण की महक आने लगे और आटा भूरा हो जाय तो गर्म गुड़वाणी उसमें डाल दें। यदि गोला कसा हुआ या सौंफ है तो उसे भी ड़ाल दें और करछी या कौंचा फटाफट चलाते रहें। सावधानी रखें आटे की गोलियां न बने। गुड़वाणी न ज्यादा हो न इतना कम की परसाद सख्त हो जाय यदि गलती से पानी कम रह गया तो थोड़ा और गर्म पानी डालें, इसे अच्छी तरह पकायें। यदि आपने घी ठीक–ठाक डाला है तो परसाद कढ़ाही छोड़ने लगेगा, और हां 'हत्वाणी' के लिए एक दो चम्मच घर का घी भी डालें, तैयार है स्वादिष्ट परसाद या गुड़झोळी, गर्मागरम हरे मालू के पत्तों या तिमली के पत्तों पर परोसें। देखिए खाने में कितना स्वाद आता है। आप उंगली और पत्तों को भी जीभ से चाटते रह जायेंगे।

और हां प्रसव से पहले और बाद धातृ मां के लिए यह गर्मागरम परसाद अमृत समान है। लेकिन उसमें घी अधिक होना चाहिए और सामान्य परसाद से पतला पीने लायक बनाया जाता है। इसी तरह चोट–फट लगने पर भी पीड़ित को परसाद पिलाया–खिलाया जाता है। यह बहुत

गुणकारी ताकत देने वाला है। चोट–फट के अवसर पर इस परसाद में घर का हल्दी पाउडर जरूर डालते हैं। परसाद खिलाते भी हैं और लेप भी लगाते हैं। इससे दर्द में तुरंत फायदा होता है।

गेंवातू

जीभ का स्वाद एवं खानपान की विविधता बढ़ाने के लिए एक जमाने में गेहूं का गेंवातू भी खाया जाता था। लेकिन अब बहुत कम लोग गेंवातू के बारे में जानते है। नई पीढ़ी तो गेंवातू शब्द भी नहीं जानती। गेंवातू बनाने के लिए साबुत गेहूं को थोड़ी देर पानी में भिगोने के बाद ओखली में हल्के–हल्के मूसल से कूटा–छड़ा जाता था। कुछ गेहूं के टुकड़े बन जाते थे। छिलका अलग कर गेहूं को पका कर उसमें गुड़ और घी डालते थे और मीठे दलिया की तरह शौक से खाते थे। गेंवातू जब नमकीन बनाना हो तो मीठे की जगह नमक–मिर्च डालते थे। पकने पर दही–छांछ के साथ खाते थे, गेहूं का स्वाद नये अन्दाज में चखने को मिलता था। आप भी बनाइए और खाइए गेंवातू।

जवातू

जौ गेंहू से ज्यादा पौष्टिक अनाज है। जौ का खाद्य जवातू भी एक जमाने में खाया जाता था किंतु अब जवातू खाने का रिवाज लगभग समाप्त हो गया है। जौ को कढ़ाही में भून कर ओखली में कूटा जाता था। ताकि जौ के नुकीले कीस (बाल) भूनने और कूटने से निकल जायें। अच्छी तरह साफ कर उसे पकाया जाता था। इच्छनुसार नमक–मिर्च डाल कर दलिया की तरह खाया जाता था। **आज डॉक्टर एवं स्वास्थ्य व पोषण के विशेषज्ञ मधुमेह के रोगियों को जौ खाने की सलाह देते है। पोषण की कमी दूर करने के लिए भी जौ और जई से बनी चीजें दलिया आदि खिलायी जाती हैं।**

घोल्या

घोल्या बनाने की परंपरा बहुत पुरानी है। सर्वप्रथम गेहूं भूनते हैं। भुने गेहूं को सिल–बट्टे या घराट में दरदरा पीस देते हैं। पतीले या कढ़ाही में अन्दाज का पानी गर्म कर उसमें थोड़ा–थोड़ा करके तैयार आटा डालते जाते हैं और कौंचा करछी से मिलाते जाते हैं। फिर पकाते हैं यदि

नमकीन बनाना है तो हल्का नमक–मिर्च डालते हैं। यदि मीठा बनाना हो तो दूध और गुड़ डाल कर पकाते हैं और करछी घूमाते या घोलते रहते हैं। इसीलिए तो इसका नाम घोल्या पड़ा। घोल्या खूब स्वादिष्ट होता है, और इसकी तासीर गर्म होती है। गढ़वाल के दूरस्थ क्षेत्रों में आज भी घोल्या खाया जाता है।

ग्वेरच्छ्या

ग्वेर (ग्वाल–बाल) के खानपान के उत्सव को ग्वेरच्छ्या कहते हैं। एक जमाने में ग्वेर बेसब्री से इस उत्सव की प्रतीक्षा में रहते थे। जिन दिनों मौठी सार यानी बारहनाजा के खेत खाली रहते थे, गांव की गाय, भैसें व बैल आदि इन खेतों में चुगते रहते थे। ग्वेर भी खेतों में कब्बडी व गुल्लीडंडा खेलते रहते थे। 25 दिसम्बर बड़े दिन या 13 गते पूष सभी ग्वेर मिल कर ग्वेरच्छ्या उत्सव मनाते थे। ग्वेरच्छ्या में मुख्यतः खिचड़ी या मीठा भात पकाया जाता था। लेकिन यह खिचड़ी या मीठा भात बहुत असामान्य होता था। इसमें एक तरफ ग्वेरों के आपसी प्यार, प्रेम व हंसी खुशी का पुट होता था तो दूसरी तरफ माल–मसाला तीन तोल का होता था। सभी ग्वेर अपने–अपने घरों से चावल, दाल, घी, तेल, गुड़, नमक, मिर्च मसाला दिल खोलकर लाते थे। भांडे–बर्तन भी घर से लाते थे। खेतों में ही चौका–चूल्हा बन जाता था। अलग–अलग समूहों में खिचड़ी, "मुसैलू" या मीठा भात पकाते थे। घर्‌या घी व मक्खन की जोरदार महक मनमोह लेती थी। तिमली या मालू पत्तों में तैयार खिचड़ी या मीठा भात समूह में परोसा जाता था। सब ग्वेर मिल–बांट कर मजे–मजे में हंसी, खुशी मनोविनोद के साथ खाने का आनंद लेते थे। कई स्थानों पर यह त्योहर चैत के महीने में मानाया जाता है।

लेकिन विगत कुछ सालों से ग्वेरच्छ्या उत्सव लुप्त होने के कगार पर है। एक तरफ पशुपालन कम हो रहा है तो दूसरी तरफ स्कूल जाने वाले बच्चे यदि कभी पशु चुंगाने जाते भी हैं तो ग्वेरच्छ्या मनाना पसंद नहीं करते। न गोरु (गायें) रहीं, न ग्वेर, न ग्वेरच्छ्या।

घुघत/घुघति का पकवान

घुघति (फाख्ता) पहाड़ की संस्कृति से जुड़ा प्रिय पंछी है। इसे मारना या खाना तो हिंसा है, किंतु कुमांऊ में मकर संक्रान्ति के दिन बिना मारे

घुघति खाने का त्योहार जोरदार ढंग से मनाया जाता है। इस दिन आटे को गुड़ के साथ गूंथ कर गोलाकर छल्ले के रूप में ढालकर गर्म तेल के साथ तला जाता है। इस पकवान को ही घुघत/घुघति कहते हैं। अगले दिन बच्चे घुघत की माला पहन कर आंगन में आकर कौवे को घुघत खाने के लिए आमंत्रित कर पुकारते हैं– काले कौवा का... का... ये घुघति खा जा, काले कौवा का... का..., पूस की रोटी माघे खा। तैयार घुघत पकवान को बड़े उत्साह से कौवे, पितरों व देवी देवताओं को चढ़ाने के बाद अन्य लोग घुघत पकवान को मजे में खाते हैं। इस त्योहार के पीछे एक राजा और उसके षडयंत्रकारी मंत्री जिसका नाम घुघतिया था, की कहानी जुड़ी है, घुघतिया राजा को मारकर राजपाट पर कब्जा करना चाहता था। घुघतिया की काली करतूत का आभास एक कौवे को हुआ, उसने राजा को सावधान कर सारी बातें बातई और राजा को बचा लिया। लेकिन मंत्री घुघतिया को राजा कैसे छोड़ सकता था, आखिर घुघतिया को अपनी जान गंवानी पड़ी, तब से कौवे के सम्मान में घुघतिया त्योहार मनाया जाता है।

गुड़लम्मा

पानी को उबाल कर उसके साथ गुड़ मिलाते हैं, और साथ में थोड़ा–थोड़ा गेहूं का आटा डाल कर करछी से घुमाते रहते हैं ताकि आटे की गुठली न बनें, खूब देर तक पकाते है यही गुड़लम्मा है। तैयार होने के बाद गर्मा–गरम परोसते हैं। प्रसूता महिलाओं के लिए यह अच्छा खाना माना जाता है, खाने में खूब स्वाद आता है। घी के साथ ज्यादा मजेदार लगता है।

ल्हांगडु

गेहूं का आटा दूध के साथ घोलकर उपरोक्त तरीके से पकाते हैं। स्वादानुसार गुड़ मिलाते हैं, इसे ही ल्हांगडु कहते हैं। ल्हांगडु खूब स्वादिष्ट व पौष्टिक होता है। प्रसूता महिलाओं के लिए अच्छा व दूध बढ़ाने वाला है।

ढुंगला

पुराने समय में जब लोग पनचक्की में आटा पिसाने जाते थे और वहां देर हो जाती थी, भूख सताने लगती थी, वहां बर्तन–तवा कुछ नहीं होता था,

लेकिन भूख निवारण के लिए नदी के चौड़े पत्थर को साफ करके उसके ऊपर आटा गूंधते थे। लकड़ियां खूब होती थीं, चूल्हा जला कर उसमें नदी के गोल पत्थरों को साफ कर खूब गर्म किया जाता था, और इन गर्म पत्थरों पर रोटी की तरह आटा लपेटा जाता था। फिर खूब पकाया जाता था, पकने पर तैयार खाद्य को ही ढुंगला कहते थे। यह एक तरह का पत्थर का तन्दूर होता था। खाने में ढुंगला बहुत स्वादिष्ट व करारा रोटी से भी और मजेदार, ढुंगा यानी पत्थर वाली तन्दूरी रोटी...।

प्राकृतिक दूध का स्वाद

दूध को सम्पूर्ण भोजन कहा जाता है। सम्पूर्ण भोजन का मतलब है इसमें खाद्य और पोषण के लिए तमाम खनिज व विटामिन प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। एक जमाने में पहाड़ के गांव, घरों, गोचर, पनघटों, गोठ, खर्क एवं डांडों में गाय, बैल, भैंस एवं भेड़–बकरियों का तांता लगा रहता था। सर्वत्र पशुओं की घंटियां गूंजती थीं। कहा जाता है कि पहाड़ों से घी–दूध की नदियां बहती थीं। खेती और पशुपालन एक दूसरे के पूरक थे। पशुओं से भारी मात्रा में गोबर प्राप्त होता था जिसे लोग खेतों में बिछा कर शुद्ध जैविक खाद के रूप में इस्तेमाल करते थे। लोग अन्न कम और दुग्ध पदार्थों का इस्तेमाल ज्यादा करते थे। घर बनाते समय दीवार पर मट्ठा बिलोने के 'ताड़' जरूर बनाये जाते थे।

गाय–भैंसें जब जंगल चरने जाती थीं तो उन्हें विविधता युक्त शुद्ध प्राकृतिक घास चारा मिलता था। एक बार कुछ शहरी मेहमान डांडा खर्क की छानि में पहुंचे। छानि स्वामी जिन्हें भैंस्या (भैंस पालक) कहा जाता है, ने खाने में एक–एक मंडुआ की गर्म–गर्म रोटी और ऊपर से चोपड़ (मक्खन) का ढिंड रखकर दिया। मेहमानों ने बड़े मजे में मंडुआ की रोटी और मक्खन खाया, खाते–खाते वे स्वाद में खो गये। वे और रोटी की चाह करने लगे। छानि में बरां (राशन) समाप्त था, आटा भी नहीं बचा था। भैंस्या ने दही की ठेकी और गिलास उनके सामने रखे और कहा दही पियो, वे दही कैसे निकालते दही तो घी की तरह सख्त लग रहा था। फिर करछी दी, **मेहमानों ने करछी से काट-काट कर दही के टुकड़े निकाले और जी भरके मजे में खाये। इतना स्वादिष्ट दही उन्होंने पहली बार खाया था। वे मंत्र मुग्ध हो कर खाते गये, और खाते-खाते उन्हें नशा होने लगा। जहां बैठे थे उसी स्थान पर नींद की खुमारी में खो गये।**

एक किस्सा यह भी एक बार एक भैंस्या 'लकड़ी से बनी ठेकी (परोठी) पर दही लेकर घर आ रहा था। रास्ते में ठोकर लगने से ठेकी गिर कर टूट गयी। ठेकी के टुकड़े–टुकड़े हो गये, लेकिन दही ठोस आकार में ठेकी के ढाल या सांचे में ढली साबुत पत्तों के ऊपर रुक गयी, भैंस्या ने उसे अपने कपड़े में बांधा और घर ले आया। उस जमाने में मक्खन घी इतना अधिक था कि रखने के लिए बर्तन कम पड़ते थे और जब घी बनाया जाता था तो पूरा गांव खुशबू से महक उठता था। वो जमाना तो बीत गया किंतु आज भी पहाड़ के दूर–दराज गांवों में जंगली घास चारा खाने वाली गाय–भैंसों का दूध पीयें, देखिए कितना आनंद आता है।

प्राकृतिक शहद

खानपान की विविधिता के साथ प्राकृतिक शहद भी जुड़ा है। पहले हर एक घर में मधुमक्खी पालन होता था। पुराने घरों में दीवार के अन्दर एक मरखादरा होता है। जिसका एक छेद बाहर की तरफ होता है, जिससे मधुमक्खियां अन्दर–बाहर आती जाती हैं। इस तरह का मधुमक्खी पालन बक्सों में पलने वाले या बनाये जाने वाले शहद से बिल्कुल अलग है। दीवार के अन्दर मरखादरा का बक्सानुमा खाली भाग होता है। कमरे के अन्दर से शटर नुमा फटे से यह बन्द किया जाता है। मधुमक्खियां यहां पर छत्ते बना कर दूर–दूर के हिमालयी जंगलों से मधु–मोम इकट्ठा कर हर मौसम में शहद का भण्डार बनाती हैं। **यह शहद विशुद्ध प्राकृतिक औषधिय गुणों से भरपूर होता है। साल में दो बार कार्तिक एवं चैत महीने में शहद जरूर निकाला जाता है। यह शहद एक तरफ लोगों को आर्थिक मजबूती देता है, तो दूसरी तरफ पोषण कर बीमारियों से बचाता है।** प्राकृतिक शहद उत्तम स्वाद एवं गुणवता वाला होता है। मधुमक्खियों से फलों और फसलों की पैदावार भी बढ़ती है किंतु सीमेंट कंकरीट के घर बनने, जंगलों की कमी, बदलती जलवायु, विदेशी मधुमक्खियों का प्रचलन, एवं मोबाइल टावरों के कारण इन विलक्षण प्रजातियों की मधुमक्खियों का जीवन खतरे में है, इन्हें बचाने के वैज्ञानिक प्रयास होने चाहिए। बक्सों से प्राप्त शहद की अपेक्षा मरखादरों में बने शहद में स्वाद और गुणवत्ता बहुत अधिक होती है।

पाथेय...

हमारा जीवन एक यात्रा है। जीवन यात्रा का पाथेय सद्विचार और ज्ञान है। लेकिन जब हम अपने भौतिक जगत की यात्रा/पदयात्रा या काम–काज पर निकलते हैं और चलते रहते हैं, खाना–पकाने या पकाये खाने को खाने में भी झंझट होती है तो ऐसे वक्त हमें हमारी दादी–नानी द्वारा विकसित पाथेय याद आता है। वे जब खेतों में काम कर रही होती थीं तो काम करते–करते कुछ चबाती रहती थीं। यह खाद्य होता था बुखणा/चबेना और जब लोग लम्बी यात्रा या पदयात्रा में निकलते थे तो अपने साथ सत्तू लेकर चलते थे। यात्रा पथ के पथिक का मिशन होता था चलना... गांव की महिलायें या घसियारियां जिन दिनों दूर के जंगल में घास लेने जाती थीं तो घर से चलते वक्त सबके सिर पर बुखणों की कुट्यारी (पोटली) होती थी। जिनके घर में बुखणें या च्यूड़े नहीं वे गेहूं और भट्ट भून कर ले जाती थीं। ससुराल गयी बेटियों को मां जब राजी–खुशी का **रैबार** किसी भी व्यक्ति के द्वारा देती थी तो "समुण" में मौसम अनुसार बुखणें भी जरूर भेजती थी। बेटी को जब बुखणा मिलते थे, तो उसे लगता था उसे मायके का सारा–संसार मिल गया। हमारे लोक गीतों में बुखणों का खूब वर्णन है।

दरअसल बुखणा, च्यूड़ा एवं सत्तू एक ऐसा झट–पट खाना था जो हमारी स्थानीय खानपान की संस्कृति एवं स्थानीय संसाधनों से जुड़ा हुआ था। यह खाना भूख शांत करने के लिए चलते–चलते काम करते हुए या क्षणिक विश्राम के दौरान बड़े आनन्द और शान्ति से खाया जाता था। यह खानपान पौष्टिकता व गुणवता में बहुत श्रेष्ठ होता था। आज भी अनेक हिस्सों में यह परंपरा बची हुई है। मजेदार बात यह है कि इससे और अन्य पहाड़ी खानपान से दांत मजबूत होते थे। 90 साल की उम्र तक मैंने अपने पिता जी को बुखणा/चबेना बुकाते (खाते) देखा था। जीवन के अखिरी क्षणों तक न उनके दांत खराब हुए न कोई बीमारी उन्हें घेर पायी।

बुखणा/खाजा

बुखणा यानी बुकाना/चबाना पहाड़ का चलता फिरता फास्ट फूड है। यह रेडी टू ईट है। किंतु फास्ट फूड की तरह कैमिकल वाला नहीं बल्कि धीरे–धीरे चबा–चबा कर, चूस–चूस कर, बहुत आराम से खाया जाने वाला खाद्य है। यह गुणों और पोषण की खान है। दांतों को भी मजबूत बनाता है। बुखणे को शरीर और दिमाग की खुराक के लिए उपयोगी बनाने के लिए उसमें, अखरोट, सिरोला (चुलू की मीठी गिरी) तिल व भंगजीर आदि मिलाते हैं। ये चीजें बुखणा का स्वाद तो बढ़ाती ही हैं साथ ही उच्च पोषण भी बढ़ाती हैं। अखरोट ग्लूकोज को नियंत्रित करता है, और हृदय रोग एवं डायबिटीज़ नहीं होने देता। बुखणों को बड़े चाव से ही धीरे–धीरे चबाकर चूस–चूस कर खाना चाहिए। बुखणें चबाने के लिए होते हैं, निगलने के लिए नहीं।

चावल के बुखणा

धान की फसल काटते वक्त अधपका धान घर लाकर उसे कढ़ाही या किसी बर्तन में हल्की आंच में भूंजा जाता है। यदि धान पूरा सूखा है तो उसे नर्म करने के लिए पानी में भिगो कर, पानी अलग कर भूंजते हैं। भूंजने के बाद ठंडा होने पर ओखली में कूटते हैं। कूटते समय उसके साथ भंगजीर के पत्ते भी डालते हैं, अच्छी तरह फटक कर भूसा अलग कर लेते हैं। तैयार हैं– चावल के बुखणें। इनके साथ अखरोट, भंगजीर, सिरोला व तिल आदि जो भी मिले जरूर मिलाइए और चबा–चबा कर खाकर देखें कितना मजा आता है। बुखणों की शौकीन महिलायें खास प्रजाति उखड़ी व अन्य मोटे चावल की किस्मों से बुखणा बनाती हैं। सूखेफल मिलाने से बुखणें ज्यादा पौष्टिक होते हैं।

चावल के मीठे बुखणा

एक बर्तन में चावल के वजन का आधा गुड़ कम पानी में उबाल कर रखें। चावल को कढ़ाही में भूनें और फटा–फट गुड़ के पानी में डाल

दें। अच्छी तरह मिलाइए। थोड़ा ढककर रखें और फिर हल्के सूखने दें, तैयार हैं मीठे बुखणा। मजे में खाइए और इधर–उधर भी ले जाइए। एक अच्छा पाथेय है।

च्यूड़ा

च्यूड़ा बनाने के लिए साबुत धान को कम के कम 10–12 घंटे से अधिक पानी में अच्छी तरह भिगोयें और पानी अलग निथार दें। लोहे की मोटी कढ़ाही चूल्हे में गर्म करें और भीगे धान को भूनें। तब तक दो महिलायें कूटने के लिए तैयार रहें। भुना धान गरमा–गर्म ओखली में डालें, और फटा–फट... व पट...पट कर मूसल से कूटें। धान से चावल पटक कर भूसे को अलग छोड़ देता है और चावल चौड़े आकार में बदल जाता है। बाद में सूप से फटक कर भूसा अलग कर लें। तैयार है स्वादिष्ट च्यूड़ा। कई महीनों तक सुरक्षित रख सकते हैं। अखरोट, सिरोला, तिल व भंगजीर मिलाना न भूलें, चाबिये स्वादिष्ट पौष्टिक चूड़े देखिए कितना आनन्द आता है। बाहर से नीरस है किंतु चबाते समय रस के घुटके महसूस होंगे। च्यूड़ा को शहरों में पोहा या पुहा भी कहते हैं। देश के अनेक हिस्सों में बिना भुना पोहा भी बहुत प्रचलन में है। लेकिन पहाड़ी च्यूड़े का स्वाद बहुत ही लाजबाब होता है। शहरों में पूहा को हल्का भिगोकर प्याज, लहसून का छौंक लगा कर नमक–मिर्च के साथ नाश्ते में खाया जाता है।

चीणा के बुखणे/चिन्याल

एक जमाने में चीणा के बुखणे चिन्याल मशहूर थे। उत्तरकाशी में एक स्थान का नाम चिन्याली सौड़ भी चीणा की फसल से पड़ा है। एक कहावत है *'तू राणी मैं राणी कु कुटलु, चीणा दाणी'*। कुछ लोग तो सिर्फ बुखणों के लिए चीणा की खेती करते थे। चीणा के बुखणा भी धान की तरह भून कर बनाये जाते हैं। किंतु चीणा के बुखणों की महक ज्यादा जोरदार होती है, इसमें भंगजीर के हरे पत्ते और जोरदार लगते हैं। एक घर में यदि चीणा के बुखणा बन रहे हैं तो आस–पास उसकी जोरदार खुशबू फैल जाती है। किंतु अब चीणा की फसल अधिकांश हिस्सों से लुप्त हो गयी है। बहुत कम स्थानों पर चीणा बची है। चीणा के बुखणों का स्वाद सबसे मजेदार होता है।

इसी तरह बनाइए–

- **झंगोरा के बुखणा**
- **कौणी के बुखणा-कौन्याल**

सभी बुखणों के साथ अखरोट, सिरोला, तिल व भंगजीर स्वाद मजेदार लगता है।

भूंजे भट्ट का खाजा

सर्दियों में भुने काले भट्ट खाने का रिवाज बहुत पुराना है। जब बारिश या बर्फ पड़ रही होती है तो आज भी लोग मिल–जुल कर, हंसी–खुशी के साथ भट्ट भूंज कर खाते हैं। भट्ट भूंजने के लिए लोहे की कढ़ाही या तवा चूल्हे पर रख कर खूब गर्म करें और उस पर हल्की साफ राख बुरकें। तुरंत थोड़ा–थोड़ा भट्ट डालें और कपड़े से हिलाते–डुलाते रहें, जब भट्ट तड़... तड़... कर फूटने लगें तो तुरंत उतार दें और फिर दूसरी घान भूजें। ज्यादा गर्म नहीं... हल्का गर्म–गर्म चाबिये, मजा आयेगा, सर्दी दूर भागेगी, खांसी जुकाम है तो वह भी भाग जायेगा। **भूंजे भट्टों के साथ नमक-मिर्च व नींबू डाल कर चटकारे के साथ खा सकते हैं।** भूने भट्टों के साथ नमक–मिर्च मिला कर छौंक कर हल्का पानी–भाप देकर स्नैक्स की तरह भी खा सकते हैं।

भूंजे गेहूं

भट्ट की तरह गेहूं भी भूनते हैं। भुने गेहूं भी स्वादिष्ट होते हैं। **गेहूं और भट्ट मिश्रित कर सकते हैं और उसके साथ, अखरोट, भंगजीर व सिरोला आदि मिला कर स्नैक्स की तरह इस्तेमाल कर सकते हैं।** पाथेय में इस्तेमाल कर सकते हैं। कई माह तक खराब भी नहीं होंगे। पहले कामकाजी एवं घसियारी महिलाओं के लिए गेहूं–भट्ट का खाजा बहुत उपयोगी था किंतु आज शहरों में भी लोग शौक से इन्हें खाते हैं।

सत्तू– झट-पट खाना

आज भले ही फास्ट फूड को महत्व दिया जाता है, लेकिन सत्तू फास्ट फूड की दुनिया में सदियों से एक जोरदार तैयार पौष्टिक खाना रहा है। उत्तराखण्ड ही नहीं अपितु भारत के अधिकांश हिस्सों के खानपान के

संस्कारों से सत्तू जुड़ा हुआ है। सत्तू संबंधी जानकारी से पहले सत्तू से जुड़ी एक कहानी सुनिए–

एक बार एक व्यक्ति घर से यात्रा के लिए निकला। रास्ते के पाथेय के लिए उसने एक सत्तू की पोटली और गुड़ रख लिया। काफी दूरी तय करने के पश्चात उसे एक अनजान राहगीर मिल गया। उसने सोचा एक से भले दो। यह राहगीर खूब गप्पी निकला, रास्ता आसानी से कटने लगा। गर्मी के दिन थे, चलते–चलते उसे भूख और प्यास लगी, रास्ते के समीप एक जलस्रोत मिला। स्रोत के पास वह बैठ गया तो सहयात्री भी दूर बैठ गया। सत्तू वाले को भूख लगी थी, उसने झट–पट अपना खाली कटोरा निकाला, उसमें सत्तू और गुड़ डाल कर पानी के साथ घोला और मजे में खा–पी गया। सहयात्री उसे टकटकी से देखता रहा। उसने सहयात्री से कहा तुम्हारे थैले में भी तो कुछ होगा खा लो, फिर चलते हैं। उसने कहा तुमने क्या खाया? सत्तू... अरे सत्तू भी कोई खाने की चीज है। तुम बेकार चीज खाते हो, मेरे पास बहुत जोरदार चीज है किंतु सत्तू तो बेकार है वह बोला, "सत्तू मन मत्तू..., कब घोलन्तु कब खादंतु"। 'छी... छी...'। लेकिन सुन, मेरे पास तो धान चावल है, और चावल सभी खानों में सर्व श्रेष्ठ है।" धान बिचारा कितना अच्छा, पट कुटि और चट खायी, धान (चावल बेचारा कितना अच्छा कूटा और मजे से भात खाया), चावल तो इज्जतदारों का मजेदार खाना है, 'बोलो, अदला–बदली करोगे', इज्जत भी मिलेगी और स्वादिष्ट सफेद चावल का खाना भी खाओगे।' सत्तू वाले ने कभी धान/चावल नहीं खाया था। वह धान वाले गप्पी की चिकनी चुपड़ी बातों में फंस गया और उसने सत्तू देकर धान ले लिया।

दोनों फिर साथ–साथ चलने लगे। लघुशंका के बहाने सत्तू लेकर सहयात्री पीछे रह गया। धान लेकर अगला चलता रहा, लम्बी इंतजारी भी की मगर वह नहीं आया। सांझ होने लगी, वह अकेला चलता रहा, लम्बा रास्ता चलने के बाद थक कर उसने विश्राम करने की सोची, एक पेड़ के पास मन्दिर और सामने पानी का धारा तुर–तुर गिर रहा था, वहां पर उसने धान की पोटली खोली, उसे भूख सता रही थी। उसने धान खाने की सोची। अल्टा–पल्टी कर धान को खूब देखा पर खाये कैसे? वह चकरा गया। संयोग से एक भैस्या (चरवाहा) आ गया, उसने उसकी मदद लेने की सोची, चरवाहा ने जब बताया कि इसे कूटने के लिए ओखली–मूसल चाहिए, पकाने के लिए बर्तन, साग–सब्जी, चौका–चूल्हा

सब कुछ। चरवाहे की बातें सुन वह हतप्रभ रह गया और पेड़ के नीचे भूखा ही सो गया।

उस चतुर व्यक्ति ने भोले–भाले सत्तू वाले को अपनी चालाकी और चापलूसी से ठग लिया था। **लेकिन आजकल बड़ी-बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियां विज्ञापन और मीडिया की चकाचौंध के मार्फत भी तो यही ठगी कर रही हैं। वे हमारे पारंपरिक खानपान को ठग रही हैं। हमारे पाथेय व भोजन की थाली से स्वादिष्ट, पौष्टिक एवं औषधियुक्त खानपान गायब होता जा रहा है। हमारे स्थानीय खानपान के स्थान पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा तैयार सात समुद्र पार का पिज्जा, बर्रगर, मैगी, चाऊमिन और पास्ता खाने की संस्कृति आ रही है। यह खानपान हमसे पारंपरिक ज्ञान के साथ-साथ हमारा पैसा और स्वास्थ्य भी छीन रहा है।** फिर भी हमारी नई पीढ़ी इसे खाने में अपना रुतबा समझती है। बाहर का जंक फूड नई पीढ़ी को कमजोर करने तथा प्राकृतिक स्वाद व स्वालम्बन समाप्त करने की सोची समझी साजिश है। इससे नई–नई बीमारियां आ रही हैं। विदेशों में नेस्ले के फास्ट फूड में स्वाद बढ़ाने के लिए घोड़े और गाय मांस के अंश भी रहते हैं। हमारे देश में क्या–क्या है, पता नहीं?

सात खाद्यान्न एवं दलहनों का सत है सत्तू

सत्तू सात पौष्टिक खाद्यान्नों व दलहनों के सत यानी खास पौष्टिकता से बनी संतुलित खुराक है, साथ ही सत्य का प्रतीक है। सात, सत, और सत्य से इसका नाम सत्तू पड़ा होगा। इसमें सभी तरह के उपयुक्त खनिज विटामिन उपलब्ध रहते हैं। खाद्यान्नों में मुख्यतः गेहूं, जौ, चीना, कंगनी, रामदाना (चौलाई), मक्की और दलहनों में चना और भट्ट (पारंपरिक सोयाबीन) का इस्तेमाल सत्तू बनाने के लिए किया जाता है। यदि पूरी सात प्रजाति की सामग्री न भी हो तो भी सत्तू बनाया जा सकता है। देश के अन्य हिस्सों में गेहूं, चना, जौ व सोयाबीन आदि का अलग–अलग सत्तू बनता है। सीधे पीसे जाने वाले खाद्यान्नों की मात्रा हमेशा अधिक होनी चाहिए जैसे गेहूं, चना एवं भट्ट आदि। सभी अनाजों एवं दलहनों को अच्छी तरह साफ कर लेना चाहिए। बाहर से भूसे युक्त अनाज चीणा कौणी का छिलका ओखली में कूट कर निकालते हैं। तत्पश्चात हर एक को लोहे की मोटी कढ़ाही में हल्की आंच में अच्छी तरह भूनना चाहिए। हर एक अनाज जब भूना जाता है तो वह फूल कर बड़ा हो जाता है।

वह फूलता है या फूटता है, भूनते हुए उसकी आवाज सुनाई देनी चाहिए। जितनी आवाज आये उतना अच्छा और सेहतमंद सत्तू बनेगा। रामदाना का तो पूरा खील बनना चाहिए। मक्की, भट्ट और चना इतनी अच्छी तरह भूनना चाहिए जैसे बहुत छोटे–छोटे पटाखों जैसी आवाज आये, तब उनका बाहरी छिलका फट जाता है। आपने सुना हो "अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता।" भूनते वक्त घर और आंगन विविध तरह की 'भुजराण' (भूनने की खुशबू) से लोगों का मन ललचाने लगता है। सत्तू पीसने के लिए लोग घराट यानी पनचक्की का इस्तेमाल करते हैं, हालांकि अब बिजली की चक्की भी गांव–गांव आ गयी है। भूनने में सावधानी रखनी चाहिए, कोई भी चीज जलनी नहीं चाहिए न कच्ची रहनी चाहिए। यह सत्तू की पारंपरिक प्रोसिसिंग है। पिसाई भी ज्यादा बारिक न हो।

सत्तू तैयार होने पर आप इसे अपने स्वाद अनुसार दूध के साथ खा सकते हैं, पानी और गुड़ के साथ घोल बना कर पी सकते हैं। नमक–पानी के साथ व दही–मट्ठा के साथ भी इच्छानुसार खा सकते हैं। नाश्ता और पाथेय के लिए यह जोरदार खाना है। लेकिन यह सिर्फ खाना नहीं है पोषण में भी उत्तम है। बच्चों के लिए यह बहुत उपयुक्त खाना है। अब सत्तू खाना शर्म की बात नहीं, गौरव और समझदारी की बात है। बिहार, पश्चिमी बंगाल व उड़ीसा में सत्तू का लिट्टी–चोखा मशहूर है।

गेहूं की उम्मी

पहले चैत–बैशाख के महीने गेहूं की फसल कटाई के वक्त खेतों और घरों के आस–पास उम्मी भड्याने (भूनने) की भीनी–भीनी खुशबू फैलती थी, किंतु अब यह परंपरा कम होने लगी है। महिलायें और बच्चे त्यौहार की तरह मिल–जुल कर उम्मी का भाड़ लगाते हैं। उम्मी के लिए गेहूं के हरे/अधपके पौधों को काट कर लाया जाता है। एक जगह पर सूखी घास–फूस या बांज की पत्तियों वाली बारीक टहनियों को जलाया जाता हैं। गेहूं के पौधों को पीछे से पकड़ कर बालियों को जलते भाड़ में भूना जाता है। ये बालियां कुछ तो आग की लपटों में भुन जाती हैं शेष, आग की हल्की आग व राख में भुन जाती हैं, इसे ही उम्मी कहते हैं। भूनी बालियों को सब लोग हाथ से मांड कर फूंक से भूसा उड़ाकर गर्मागर्म खाते हैं। हरी बालियों का हरा दाना भूनने से बहुत स्वादिष्ट लगता है। लेकिन उम्मी खाने से पहले ग्राम देवता व पितर देवतों को चढ़ाना कोई

नहीं भूलता और हां जब उम्मी ज्यादा भड़यायी जाती है तो उसे ओखली में कूटकर डिब्बे में बंदकर लम्बे दिनों तक रखा जा सकता है। लेकिन तब यह ज्यादा कड़क हो जाती है, खाई नहीं जाती। पुनः इसे तवे या कढ़ाही में भूनने से बहुत नरम व कुर्रकुरी और स्वादिष्ट हो जाती है। इसे और अधिक स्वादिष्ट बनाने के लिए साथ में भंगजीर अखरोट या तिल भी मिलाते हैं। ससुराल गयी बेटियों या नौकरी पेशे में प्रवास पर गये बेटों को मां उम्मी भेजना नहीं भूलती।

चने का होला

गांव की महिलायें और बच्चे चने की फसल पकते समय पौधों को फलियों सहित उम्मी की तरह खेत–खलिहान के किनारे भाड़ लगा कर, भून कर खाते हैं। भूनी हुई चने की फलियों के अन्दर के दाने बहुत ही स्वादिष्ट लगते हैं। चने की हरी फलियां होली के त्यौहार तक तैयार हो जाती हैं। होली के दिन इन्हें भूनने की परंपरा रही है, इसीलिए इसे होला कहते हैं। यह परंपरा आज भी उत्तराखण्ड के मैदानी गांवों या उससे जुड़े पहाड़ी गांवों में चल रही है। लेकिन देश के कई ग्रामीण इलाकों में भी इस तरह चना भूनने की परम्परा है।

पहाड़ी फल

उच्च एवं मध्य हिमालयी जलवायु में कुछ खास फल सदियों से यहां के किसान अपने खेतों व घरों के आस–पास उगाते आये हैं, जो कि लोगों की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। घाटियों में भी तरह–तरह के फल उगाने की परंपरा रही है। अब दुःखद पहलू यह है कि बदलती जलवायु के दौर में मध्य हिमालय के सेब, अखरोट, चुलू, खुमानी एवं पुलम जैसे फल और अधिक ऊंचाई की तरफ भाग रहे हैं। निचले मध्य इलाकों में अब इनके पौधे खराब होने लगे हैं। निचली घाटियों से आम–अमरूद एवं नींबू प्रजातियां भी प्रभावित हो रही हैं। इसका सबसे बुरा प्रभाव बाग–बगीचे के व्यवसाय में लगे लोगों पर पड़ रहा है।

मध्य एवं उच्च हिमालय के फल–अखरोट, बादाम, सेब, पुलम, नींबू आलू बुखारा, नाशपाती, नाक, बबुगोशा, आड़ू, माल्टा, नारंगी, चकोतरा, अमरूद, पपीता, अंगूर, मौसमी, गलगल, चेरी व पहाड़ी केला आदि हैं। चुलू और खुमानी सामान्य फलों की तरह तो उपयोगी हैं ही किंतु इनकी गुठली की गिरी और अधिक महत्वपूर्ण है। चुलू–खुमानी की गिरी का तेल दुनिया के सबसे मंहगे औषधियुक्त तेलों में प्रथम पंक्ति पर है। इसका उपयोग त्वचारोग, सरदर्द, जोड़ों का दर्द एवं पेट के कृमि को मारने में किया जाता है। सौंदर्य प्रसाधन में यह बहुत उपयोगी हैं। दुनिया में सिर्फ हिमालयी क्षेत्र में ही चुलू–खुमानी होती है।

बाल मिठाई और सिंगोड़ी

यह मिठाई खानपान का मुंह में पानी लाने वाला या खाने की संतुष्टि वाला खाद्य है। अल्मोड़ा की बाल मिठाई और टिहरी की सिंगोड़ी को भला कौन नहीं जानता। **अल्मोड़ा** की बाल मिठाई तो उसी गुणवत्ता के साथ आज भी मिलती है किंतु **टिहरी** डूबने से हलवाईयों की दुकानों के साथ–साथ सिंगोड़ी बनाने की तकनीक भी डूब गई लगती है। मालू पत्तों के अन्दर 'पतबीड़ा' के ढाल में ढ़ली सिंगोड़ी का स्वाद... आह जिन्होंने चखा वही जान सकते हैं। सिंगोड़ी की मिठास में पहाड़ के शुद्ध दूध व मालू पत्ते का स्वाद छलकता था। नई टिहरी में भी सिंगोड़ी बनती है पर वह स्वाद कोई हलवाई नहीं ला पाया। बाल मिठाई की जो रस्याण अल्मोड़ा में खेम सिंह की दुकान में है, वह अन्यत्र नहीं। उनसे यह ज्ञान सीखना चाहिए। उत्तराखण्ड के अनेक हिस्सों में शुद्ध मावा से बनने वाले पेड़े आज भी मिल जायेंगे। जलेबी की शौकीन पहाड़ी महिलायें बैशाख में लगने वाले थौल–कौथिग की प्रतीक्षा में रहती हैं।

बीज बचाओ आंदोलन

विविधता युक्त खानपन की जड़ धरती मां की उपजाऊ परत हमारे खेत एवं जंगल हैं। किंतु आधुनिक रासायनिक खेती के आने से, रासायनिक खाद एवं कीटनाशक जहरों के बढ़ते प्रचलन से हमारा खानपान जहरीला होता जा रहा है। फलस्वरूप कुदरती स्वाद तो गायब है ही, साथ ही खतरनाक बीमारियां भी बढ़ती जा रही हैं। जंगली खानपान की विविधिता भी कम हुई है। जब कुदरती खेती बचेगी तभी हमारा शुद्ध खानपान भी बचेगा और यही खानपान हमारी सेहत भी बचायेगा। खेती को संकट से बचाने के लिए उत्तराखण्ड में 'बीज बचाओ आंदोलन' की सोच पैदा हुई।

1980 में चिपको आन्दोलन की सफलता के साथ केन्द्र सरकार ने हिमालय क्षेत्र के हरे पेड़ों के व्यापारिक कटान पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। निःसंदेह चिपको आन्दोलन पर्यावरण चेतना का विश्व का पहला अहिंसक आन्दोलन था, आन्दोलन का एक नारा था–

क्या हैं जंगल के उपकार, मिट्टी पानी और बयार।
मिट्टी पानी और बयार, जिन्दा रहने के आधार ॥

टिहरी गढ़वाल की हेंवलघाटी के चिपको कार्यकर्ताओं ने इस नारे को पर्यावरण चेतना के व्यापक स्वरूप में आगे बढ़ाने का प्रयास किया। 1984 में हेंवलघाटी में हो रहे खनन के विरुद्ध आन्दोलन खड़ा किया। फलस्वरूप नागणी, खाड़ी एवं पटुड़ी की चूना पत्थर खानें बंद हुईं।

तब नारा गूंजा – **पहाड़ की हड्डी टूटेगी – देश की धरती डूबेगी**, उसी दौरान मसूरी व दूनघाटी में चूना पत्थर खनन के विरुद्ध एक जनहित याचिका में सर्वोच्च न्यायालय ने 105 खानें बंद करवाई थी। लेकिन दूनघाटी की नाहीं–बड़कोट खान बंद होने से बच गई। 1886–87 में नाहींकला के लोगों के साथ चिपको कार्यकर्ताओं ने खनन के विरुद्ध बिगुल बजाया, डेढ़ दो साल बाद आन्दोलन सफल हुआ, दूनघाटी को खनन से पूर्ण मुक्ति मिली। चूना पत्थर खनन के विरुद्ध आज भी कटाल्डी (टिहरी) में आन्दोलन जारी है।

1980 के उत्तरार्ध में कार्यकर्ताओं का ध्यान खेती की समस्याओं की ओर बढ़ा। उन्होंने पाया कि नये बीज, रासायनिक खादें एवं कीटनाशकों से उपज तो बढ़ी किन्तु खेत नशेबाज हो गये हैं और एकल फसलों के बढ़ते प्रचलन से विविधता पर खतरा मण्डरा रहा है। हमारी स्वाधीन खेती

गुलामी की ओर बढ़ रही है। 1986–87 में सूखा पड़ा तो धान–गेंहू की फसल सूख गयी, किंतु मडुंआ–झंगोरा व मारसा (रामदाने) की फसल बची रही। इससे पारंपरिक खेती पर मंथन शुरू हुआ। यह महसूस किया कि रासायनिक खादों के आने के बाद खाने का स्वाद भी कम हुआ, इसकी चर्चा जब बुजुर्गों से की तो उन्होंने कार्यकर्ताओं की आखें खोल दीं। उन्होंने कहा कि सिर्फ पेड़ बचाने से काम नही चलेगा, यहां सैकड़ों तरह के धान, गेहूं एवं बारहनाजा के अनेक बीज थे, जो उन्नत बीजों के आने के बाद लुप्त हो गए हैं। उन दिनों मंडुआ–झंगोरा एवं बारहनाजा के स्थान पर सोयाबीन की खेती कराने के कृषि विश्वविद्यालय एवं कृषि विभाग के कार्यक्रम उन्नत खेती के नाम पर जोर–शोर से चल रहे थे। लोगों को मालदार बनाने के सपने दिखाये जा रहे थे। महिलाओं ने कहा सोयाबीन से पैसा तो आ जायेगा किन्तु अपनी भूख मिटाने एवं पशुओं के चारे का क्या होगा? पहाड़ की एक पुरानी कहवात "अपणा आलू बजार बेचा विराणा आलू न थोपड़ा थेचा" (अपने आलू बाजार बेचो और खाने के लिए बाजार से खरीदो) है न उल्टी बात, इसी चिंता ने चिपको कार्यकर्ताओं का ध्यान पारंपरिक बीज एवं पारंपरिक खेती की ओर वापस मोड़ दिया। यहीं से बीज बचाओ आन्दोलन का जन्म हुआ। कार्यकर्ताओं ने रासायनिक खेती के कार्यक्रमों का तो विरोध किया ही किंतु व्यावहारिक कार्य अपने खेतों में खेती किसानी के मार्फत हासिल किया। कार्यकर्ता उन दूरस्थ क्षेत्रों में गये जहां आज का विकास नहीं पहुंचा था। वहां विविधता बची थी, वहां से एक–एक मुटठी बीज इकट्ठा कर लाये और अपने खेतों में उगाकर अन्य किसानों में बीज वितरित किए। किसानों को सावधान किया, कि हमारी अनमोल धरोहर पारंपरिक बीज एवं बारहनाजा की मिश्रित खेती है। आधुनिक खेती विकास नहीं अपितु गुलामी के रास्ते ले जा रही है। रासायनिक खानपान एवं धरती की विविधता के कम होने के कारण कुपोषण और तरह–तरह की खतरनाक बीमारियां बढ़ जायेंगी। इन्हें रोकने के लिए जैविक, प्राकृतिक एवं विविधता युक्त चीजें उपभोक्ताओं की थाली में आनी चाहिए, बीमारी एवं अस्पतालों का व्यवसाय नहीं। किसान की आजादी उसके पारंपरिक बीज एवं पारंपरिक जानकारी के बिना खतरे में पड़ जायेगी।

बीज बचाओ आन्दोलन मंडुआ–झंगोरा को मोटे अनाज नहीं अपितु पौष्टिक और गौरव का अनाज कहता है। मिश्रित खेती जलवायु परिवर्तन

के दौर में भविष्य की आशा है। आंदोलन के पास जैव विविधता का एक बड़ा जिन्दा संकलन हैं। जिसमें कुछ किस्मों के बीज एवं उनके दस्तावेज भी उपलब्ध हैं। धान 350 प्रजातियां, गेंहू 30, राजमा 220, मंडुवा 12, ज्वार 3, कौंणी 3, चीणा 1, गहथ 3, भट्ट 4, लोबिया 7, नौरंगी 12, रगड़वांस, गुरूश, मूंग एवं साग सब्जी की दर्जनों प्रजातियों के बीज एवं जानकारी उपलब्ध है। 'बीज बचाओ आन्दोलन' पिछले 25–30 सालों से किसानों की आजादी, प्राकृतिक/जैविक खेती के सिद्धान्त जंगली जानवरों से खेती सुरक्षा और पारंपरिक बीजों को बचाने एवं उनको फैलाने के लिए निरंतर प्रयत्नशील है। इसके लिए स्थानीय, राज्य, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय मंचों तक यात्रा, पदयात्रा, सभा–सम्मेलन में कि मेलों एवं कार्यशालाओं के माध्यम से आन्दोलन का विचार पहुंचाया जा रहा है।

बीज बचाओ आंदोलन कहता है– "खेती पर किसी मार–जंगली जानवर मौसम और सरकार"। निश्चित तौर पर खेती पर तीन चार बड़ी मार हैं। पहली मार सरकार की गलत राष्ट्रीय व राज्य कृषि नीतियां हैं, दूसरी मार जलवायु और मौसम परिवर्तन का दुष्प्रभाव है, तीसरी मार जंगली जानवरों द्वारा फसलों की क्षति और चौथी मार खेती की जमीन पर विकास के नाम पर पूंजीपतियों का हमला है। अगर इन चार मांगों का समाधान हो जाये तो किसान की खुशी के दिन और उपभोक्ताओं के अच्छे स्वास्थ्य के दिन आज भी वापिस लौट सकते हैं। बीज बचाओ आंदोलन इस दिशा में छोटा सा प्रयास करता रहा है। बीज बचाओ आंदोलन ने राष्ट्रीय कृषि नीति, किसान नीति व राज्य कृषिनीति के संदर्भ में किसानों के साथ मिलकर अनेक सुझाव भी नीति निर्माताओं को दिये थे। जलवायु और मौसम परिवर्तन के लिए आज का विनाशकारी विकास ज्यादा दोषी है। इस दिशा में जूझने एवं समाधान की दिशा में भी आंदोलन निरंतर प्रयत्नशील है।

बीज बचाओ आंदोलन के लिए प्रसन्नता और सफलता की बात है कि उत्तराखण्ड देश का पहला राज्य है जिसने 2003 में जैविक खेती को महत्व देते हुए उत्तराखण्ड जैविक उत्पाद परिषद का गठन किया। भले ही सिक्किम की तरह पूर्ण जैविक राज्य की मान्यता में उत्तराखण्ड सफल नहीं हो पाया, फिर भी सैकड़ों गांवों और कुछ विकास खण्डों को सरकार ने जैविक की घोषणा की है। भारत सरकार को गंगा और हिमालय के

मध्यनजर उत्तराखण्ड एवं अन्य हिमालयी राज्यों को पूर्ण जैविक बनाने के लिए आर्थिक संसाधन उपलब्ध कराने चाहिए, और यहां की नदियों व हिमालय पर्वतमाला को विनाशकारी विकास से बचाना चाहिए। जलविद्युत योजना के लिए सुरंग आधारित योजनाओं पर तुरंत रोक लगनी चाहिए। गंगा या अन्य नदियां सिर्फ मल-मूत्र या अन्य कचरे से दूषित नहीं होती खेतों में छिड़के जाने वाले रासायनिक जहरों के अवशेष भी बहकर नदियों में चुपचाप पहुंच जाते है। यदि यहां रासायनिक खादों और कीटनाशक जहरों का छिड़काव होता रहा तो 'नाममि गंगे परियोजना पर अरबों रुपये खर्च करने के बावजूद भी गंगा को शुद्ध नहीं कर पायेंगे। न गंगा बचेगी न हिमालय और गंगा–हिमालय नहीं बचेगा तो फिर देश कैसे बचेगा।

एक जमाने में वैज्ञानिकों, कृषि लेखन व सरकारी स्तर पर मंडुआ (रागी), झंगोरा (सांवा), कंगनी, चीना, ज्वार, बाजरा, कोदो व कुटकी आदि पौष्टिक अनाजों को मोटा अनाज कहकर उपेक्षित किया गया जबकि ये अनाज गेहूं चावल की अपेक्षा ज्यादा बारिक है, किंतु इन्हें गांव के लोग खाते हैं इसलिए शहरी मानस गांव के लोगों को गंवार और उनके प्रिय अनाजों को मोटा अनाज कहता रहा है परन्तु वास्तविकता देखिए ये अनाज गेहूं–चावल की अपेक्षा ज्यादा बारिक और पोषण की दृष्टि से उनसे अब्बल हैं। इसलिए बीज बचाओ आंदोलन इन अनाजों को मोटे अनाज नहीं अपितु पौष्टिक अनाज कहता आया है। बीज बचाओ आंदोलन राष्ट्रीय स्तर पर मिलेट नेटवर्क आफ इण्डिया बनाने में साझीदार रहा है, जिसकी पहल पर केंद्र सरकार ने मिलेट यानी पौष्टिक अनाजों को सार्वजनिक वितरण प्रणाली में सामिल किया।

25-30 साल पूर्व जब बीज बचाओ आंदोलन ने मंडुआ-झंगोरा व बारहनाजा की मिश्रित खेती के सम्मान के कार्यक्रम शुरु किए तो राजनीतिज्ञ व कृषि विभाग तथा कृषि वैज्ञानिक एक तरफ इसका विरोध करते थे तो दूसरी तरफ मखौल भी उड़ाते थे कि हम किसानों को 18वीं सदि की तरफ ले जा रहे हैं, हम विकास विरोधी हैं, विगत वर्ष 2014 में बीज बचाओ आंदोलन विजय जड़धारी ने "उत्तराखण्ड में खानपान की संस्कृति" पुस्तक का प्रकाशन किया जिसका विमोचन उत्तराखण्ड के संस्कृति पर्यटन एवं युवा कल्याण मंत्री दिनेश धनै और सुप्रसिद्ध लोक गायक-संस्कृति कर्मी नरेंद्र सिंह नेगी ने किया। मुख्यमंत्री हरीश रावत को भी पुस्तक भेंट की गयी।

मांग की गयी कि उत्तराखण्ड के खानपान बढ़ावा दिया जाय, चारधाम व अन्य मन्दिरों में स्थानीय अनाजों का परसाद बांटा जाय।

2015 में उत्तराखण्ड के मुख्यमंत्री हरीश रावत ने मंडुआ, झंगोरा, चौलाई, गहथ व भट्ट आदि पहाड़ी अनाजों की उपयोगिता देखते हुए इनकी पारंपरिक रैस्पी को राजकीय व निजी होटल व रेस्टोरेंटों में लागू करके राजकीय समारोह में पहाड़ी व्यंजन परोसने, सरकारी स्कूलों में मध्याह्न भोजन, आंगवाड़ी केंद्रों के मार्फत बच्चों व वृद्ध–बेसहारा लोगों को पोषण सुरक्षा के अंतर्गत पहाड़ी अनाज बांटने का जोरदार निर्णय लागू किया है। चारधाम यात्रा में अब चौलाई व कुट्टु का परसाद बांटा जाने लगा है। मुख्यमंत्री ने अनेक राजकीय समारोहों व उत्सवों में पहाड़ी व्यंजनों के स्वाद एवं पौष्टिकता का जोरदार अभियान शुरु किया है। महामहिम राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी के भोज में झंगोरे की खीर परोसना पहाड़ी खानपान का बड़ा सम्मान है। बीज बचाओ आंदोलन को इस बात की खुशी है कि एक जमाने में आंदोलन के आलोचक वैज्ञानिक व राजनीतिज्ञ भी अब इस दिशा में कुछ सार्थक पहल करने लगे हैं।

जंगली जानवरों से फसलों की क्षति का मुद्दा भी बहुत महत्वपूर्ण है जंगली जानवरों की बढ़ी संख्या फसलों को भारी क्षति पहुंचा रही है। फलस्वरूप अनेक क्षेत्रों में किसान खेती छोड़ रहे हैं। बीज बचाओ आंदोलन इस मुद्दे को पिछले 8-10 सालों से उठाता आया है। यह मुद्दा वन्य जन्तु सरक्षण कानून से भी जुड़ा है। इसके बावजूद भी राज्य सरकार ने इसे गम्भीरता से लेते खेतों को क्षति पहुंचा रहे सुअरों को सरकारी खर्च पर मारने और बन्दरों को पकड़ कर नशवन्दी करने का कार्यक्रम चलाने की घोषणा कर दी है। किंतु व्यवहारिक कार्य में जब वन विभाग सार्थक पहल करेगा तभी यह संभव हो पायेगा।

धरती मां की सबसे अनमोल विरासत मिट्टी है, इसलिए मिट्टी किसान का सबसे अनमोल धन है। पहले खतरनाक जहरों से मिट्टी को बरबाद किया गया किंतु अंग्रेजों के जमाने से चले आ रहे भूमि अधिग्रहण बिल ने पहले से किसानों से करोड़ों एकड़ जमीन विकास के नाम पर छीनी। लेकिन कई स्थानों पर किसान आंदोलन कर जमीन बचाते भी रहे, परन्तु अब भारत सरकार ऐसा भूमि अधिग्रहण बिल लाने जा रही है जिसमें किसान को भूमि का मुआवजा तो ज्यादा मिलेगा किंतु वह जमीन अधिग्रहण का विरोध नहीं कर सकता, किसान का लोकतांत्रिक अधिकार

इससे छिन जायेगा। इसलिए इस खतरनाक अधिनियम को रोका जाना जरूरी है। किसान की अनमोल जमीन कीमत पर नाक बेच कर नथ पहनाना बुद्धिमता का बात नहीं है।

वर्तमान में सरकार एवं कृषि वैज्ञानिकों के समाने बड़ी चुनौती है कि अबतक तीन लाख से अधिक किसान आत्महत्या कर चुके हैं और करोड़ों किसान खेती छोड़कर पलायन कर रहे हैं प्रतिदिन 2,358 किसान खेती छोड़ रहे हैं। इसका समाधान ढूंढने में खूब धन बहाया जा रहा है किंतु इस धन से खेती के व्यवसाय में लगी कंपनियां और मालामाल बन रही और किसान कंगाल हो रहे है। इस संकट से बचने का एक ही मूलमंत्र है किसानों की खेती व पशुपालन की जीवन पद्धति व संस्कृति वापिस लौटायी जाय। उन्हें एकल कर्ज की खेती से मुक्ति देकर विविधायुक्त मिश्रित व स्वावलम्बी खेती की तरफ वापिस लाया जाय।

पारंपरिक खानपान खेती को बचाने की महत्वपूर्ण कड़ी है, खेतों से लेकर रसोई और हमारे भोजन की थाली तक इस कड़ी को जोड़ना जरूरी है। खानपान का स्वाद, पौष्टिकता व गुणवत्ता की दृष्टि से जब उपभोक्ता भी प्राकृतिक/जैविक खेती से उत्पन खाद्यान्न, दलहन, तिलहन व साग–भाजी की मांग करेंगे, तो इससे यह समृद्ध खेती और पशुपालन आगे बढ़ेगा। इससे किसानों की जीवन पद्धति व संस्कृति वापस लौटेगी। किसानों की स्वाधीनता व संप्रभुता जो बहुराष्ट्रीय उपनिवेशवाद के कब्जे में जा रही है, उससे मुक्ति मिलेगी। बीज बचाओ आंदोलन में खेती किसानी की नई आजादी के बीज छिपे हैं, जो एक दिन जरूर अंकुरित हो कर फलेंगे फूलेंगे।

आंदोलन के नारे

- मिट्टी, पानी, बीज और पेड़– बंद करो तुम इनसे छेड़।
- खेती पर किसकी मार– जंगली जानवर, मौसम और सरकार।
- बीज हमारे जिन्दाबाद– देसी किस्में, देसी स्वाद।
- अपनी मिट्टी अपनी खाद– अपने बीज अपना स्वाद।
- हाट हमारी माल तुम्हारा– नहीं बिकेगा, नहीं बिकेगा।
- अदरख है या हल्दी है– उन्हें पेटेंट की जल्दी है।
- आज समय की यही पुकार– बीज पर कृषक का अधिकार।
- नकली बीज विषैली खाद– इनसे सेहत है बरबाद।
- जोते बोये जो जमीन– खेत रहे उसी के अधीन।